अन्नपूर्णा भूमि

लेखक

आचार्य जी० एस० पथिक

आमुख-लेखक

डा० पंजाबराव देशमुख

भारत सरकार के कृषि मंत्री

१९६६

प्रकाशक

राजस्थानी साहित्य परिषद्

४, जगमोहन मल्लिक लेन,

कलकत्ता

मूल्य ३)

प्रकाशक :....
राजस्थानी साहित्य परिषद
४, जगमोहन मल्लिक लेन,
कलकत्ता

लेखक की अन्य रचनायें :—

१. अंग्रेज जब आए
२. भारत में राष्ट्रीय शिक्षा
३. स्वराज्य की मांग
४. हमारी स्वतंत्रता और समाजसुधार
५. बारदोली का सत्याग्रह
६. सुभाषचन्द्र बोस का नेतृत्व
७. सुलगता काश्मीर
८. अंग्रेज जादूगर
९. लोकतंत्र शासन-व्यवस्था
१०. कांग्रेस के पचास वर्ष
११. आज का भारत
१२. अगले पाँच साल

मुद्रक :—
सुराना प्रिण्टिङ्ग वर्क्स,
४०२, अपर चितपुर रोड,
कलकत्ता

हे धरती, तू बड़ी कृपण है, कठिन श्रम और एड़ी-चोटीका पसीना एक कर देनेके बाद तू हमें अन्न प्रदान करती है। बिना श्रमके तू हमें अन्न दे दिया करे, तो तेरा क्या घट जाएगा ?

धरती मुसकराई—'मेरा तो इससे गौरव ही बढ़ेगा, किन्तु तेरा गौरव सर्वथा लुप्त हो जाएगा।'

'तू चल उठ, यहां क्या गोमुखीमें हाथ डाले जप रहा है, यदि भगवानके दर्शन करने हैं, तो वहां चल, जहाँ किसान जेठकी दुपहरी में हल चला रहे हैं और चोटीका पसीना एड़ी तक बहा रहे हैं।'

—महाकवि रवीन्द्रनाथ

सब भूमि भगवान की है। मनुष्यके लिए ईश्वरकी यह सब से बड़ी देन है। भगवानने कहा कि जितनी जमीन पर आदमी अपने हाथसे कठोर परिश्रम कर जोते और बोए, उतनी जमीन उसकी है। पर उससे अधिक जमीन पर किसीका कोई अधिकार नहीं है। जो लोग अधिक जमीन रखते हैं, वे अमीरी और गरीबी दोनों पैदा करते हैं, ये दोनों ही पाप हैं। हमें इस पापको मिटा देना है। जिनके पास अधिक सम्पति है, उन लोगोंकी परीक्षा है। ईश्वर उन्हें क्षमा नहीं करेगा, जो अधिक सम्पति रखते हैं।

—संत विनोबा

हम ग्रामोंमें क्रान्ति ला रहे हैं। बड़ी-बड़ी बांध-योजनाएं, सिंचाई, विद्युत प्रसार और सामूहिक योजनाएँ ग्रामोंमें नए भारतका निर्माण कर रही हैं, विज्ञान और टेक्नालॉजीका संदेश ग्रामोंमें दूर-दूर तक फैल रहा है। हम ग्रामोंमें न केवल नई अर्थ-व्यवस्थाका निर्माण कर रहे हैं, बल्कि उनके सामाजिक जीवनमें नई भावनाएं और नए विचार ला रहे हैं।

—सरदार के० एम० पानीकर

आमुख

स्वतन्त्रता प्राप्तिके पश्चात् हमारा ध्यान ग्रामोंके पुनरुत्थान की ओर जाना स्वाभाविक था। वास्तवमें हमारा भारत ग्रामों में ही बसता है। जब तक ग्रामोंकी सर्वतोमुखी उन्नति नहीं होगी, तब तक देशकी राजनीतिक स्वतन्त्रताके फलोंका आस्वादन प्राप्त नहीं हो सकता। पर यह तभी हो सकता है जब कि हम ग्रामोंकी जनताको उसके अभ्युदयके लिए समुचित जागरूक बनाएँ, कृषि एवं उद्योगमें समान स्थिति लानेके लिए सक्रिय कदम उठाएँ, किसानोंके जीवन स्तरको उच्च बनानेका कार्य करें और ग्रामोंमें पंचायतें आदि स्थापित करके उनके माध्यमसे क्षेत्रोंकी सर्वाङ्गीण उन्नति करें।

भारत सरकार जहाँ एक ओर कृषि अनुसंधान परिषद्के शोध कार्यों तथा अन्य सामूहिक ढंगसे किए गए प्रयत्नों द्वारा भारतीय कृषि क्षेत्रमें शनैः शनैः एक युगान्तर उपस्थित कर रही है, वहाँ दूसरी ओर मेरा यह विचार है कि अन्य व्यक्ति और गैर-सरकारी संस्थाएँ भी निजी रूपसे इस कार्यको अधिक कुशलता व सुचारुतापूर्वक सम्पन्न कर सकती हैं। प्रस्तुत रचना 'अन्नपूर्णा-भूमि' श्री जी० एस० पथिक द्वारा लिखी गई है। इस दिशामें यह एक दीप-स्तम्भ है। यह खेदकी बात है कि अब तक इस प्रकारकी रचनाओं का देशमें प्रायः अभाव-सा है। मेरी अनुमतिमें ऐसी रचनाओंकी हमें अत्यधिक आवश्यकता है और हमें उन्हें भरसक प्रोत्साहन देना चाहिए।

अन्नपूर्णा भूमिमें विद्वान लेखक द्वारा कृपिके महत्व, किसानों के दायित्व, ग्रामोत्थानके साधन और पंचायतों द्वारा ग्रामोंको स्वावलम्बी बनानेके विविध उपायों पर समुचित प्रकाश डाला गया है। यह रचना इस विषयकी प्रथम पुस्तक है और ऐसी चार रचनाएँ प्रकाशित हो रही हैं। इन रचनाओं में क्रमशः भूमि, खाद, सिंचाई, पशुधन, ग्रामोत्थान और पंचायत राज्यके महत्व आदिके विषयोंका सांगोपांग वर्णन है। इन रचनाओंको विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं में अनूदित करनेका भी लेखकका बिचार है।

श्री पथिकजी देशके पुराने और तेजस्वी राजनीतिक कार्यकर्ता और अर्थशास्त्रके विद्वान हैं। ग्रामोत्थान-कार्यमें उनकी अभिरुचि आरम्भ से ही रही है। श्री पथिकजीके गम्भीर अध्यवसाय का परिचय उनकी कृति दे रही है। मैं उन्हें इस प्रथम पुस्तकके लिए हार्दिक बधाई देता हूँ, जो हमारे देशके उन किसानों के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध होगी जो ग्रामोंमें रहते हैं और जिनका मुख्य व्यवसाय कृषि-कार्य है। इसके अतिरिक्त मेरी यह भी धारणा है कि यह पुस्तक उन सामुदायिक-विकास-कार्य करने वाले असंख्य ग्राम-सेवकों के लिए भी पथ-प्रदर्शनका कार्य करेगी, जो आज भारत सरकारकी विभिन्न योजनाओं को कार्यान्वित करनेके लिए सर्वत्र ग्रामोंमें कार्य कर रहे हैं। ऐसी पुस्तकोंका जो अभाव हमारे साहित्यमें खटकता है, वह इस रचनासे दूर हो सकेगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

मैं आशा करता हूँ कि 'अन्नपूर्णा भूमि' को उचित सम्मान प्राप्त होगा।

नई दिल्ली
२२-४-१९५५

पंजाबराव देशमुख
भारत-सरकार के कृषि-मंत्री

विषय-सूची

विषय | पृष्ठ

दो शब्द

भारत के स्वतन्त्र होने पर ५ लाख ग्रामों में नव-जागरण उत्पन्न हुआ और वे एक नए मोड़ पर खड़े हुए। विगत दो सौ वर्षों में ग्रामों का जो लगातार ह्रास हुआ और उनकी जो क्षत-विक्षत अवस्था हुयी, उसने देश के नवनिर्माण में ग्राम-समस्याओं को सर्वोपरि स्थान दिया। ये ग्राम ही थे, जिन्होंने स्वतन्त्रता-युद्ध में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया था। अतएव यदि इन ग्रामों की ओर ध्यान न दिया जाए तो, देश का अभ्युदय कभी संभव नहीं है। ये ग्राम ही तो भारत की रीढ़ हैं।

इधर ग्रामों में क्रान्ति उत्पन्न हो रही है। यह क्रान्ति उनके कायापलट की है। आज से पहले कभी भी ग्रामों के उत्थान के लिए इतनी विशाल योजनाओं का निर्माण न हुआ था। भूमि-सुधार और सामुदायिक योजनाओं और सिंचाई, खाद तथा अन्य साधनों द्वारा ग्रामों की नई रचना हो रही है। ये सब आर्थिक प्रयत्न हैं, पर इनके साथ सामाजिक प्रयत्न भी जारी हैं। शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छता तथा समाजसुधार आदि पर भी जोर दिया जा रहा है। पर इन कामों में विलम्ब लगेगा। जमींदारी-उन्मूलन और भूदान आदि भूमि-व्यवस्था के पहले कदम हैं। हमें ग्रामीणों को सहकारी खेती के क्षेत्र में लाना है और यह बताना है कि, जमीन अब किसी की विरासत की चीज नहीं रह गई है। जो व्यक्ति जितने काल तक खेती करेगा,

उतने काल तक जमीन उसकी रहेगी। किसानों को इस मोड़ पर लाने के लिये यह आवश्यक है कि, स्थान-स्थान पर सहकारी आधार पर खेती की जाए और किसानों में सामूहिक जीवन के भाव भरे जाएँ। उनका जब जीवन पलटेगा, तब दूसरे किसान पीछे न रह सकेंगे। किसानों में धार्मिक तथा सामाजिक रूढ़ियाँ जड़ पकड़ गयी हैं। उनमें सहकारिता रह ही नहीं गयी है। इनसे उनके उद्धार के लिए सतत प्रयत्न की आवश्यकता है। हर एक ग्राम में नई क्रान्ति का बीजारोपण करना है। यदि उद्योग धन्धों के मजदूरों के समान किसानों में भी ऐक्य हो, उनका संगठन हो तो भारतीय-संघ-राज्य में हरएक ग्राम राजनीतिक और आर्थिक शक्तियों के इकाई होंगे।

पर ग्रामों का नव उत्थान तभी संभव है, जब ग्राम-साहित्य का प्रादेशिक भाषाओं में प्रसार हो। पढ़े लिखे किसान, ग्राम-संस्थाएँ और ग्राम कार्यकर्ता हरएक के लिए ग्राम-साहित्य आवश्यक है। सामुदायिक कार्यकर्ता ग्राम-साहित्य के द्वारा किसानों में नई प्रेरणा भर सकते हैं। उनमें नवजीवन ला सकते हैं और उनकी समस्याओं को हल कर सकते हैं। फिर गैर-सरकारी रूप में ग्राम-साहित्य का प्रकाशन होना अधिक वांछनीय है।

'अन्नपूर्णा भूमि' तथा अन्य तीन रचनाएँ इसी लक्ष्य से लिखी गयी हैं। दूसरी रचना में खाद्यान्न, व्यापारिक उपज, बागवानी, फल-सब्जी आदि की पैदावार का वर्णन है। इस

पुस्तक में पैदावार बढ़ाने के उपाय बताए गए हैं। तीसरी पुस्तक 'भारत में गौ पालन' पर है। इसमें भारत के पशु-धन का वर्णन है। चौथी पुस्तक में ग्रामीण उद्योग धन्धों का व्यापक वर्णन है।

अंग्रेजी, हिन्दी और प्रादेशिक भाषाओं में इन विषयों पर पुस्तकें नहीं सी हैं। यदि हमें प्रोत्साहन मिला तो एक एक विषय पर लिखने का प्रयत्न किया जायगा।

केन्द्रीय सरकार के कृषि-मन्त्री डा० पंजाबराव देशमुख का मैं अत्यन्त कृतज्ञ हूं जिन्होंने इस पुस्तक का 'आमुख' लिखा है। उन्होंने सामुदायिक योजना के समानान्तर एक गैरसरकारी प्रयत्न के रूप में इस रचना के प्रकाशन को महत्व दिया है और इसे सामुदायिक योजनाओं के सदस्यों एवं कार्यकर्ताओं के लिए उपयोगी प्रकट किया है।

मैं अपना परिश्रम सफल समझूंगा, यदि देश में इस पुस्तक का समुचित आदर हुआ।

—लेखक

प्रकाशक की ओर से

एक दो दशक पूर्व प्रकाशन का जो स्तर था, वह आज नहीं है। उस समय न प्रकाशकों का अभाव था और न किसी विषय के प्रकाशन में कोई संकोच था। सभी विषयों पर रचनाएँ निकलती थीं। अनेक स्थानों से ग्रन्थमालाओं के द्वारा नियमित रूप से सर्वोत्कृष्ट पुस्तकों का प्रकाशन होता था। पर उस समय स्कूली पुस्तकों का प्रकाशन अधिक नहीं था। तब यही कारण था कि, साहित्य के विविध अंगों का सृजन हो पाया था।

पर जब आज हिन्दी का व्यापक क्षेत्र हुआ, तब प्रकाशन का दायरा विशृंखलित हो गया। स्कूली प्रकाशन ने अग्र स्थान ले लिया और उसने इस क्षेत्र में अनैतिकता तथा भ्रष्टाचार पैदा किया। विश्वविद्यालय तथा कालिज व स्कूलों के प्रोफेसर व अध्यापक शिक्षासम्बन्धी पुस्तकों के एकमात्र लेखक मान लिये गये और दूसरे लेखकों का कोई स्थान ही नहीं रहा। अध्यापकों और प्रकाशकों के जोड़तोड़ ने शिक्षा व साहित्य के पवित्र क्षेत्र में अन्य व्यवसायों के समान कालाबाजार पैदा कर दिया। इस जोड़तोड़ के आगे रचना का कोई महत्व ही नहीं रहा। इस अवस्था में शिक्षासम्बन्धी साहित्य का स्तर गिर गया और अन्य उत्कृष्ट साहित्य का प्रकाशन भी शिथिल पड़ गया।

पूंजीवादियों के हाथ में पुस्तक-प्रकाशन का धंधा जाने से वह एक प्राणहीन व्यवसाय बन गया। लेखक की महत्वाकांक्षा तिरोहित हो गयी। प्रकाशन का लक्ष्य हो गया कि, ऐसा साहित्य प्रकाशित हो, जिससे विनियोग की हुई पूंजी तुरन्त निकल आए। पर आज के इस व्यावसायिक युग से अतीत का दुर्बल काल कहीं अधिक स्वर्णिम था। उस समय लेखक तथा प्रकाशक दोनों ही मिशनरी भावापन्न थे। तब यदि एक उत्कृष्ट ग्रन्थ के प्रकाशन में प्रकाशक पूंजी निकलने का भी कोई भविष्य नहीं देखता और उसके अपने पास भी पर्याप्त धन नहीं होता तो भी इधर उधर से साधन जुटाकर पुस्तक प्रकाशित करने में महान् गौरव अनुभव करता था।

उस समय लेखक को जो मिलता था, वह आज जीवन के उच्च व्यय स्तर में न्यून कहा जा सकता है, पर दोनों समय के जीवन-व्यय स्तर का मुकावला करने से यह प्रकट होगा कि, आज लेखक को जो मिलता है तो भी वह जहां का तहां खड़ा है। अनैतिकता इतनी है कि, लेखक को रायल्टी आदि ईमानदारी से मिलती ही नहीं है।

इस स्थिति में कई लेखकों को अपने साधन जुटाकर प्रकाशन क्षेत्र में आना पड़ा। कई प्रकाशन-संस्थाएँ लेखकों की अपनी हैं। फिर हिन्दी में अच्छे प्रकाशन के लिये यह आवश्यक है कि, सहकारी पद्धति के संगठन आदि द्वारा प्रकाशन हो। अन्यथा जीवित साहित्य का प्रकाशन संभव न होगा।

'नवभारत प्रकाशन' पूंजीवादी संगठन नहीं है। वह एक सहकारी संगठन है। इसका निर्माण केवल आर्थिक लाभ की दृष्टि से ही नहीं हुआ है। यह संस्था यदि किन्हीं विशिष्ट ग्रन्थों के प्रकाशन में भारी क्षति का अनुभव करेगी, तो भी उसके प्रकाशन में पीछे न रहेगी। प्रकाशन से जो भी स्वल्पतर आय होगी, वह अन्य व्यय के उपरांत पुनः प्रकाशन के विनियोजन में लगेगी। इस संस्था द्वारा साहित्य के उन अंगों का प्रकाशन होगा, जिनका हिन्दी में अभाव है। अतः संस्था के इस सत्संकल्प की दाता केवल जनता है, उसीका हमें एकमात्र सम्बल है।

'नवभारत ग्रन्थमाला' द्वारा नियमित रूपसे प्रति वर्ष अनेक रचनाओं का प्रकाशन होगा। शनैः शनैः प्रकाशन में प्रगति होगी। दो रुपए अमानती जमा कर प्रत्येक व्यक्ति, विद्यालय, पुस्तकालय, पंचायतें आदि इस ग्रन्थमाला के स्थायी सदस्य हो सकेंगे। स्थायी सदस्यों को ग्रन्थमाला की प्रत्येक पुस्तक प्रकाशित होते ही ? मूल्य में वी० पी० पी० से भेजी जाएगी। यह रियायत केवल स्थायी ग्राहकों के लिये है। जो सदस्य सूचना मिलने पर मनीआर्डर से रुपया भेज देंगे, उन्हें डाक व्यय नहीं देना पड़ेगा। पर ग्रन्थमाला के स्थायी सदस्यों की संख्या सीमित होगी। एक निश्चित संख्या के अन्दर ही स्थायी सदस्य होंगे। कारण यह है कि इस संस्था के प्रकाशन में पुस्तकों के मूल्य में कई अनेक व्यय का शुमार नहीं हो पायेगा, इसलिये यह संस्था

अधिक मूल्य रखकर अधिक कमीशन देना घातक समझती है। यह भार अन्ततः ग्राहकों पर ही पड़ता है। आज के युग में छपाई, कागज और ब्लाक आदि के भारी व्यय से पुस्तक पर वैसे ही अधिक व्यय पड़ता है।

'नवभारत ग्रन्थमाला' का प्रकाशन 'अन्नपूर्णा भूमि' से प्रारम्भ हो रहा है। ग्राम-साहित्य की अन्य तीन रचनाएँ प्रेस में हैं। अन्य एक और ग्रन्थ है भारतीय नारियों के सामाजिक संघर्ष की क्रान्तिकारी रचना 'स्त्री समाज' जिसका प्रकाशन भी यथासम्भव शीघ्र ही होगा।

विश्वास है कि, भारत के अभ्युदय और हिन्दी के उपयोगी साहित्य के सृजन में हमारी ये विनम्र सेवाएँ सभी ओर से अपनायी जाएँगी। सरकारी और अन्य प्रकाशनों के मध्य में हमारा यह प्रयत्न अपना स्थान रखता है।

हम अपने इस आयोजन में सभी के सहयोग की कामना करते हैं।

—*प्रकाशक*

अन्नपूर्णा भूमि—

न्नपूर्णा भूमि—
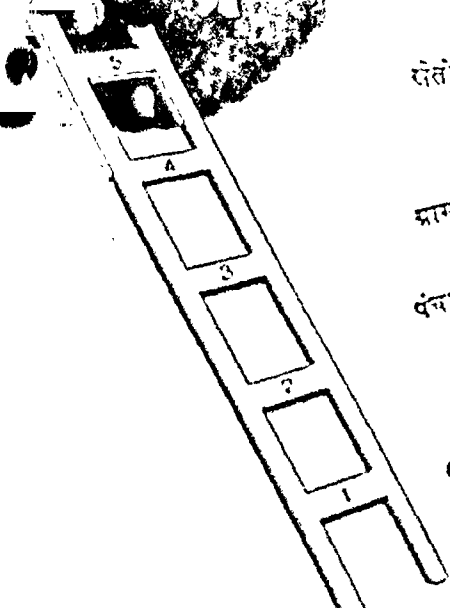
कार्यकर्त्ता गृह	सहकारी-भंडार (चीनी नमक)	बीज-घर	औजार-घर	फल और उपज आदि

अखाड़ा

विश्राम

व्यायामालय	चित्र-चार्ट-पोस्टर फसल और उद्योगधन्धों की प्रदर्शनी रेडियो सभा-भवन	पशुओं का स्थान
वाचनालय		सन्तति निग्रह और चिकित्सालय

बरण्डा

फलों के पौधों की बागायत

पशुओंके लिए स्नान घर

कुँआ

तालाब

पंचायतघर का नमूना

अन्नपूर्णा भूमि

हमारी खेती

मानव जीवनमें भूमिकी समस्या सबसे प्रमुख है। जीवन और भूमि का निकटतम सम्बन्ध है। मनुष्य, पशु-पक्षी और वृक्ष लतादि सभी भूमि के आश्रित हैं। पर हमने इस वसुन्धरा के प्रति अपने कर्तव्यकी सदा उपेक्षा की। हमारा कितना पतन हुआ, जब हमने अपने नेत्रोंके सम्मुख भूमिका विनाश होने दिया। उसकी उपज घटती चली गई और हम केवल देखते रहे।

हमारी त्रुटियां कुछ कम नहीं हैं। हमने रेगिस्तान बढ़ने दिए, वनोंको मैदान बना दिया, वर्षाके साधनोंको मिटा दिया, मानके ग्राम नष्ट कर नगरोंकी आबादी बढ़ाई, वर्षाके जलका

खेतीके लिए कभी संचय नहीं किया, ग्रामोंमें पैदा होनेवाली खादको बर्बाद हो जाने दिया और अन्य बीसों कुकृत्य हैं, जिन्हें हम करनेमें लज्जित नहीं हुए। हमने न कभी खादका उपयोग किया और न अच्छे बीजोंका। इसप्रकार हम अपने विनाशके स्वयं कारणभूत हुए। अपने हाथोंसे ही हमने खेतों की उपजका ह्रास किया। आज उसीका परिणाम है कि देशमें खाद्य-पदार्थों की पैदावार घट गई।

हमने कभी यह भी न सोचा कि कौन सी जमीन कैसी है। हमने उनके किस्मोंके जाननेका भी कभी प्रयत्न नहीं किया कि किस जमीनमें कौन-सी पैदावार सम्भव हैं। पर आज हमारा कर्तव्य है कि हम यह जानें कि कितनी भूमि कृषिमें लगी हुई है और किस जमीनमें किन पदार्थों की उपज होती है, कितनी जमीन बंजर पड़ी है तथा कितनी जमीन गोचर-भूमि और गोशालाके लिए छोड़ी गई है। फिर हम यह भी देखें कि कितनी बंजर भूमि नए साधनोंसे उर्वरा बन सकती है और कितनी ऐसी जमीन है, जिसमें बिलकुल उपज नहीं हो सकती है।

हम यह भी देखें कि खाद्य पदार्थ और व्यापारिक फसलोंके उत्पादनमें किन-किन वस्तुओंकी उपज घट बढ़ रही है। इस दृष्टिसे हम संयुक्त रूपसे ऐसा प्रयत्न करें कि हमारी पैदावार संतुलित हो। हरएक राज्य अपनी आवश्यकताओं के लिए पूर्ण आत्म-निर्भर बने।

नई परिस्थितियोंमें हमें वर्षा और मौसम पर ध्यान देनेकी

आवश्यकता है। विगत कई वर्षोंसे वर्षा अनियमित रूपमें होती है। कहीं आरम्भमें अधिक वर्षा होती है और कहीं बादमें। इससे कहीं तो फसल नष्ट हो जाती है और कहीं पैदा नहीं हो पाती है। यही कारण है कि हमारी पैदावार कम होती चली जाती है। ग्रामों और वनोंमें वृक्ष न रहनेसे बादल नहीं रुकते हैं। हमारा यह प्रयत्न होना चाहिए कि हम ग्रामोंको नगर न बनने दें। हम उन्हें हरा-भरा और घने वृक्षोंसे भरपूर रखें।

मौसम और वर्षामें परिवर्तन वैज्ञानिकोंके प्रयत्नोंसे लाना सम्भव है। आज आकाशमें साधारण बादल होनेपर वैज्ञानिक प्रयत्नसे नकली वर्षा की जाती है। योरप और अमेरिका के जिन देशोंमें खेतीके प्लाटके रूपमें मैदानके मैदान हैं, वहाँ वर्षा के अभाव की पूर्ति नकली वर्षासे होती है। हमने तो वनों और ग्रामोंको नग्न कर अपने लिए संकट खड़ा कर दिया है। भारतमें नकली वर्षाके प्रयोग किए गए हैं। पर इसके सिवा जब कभी भी वर्षा हो, उसके जलको संचय करनेसे वर्षा का अभाव दूर किया जा सकता है। कृषिके लिए सिंचाईका प्रश्न सबसे महत्वपूर्ण है।

इधर कई राज्योंमें सिंचाईकी छोटी-बड़ी योजनाएँ जारी हुई हैं। छोटी सिंचाई योजनाओंके संगठन राज्योंमें बड़ी प्रगति कर रहे हैं। अनेक विशेषज्ञ सिंचाई आदिके कार्यक्रमको सफल बनानेमें जुट पड़े हैं। वे किसानोंको हरप्रकारका सहयोग देते हैं। इन प्रयत्नोंसे अधिक से अधिक जमीनमें सिंचाई होगी और

उसके परिणाम-स्वरूप पैदावार बढ़ेगी। पर यदि युद्धस्तरपर ग्रामोंकी सारी शक्तियाँ और साधन इस ओर जुट पड़ें तो यह निश्चय है कि हम अपनी पैदावारके प्रश्नको हल करने में कामयाव हो सकते हैं।

ग्रामोंमें जहाँ एक ओर किसानोंकी भूमिसेना खड़ी हो, जो खेतोंको जोते-वोए और सिंचाई करे, वहाँ दूसरी ओर राज्यका कर्तव्य है कि वह सिंचाईके साधनोंकी व्यवस्था करे और उनके लिए खाद तथा बीज उपलब्ध करे। उनके लिए धनकी भी व्यवस्था करे। ग्रामोंके विविध कार्योंके लिए ग्रामीण बैंकोंका निर्माण होना अत्यन्त आवश्यक है। ऋण देनेके सम्बन्धमें महाजनों पर जो पाबंदियाँ लगी हैं, उनसे किसानोंको आसानीसे ऋण नहीं मिल पाता है। यही कारण है कि धनाभावके कारण किसान सिंचाई, खाद और बीज आदि की योजनाओंको अग्रसर नहीं कर पाते। पर यह भी हमें ध्यान रखना चाहिए कि किसानोंको जो ऋण मिले, उसका वे पूरा सदुपयोग करें।

अनेक प्रदेशोंमें लाखों एकड़ भूमि वंजर पड़ी हुई है जो कई तरीकों से सहजमें उपजाऊ वन सकती है। किसानोंका यह प्राथमिक कर्तव्य है कि वे बंजर जमीनको उपजाऊ वनाकर अपने राज्यकी पैदावार बढ़ाएँ। इस दिशामें राज्य अग्रसर हो रहे हैं। ऐसी भूमिको उपयोगी वनानेके लिए हरएक राज्यमें ट्रेक्टरों की भारी व्यवस्था की गई है। प्रत्येक राज्यमें करोड़—दो करोड़ रुपए इस मदमें व्यय हुए हैं। प्रायः सभी राज्योंमें सर-

कारी व्यवस्थाके अन्तर्गत ट्रेक्टर विभागकी स्थापना हुई है। ट्रेक्टरोंके अतिरिक्त कृषि सम्बन्धी अन्य मशीनें भी उपलब्ध की गई हैं। ट्रेक्टरोंके दल बंजर भूमिको उपजाऊ बनानेमें लगे हुए हैं।

जो किसान खेतिहर हैं, जिनके पास जमीन नहीं है, वे इस बंजरमें जुटकर जमीनके मालिक बन सकते हैं और स्वतन्त्र रूपसे अपनी शक्ति उत्पादनमें लगा सकते हैं। सरकार ट्रेक्टरों को किराए पर भी देती है। प्रति एकड़ चालीस और पचास रुपए के अल्प व्ययसे ट्रेक्टरोंने बंजर जमीनको उपजके लायक बना दिया है।

हमारा कर्तव्य है कि हम उत्पादन-कार्यको बराबर प्रगति दें। हम भूमि की सेवाके साथ ऐसे साधन निर्माण करें, जिससे प्रकृति हमारी सहायक बने। जितना हमारा निकटतम सम्बन्ध भूमि और प्रकृतिसे होगा, उतनी ही हमें सफलता प्राप्त होगी।

खेतीका महत्त्व

मानव समाजमें कृषि सबसे प्राचीनतम धंधा है। वह कबसे प्रारम्भ हुआ, यह नहीं कहा जा सकता। पर समाजमें उसका स्थान अन्य धन्धोंसे अधिक गौरवपूर्ण है। संसारके सभी देशोंमें किसानका जीवन श्रेष्ठतम माना गया है। इस देशमें तो कृषिको मानवके अभ्युदयका प्रतीक माना है। आजीविकाके जितने भी साधन हैं, उन सबमें कृषिको श्रेष्ठ बताया है यथा :—'उत्तम खेती, मध्यम बनिज, अधम चाकरी, भीख निदान'—यह निर्देश समाजका सदा लक्ष्य रहा है। अतः खेतीको जो सन्मान समाजमें प्रदान हुआ, वह अन्य किसी भी धंधेको नहीं। इस देशने नौकरीको सदा निकृष्ट माना है। वह कितनी भी उच्चपदकी क्यों न हो, उसे गुलामी ही करार दिया। कृषि और व्यापारके आगे समाजमें अन्य सभी धंधे क्षुद्र माने गए। गीतामें भगवान् कृष्णने कृषि और वाणिज्य को प्रधानता दी। फिर कृषिका धंधा मानवताकी रक्षा करता है। अन्नके बिना कोई भी प्राणी जीवित नहीं रह सकता है। मनुष्य हो, या पशु-पक्षी सबको शरीर रक्षाके लिए अन्न और वस्त्र चाहिए। मनुष्य को शरीर रक्षा के लिए अन्य पदार्थ भी चाहिएँ। सृष्टिके आरम्भ कालमें मनुष्य अपनी क्षुधाकी पूर्ति वन के फल-फूलोंसे करता था। पर उससे जब पूरा न पड़ता, तब लोग पशुओंका शिकार करते थे। पर ये भी सब समय-समय पर मिलते

थे। इसलिए मनुष्यको अन्न उपार्जन करने और उसे संग्रह करने की चिन्ता हुई। उसने गाय-बैलका पालन करना आरंभ किया और खेती आरम्भ कर गेहूँ और जौ आदिकी फसल उत्पन्न की। उस समय किसानोंके सामने केवल एक लक्ष्य था कि वे अपने और अपने परिवारके पोषणके लिये अनाज उत्पन्न करें और वस्त्रोंके लिए पशुओंकी खाल का उपयोग करें। यही कारण है कि हिरन आदिकी खाल पवित्र मानी गई। उस समय अन्नको बेचनेकी आवश्यकता नहीं थी। गृहस्थ हो या ऋषि-मुनि सभी अपने पोषणके लिए अन्न उत्पन्न करते थे। कोई किसी पर भार स्वरूप नहीं रहता था। लोग गेहूंका चूर्ण करते और रोटियाँ आदि बनाते। जौ का उपयोग सोमरस बनानेमें होता था। इसके उपरांत भेड़ आदिके ऊनसे वस्त्र बनने लगे। इसप्रकार समाजका प्रत्येक व्यक्ति कृषि-कार्यमें लगा। अन्न उत्पादनका यही एक मार्ग था। अतएव कृषि की उपजसे प्रत्येक परिवार आत्मनिर्भर था। अन्न और वस्त्रके लिए किसीके आधीन होना पाप समझा जाता था। प्रत्येक व्यक्ति और परिवार अपने परिश्रमसे उत्पन्न किया हुआ अनाज खाता था। कोई विद्वान हो या राजमंत्री अथवा न्यायाधीश, उसका परिश्रम करनेसे दर्जा गिरता नहीं है। श्रम तो चाहे मानसिक हो या शारीरिक सबका स्थान बराबर है। अतीत कालमें भारतीय समाजमें दोनों प्रकारके श्रमको समान स्थान प्राप्त हुआ।

जैसे समय व्यतीत हुआ, कुछ लोगोंने खेतीका परित्याग कर व्यापार और उद्योगका विकास किया। वे नगरोंमें जाकर बसे, जहाँ वे अनाज पैदा नहीं कर सकते थे, इसलिए उन्हें उसे खरीदना पड़ा। उनकी मांग पूरी करनेके लिए किसानोंको खेतीमें नए सुधार कर पैदावारमें वृद्धि करनी पड़ी। अपने और परिवारका भलीभाँति पोषण करनेके उपरान्त जो अनाज बचता, उसे वे उन लोगोंको बेचने लगे, जो दूसरे धंधोंमें लगे थे। वे जुलाहोंको ऊन देने लगे, जो उनके लिए वस्त्र तैयार करते। इस प्रकार किसानोंको अपने अन्नके अतिरिक्त आय भी होने लगी। वे द्रव्यका उपयोग वस्त्र और अन्य वस्तुओंके खरीदनेमें करने लगे। खेतीबारीके औजार और साज सामान आदि उन्हें धनसे खरीदने पड़ते। इस प्रकार उद्योग धंधे बढ़े और व्यापारका विकास हुआ। खेती जो आत्मनिर्भरताका धंधा था, वह अन्न बेचकर व्यापार द्वारा मुनाफा कमानेका साधन बन गया।

धीरे-धीरे कला-कौशलका विकास हुआ। देशने अपने उद्योगधन्धे और व्यापारमें इतनी अधिक उन्नति की, कि वह संसार का अग्रणी बन गया। आर्थिक जीवनका स्तर उच्च होनेपर भारतीय समाजमें सभ्यताका विकास हुआ। अतएव इस देशने जहाँ ज्ञान-विज्ञानके क्षेत्रमें संसारको अद्भुत प्रकाश दिया, वहाँ उसका व्यापार भी सर्वत्र फैला। भारतीय वस्तुओं के संसार भरमें बाजार कायम हुए। कोई भी ऐसा देश नहीं

था, जहाँ भारतकी वस्तुएँ न बिकती हों। यही कारण था कि संसार भरका सोना भारतमें ढुआ चला आता था। यह देश विश्वमें सम्पन्न बन गया। संसारके देश इसकी ओर तृष्णापूर्ण दृष्टिसे देखते थे। भारतीय कारीगरों द्वारा इतना महीन वस्त्र तैयार होता था कि एक रेशमी साड़ी अंगूठीमें से निकल आती थी और भी कला-कौशलकी ऐसी अद्भुत वस्तुएँ तैयार होती थीं कि जिन्हें खरीदनेके लिए संसार लालायित रहता था।

भारतकी उपज, और उद्योग-धन्धोंका विकास अंग्रेजोंके आनेके समय तक था। आज भिन्न-भिन्न नगरोंमें हमें जिस कला-कौशलके दर्शन होते हैं, वह उसका भग्न रूप है। पर उस समय, आसाम, मुर्शिदाबाद, बनारस, मिर्जापुर और जयपुर आदि बीसियों नगरोंमें कारीगरीकी सुन्दर वस्तुएँ तैयार होती थीं। अंग्रेजोंने लंकाशायर और मैनचेस्टरके कारखानोंकी उन्नतिके लिए भारतीय कारीगरोंकी अंगुलियाँ कटवा दीं, जिससे कि वे बढ़िया वस्त्र तैयार न कर सकें, क्योंकि मिलोंके मुकाबलेमें हाथसे तैयार किया हुआ भारतीय वस्त्र फिर भी सुन्दर और सस्ता पड़ता था और मिलका वस्त्र उतना सुन्दर भी नहीं होता था।

अंग्रेजोंने खेती-बारी नष्ट नहीं की, क्योंकि उनका देश कृषि-प्रधान नहीं था। भारतीय रुईसे मैंचेस्टरके कारखाने चलते थे और उनका तैयार वस्त्र भारतके बाजारोंमें बिकता था। इस प्रकार भारत विदेशी मालकी खपतका एक केन्द्र बन गया था।

मगर इतनेपर भी उन्होंने कृषिके विकासमें कोई प्रयत्न नहीं किया। उन्होंने ऐसी अर्थ-व्यवस्था कायम की कि जिससे किसानका जीवन अनिश्चित रहे और वह कोई उन्नति न कर सके। जिन जमीदारोंको भूमिका स्वामी बनाया, उन्होंने लाखों और करोड़ों किसानोंको कभी स्वावलम्बी नहीं बनने दिया। यही कारण है कि भूमिकी पैदावार बढ़नेकी अपेक्षा गिरती चली गई। जमींदार और महाजन—दोनोंसे जब किसान सताया जाने लगा, तब वह कर्जके भारसे दब गया, उसका जीवन तबाह हो गया। तब वह कैसे कृषि सुधार कर सकता था। जब जमीन पर उसका अधिकार स्थायी नहीं रहा, तब यह कैसे संभव था कि वह अपनी खेतीमें उन्नति करता। यही कारण है कि जिस देशमें घी-दूधकी नदियां बहती थीं, जो धन-धान्यसे परिपूर्ण था, वह निर्धन बन गया, अन्न उत्पादनमें पिछड़ गया और यहांतक हालत हो गई कि अपने भरण-पोषणके लिए दूसरे देशोंका मुहताज बना। जमीनकी उर्वराशक्ति नष्ट हो गई, अनाज और अन्य व्यापारिक पदार्थ हल्के दर्जेके उत्पन्न होने लगे और धीरे-धीरे उनकी उपज बेतरह घट गई। अन्न और रूई आदि की पैदावार ही नहीं घटी, अपितु उनकी श्रेष्ठता भी कम हो गई। यहांका गेहूँ और यहांकी रूई हल्के दर्जेकी पैदा होने लगी और दूसरे देशका गेहूँ, दूसरे देशका तेलहन और दूसरे देशकी रूई सर्वोत्तम पैदा होने लगी। मिश्र और कनाडा आदिकी तुलनामें भारतीय रूईकी किस्म गिर गई। यही अवस्था तेलहन आदि की है।

आज देशमें कृषिने व्यापारका रूप ग्रहण किया है, जिसमें खेती, जमीनकी व्यवस्था और पशुओंका संरक्षण आदि है। खेती बिक्रीके लिए अन्न पैदा करनेके लिए हो या पशुओंके पोषणके लिए घास आदि उपज करनेके लिए हो। पहली अवस्थामें फसलकी बिक्रीसे किसान को आय होती है। जो अनाज उत्पन्न होता है उससे ग्राम और नगरके लोगोंकी क्षुधापूर्ति होती है। किसान गन्नोंसे गुड़ आदि भी तैयार करते हैं। पशुओंका भली-भाँति पालन ग्रामोंमें नहीं होता है; अन्यथा दूध, घी और मक्खनकी बिक्रीसे भी किसानोंको भारी आय हो। पर किसानोंने गौ-बैलके पालनका सच्चा महत्त्व भुला दिया। इस देशमें कृषिका प्रधान उद्देश्य अन्न और अनेक पदार्थोंकी उपज करनेका रहा, किन्तु इस ओर जहाँ अन्य देशोंने जमीनकी उर्वरा शक्तिकी रक्षाका पूरा ध्यान रखा, वहाँ यहाँके किसानोंने उसकी सर्वथा उपेक्षा की। यदि यह जमीनकी उर्वरा-शक्ति बनी रहती, तो आज देश सर्वसम्पन्न होता।

फसलें कई प्रकारकी होती हैं। कुछ तुरन्त बिक्रीके लिए पैदावार की जाती हैं, उन्हें आर्थिक दृष्टिसे नकद-फसल कहते हैं। इनके सिवाय अन्न आदि की उपज है, जो प्राणियोंका खाद्य पदार्थ है। कुछ फसलें, जैसे कि फल, आलू, गन्ना, साग-भाजी आदि जिस रूपमें पैदा होती हैं वे उसी रूपमें बाजारमें बिक जाती हैं। लोग उनका तुरन्त उपयोग करते हैं। दूसरी फसलें जिस रूपमें पैदा होती हैं, उनका उस रूपमें उपयोग

नहीं होता है। गेहूँका आटा तैयार होता है और उसकी रोटियां बनती हैं, तब वह कहीं उपयोगमें आता है। धान से चावल निकाला जाता है, पालिश होता है, तब वह बाजार में बिकता है और लोग उसका उपयोग करते हैं। गन्नेको लोग चूसते हैं, किन्तु उसका बहुत बड़ा भाग गुड़, खांड, बूरा और चीनी बननेके उपयोग में आता है।

इसके उपरान्त व्यापारिक फसलोंकी उपज—रूई, पाट, आदिके रूपमें होती है। ये वस्तुएँ मानवकी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति करती हैं।

पर इस देशमें नगरोंकी वृद्धिसे एक ओर जहाँ ग्रामोंका क्षय हुआ, वहाँ वृक्षोंका भी विनाश हुआ। अधिकाधिक वृक्षोंके कटने पर वन और ग्राम वीरान हो गए। वृक्षोंके हरे-भरे स्थान पर खुले मैदान निकल आए। यह स्थिति भारतीय कृषि के लिए अत्यन्त संकटजनक हुई। अन्य औद्योगिक देशोंने ग्राम और वनोंको नष्ट नहीं किया, अपितु उनके प्राकृतिक रूपकी पूर्ण रक्षा की गई। विदेशोंमें पक्के महल नहीं खड़े किए गए, बल्कि छोटी-बड़ी झोपड़ियोंको महत्व दिया गया। इस देशके समान विदेशियोंने ग्रामजीवन की उपेक्षा नहीं की। वहाँ नगरों में व्यस्त जीवन व्यतीत करनेवाले व्यक्ति भी अवकाश मिलते ही ग्रामोंकी झोंपड़ियोंमें रहनेके लिए दौड़ते हैं। पर भारत में ग्राम और वनोंके वीरान होनेपर जलकी समस्या खड़ी हो गई।

इस देशमें कृषिकी एक दो नहीं, अनेकों समस्याएँ उपस्थित हैं, जिन्हें किसानोंको हल करना है। समय आगे बढ़ गया है, परिस्थितियां बदल गई हैं, जीवन परिवर्तित हो गया है, ऐसी अवस्थामें आज यह प्रश्न उपस्थित है कि, किसान किस प्रकार पैदावारमें उन्नति करें, और अन्य नए नए काम-धन्धोंके द्वारा अपना और अपने ग्रामका जीवन सुखमय बनाएँ। आज ऐसे भी तत्व उत्पन्न हुए हैं, जिनपर किसानोंका नियन्त्रण नहीं हो सकता। यद्यपि कृषिके सम्बन्धमें किसानों को पूरी स्वतन्त्रता है कि वे किसी भी पद्धतिको अपनाएँ, परन्तु वर्षाके लिए वे क्या करें। यह तो बेबस हो जाते हैं। विदेशोंमें ऐसे आयोजन हुए कि किसान वर्षा पर निर्भर नहीं रहते हैं। वर्षा जब कभी हो, उसका जल उनकी पैदावारके लिये रक्षित रहता है। कहाँ किस जमीनमें किस प्रकार किन-किन पदार्थोंकी खेती हो सकती है, और नए जीवनमें खेतीकी क्या व्यवस्था हो, किन साधनोंसे खेती की जाए और उत्पादन की वृद्धिके लिए खाद और जलकी किस प्रकार उपयुक्त व्यवस्था हो, ये सब बातें किसानोंके लिए विचारणीय हैं। भूमिको उर्वरा रखने, हरा-भरा रखने और ग्रामको सुन्दर बनाए रखनेके सिवाय अन्य सारी समस्याएँ हल करने का कर्तव्य किसानका है। इन सबके अतिरिक्त पशुओंका सुधार, उनकी रक्षा, खादका उत्पादन, पान, [illegible], भूमि-कटाव, बीज भण्डार और सड़कें आदिका निर्माण किस ढंगसे हो, इस सम्बन्धका कार्य-क्रम किसान निर्धारित कर सकते हैं।

ग्रामकी स्वच्छता, स्वास्थ्य और एकताका जीवन उत्पन्न करनेकी ओर हरएक किसानका ध्यान जाना आवश्यक है।

उत्पादनकी वृद्धि और ग्रामके नव-निर्माणकी सब नीतियाँ और कार्यक्रम किसान तय कर सकते हैं। किसान स्वयं ही अपना मार्ग निर्देशन करें। उनका अपना नेतृत्व ही उनके लिए प्रकाश-स्तम्भ होगा।

भारतीय किसान सामाजिक और आर्थिक क्रान्तिके चौमुहानेपर खड़े हुए हैं। संसारके किसान आगे बढ़ रहे हैं। उन्होंने नई क्रान्तियों द्वारा अपने देशोंका नवनिर्माण किया है। इस देशमें भी किसानके कन्धोंपर देशका भविष्य निर्भर है। देशका राजनीतिक निर्माण भी किसानोंपर कायम है कि, वे किस दिशामें आगे बढ़ेंगे।

पर क्या भारतीय किसान अज्ञ बना रहेगा? यदि उसने अपने उद्योग और अपने जीवनकी समस्याएँ हल करनेमें दक्षता प्राप्त न की, तो उसका भविष्य अन्धकारमय रहेगा। पर एकता, विश्वास और अनुशासन, भारतीय किसानोंकी सफलताके महामन्त्र एवं कवच है। किसानोंके संगठित जीवन और एकतामें ही उनकी सफलता निहित है। परिस्थितियाँ विपरीत होनेपर भी भारतीय किसानोंको अपनी उन्नति द्वारा एक संगठित संयुक्त राष्ट्र निर्माण करना है। पर यह सब किसानों पर निर्भर है कि वे किस प्रकार ग्रामोंकी समस्या हल करते हैं, और किस प्रकार उत्पादन बढ़ानेमें समर्थ होते हैं। क्या इस

दिशामें भारतीय किसान अपनेको योग्य साबित करेंगे? वे अपने जीवनसे यह बतायेंगे कि, वे संसारकी दौड़में पीछे नहीं हैं। संसारके किसानोंके समान उन्होंने अज्ञता और अन्ध-विश्वास तथा पुरानी पद्धतियोंका परित्याग कर नए जीवनमें प्रवेश किया और अपने देशकी आर्थिक समस्याएं हल कीं। कारण उनके ही हाथमें देशके गौरवका भार है। उनके ही बलपर देशने स्वतन्त्रता अर्जित की। अब इस स्वतन्त्रताको साकार रूप देनेमें वे क्या पिछड़ेंगे? वे कभी संसारको यह कहने का अवसर न देंगे कि देशकी आन-बानकी घड़ीमें वे पिछड़ गए। अतः वे संगठित सेनाके रूपमें एक कतारमें नवबल और नव साधनोंके साथ खड़े होकर इस देशका अभ्युदय कर सकते हैं। पाँच लाख ग्रामोंकी काया पलट सकते हैं। यह उनकी कर्तव्य की बेला है, देश यहीं बना रहेगा और जमीन यहीं बनी रहेगी, पर इनके कार्य इतिहासमें अजर-अमर रहेंगे। वे संकीर्णताओं की परिधियोंसे बाहर निकलकर इस देशको पुनः धन-धान्यपूर्ण और समृद्ध बनाएँगे। वे ऐसे समाजकी रचना करेंगे कि जिसमें कोई दीन दुःखी न रहेगा और न कोई बड़ा-छोटा रहेगा न कोई ऊँच-नीच। वे मानव-मानवमें कोई भेद न रखेंगे।

खेतीका बढ़ता हुआ क्षेत्र

संसारके देश आधुनिक विज्ञानके द्वारा अपनी कृषि-प्रणाली में परिवर्तन कर उत्पादनमें नित्य-प्रति अत्यधिक वृद्धि करनेमें लगे हैं, और भूमिकी उर्वरा शक्ति वढ़ानेमें समर्थ हुए हैं। किन्तु भारतीय किसानों तक विज्ञानका आलोक नहीं पहुँच सका। उसे आधुनिक विज्ञानसे कुछ भी लाभ नहीं हुआ। वह आज भी दो बैलोंकी पुरानी जोड़ी लिए दिनभर खेतमें टक-टक किया करते हैं और पानीकी दो बूँदोंके लिए आकाशको ताका करते हैं। उन्हें वैज्ञानिक आविष्कारोंका पता नहीं और न उन्हें इसे जाननेका मौका ही मिला है। जमीनको वे प्राणोंसे भी अधिक प्यार करते हैं। जमीनके साथ उनका सम्बन्ध उसी प्रकारका है, जिस प्रकार मा के साथ सन्तानका होता है। वे जमीनकी ममता छोड़ नहीं सकते। उन्हें कोई दूसरा काम करना अभीष्ट नहीं है। उनके लिए कृषि-कार्य जीवनका एक आवश्यक अंग है।

विगत तीस-बत्तीस बर्षोंमें भारतने औद्योगिक क्षेत्रमें उन्नति की। किन्तु इस प्रगतिसे नगरोंका ही उत्थान हुआ। किसान उससे कुछ लाभ न उठा सके। उनके जीवन-स्तरमें कोई बृद्धि नहीं हुई। पर अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दीमें योरोपीय देशोंमें उद्योग-धन्धोंमें जो अभिवृद्धि हुई, उसके परिणामस्वरूप उनके समग्र देशवासियोंका जीवनस्तर उच्च हुआ। उन देशोंमें कोई वर्ग भी अछूता नहीं बचा। वहाँ वैज्ञानिक आविष्कारोंका

प्रयोग देशकी आर्थिक उन्नतिके लिए इस प्रकार किया गया जिससे कोई भी लाभ उठानेसे वंचित नहीं रहा। उद्योग और कृषि उन्नतिमें सामंजस्य रखते हुए वैज्ञानिक तरीकोंका इस ढंगसे उपयोग किया गया, जिससे उसका प्रभाव समस्त जनता पर पड़ा।

जमीनमें तरह-तरहकी फसल उत्पन्न करने, सिंचाईकी व्यवस्था करने, फसल बोने और काटने एवं जमीनकी उर्वरा शक्ति कायम रखनेके लिए, अच्छी खादके उपयोगके लिए, वैज्ञानिक तरीके उपयोग किए गए जिसके परिणाम स्वरूप उत्पादनमें अत्यधिक वृद्धि हुई और कृषि-उद्योग व्यवसायके स्तर पर आ गया। कृषि और व्यवसाय दोनोंकी प्रगति साथ-साथ हुई, इससे उन देशोंको अपनी सामाजिक व्यवस्था बदलनेमें अच्छी सफलता मिली। किसान और मजदूर दोनोंका जीवन समान रूपसे उन्नत हुआ।

लिए लाभप्रद नहीं हुए और उसका जीवन इतना सिमटा हुआ दूरवर्ती रहा कि उसका इस ओर कभी ध्यान तक नहीं गया। ऐसी अवस्थामें वह उन्हें जाननेकी क्या चेष्टा करता। जीवनके स्तरको ऊँचा उठानेकी भावनासे भी वे अछूते रहे। इसका मूल कारण यह था कि वैज्ञानिक आविष्कारोंसे उद्योग-धंधोंको सफलता मिली, नागरिक लोगोंका जीवन सुधरा, किन्तु उनका प्रकाश किसानों तक नहीं पहुँचा। कोई ऐसी योजना या परि-कल्पना नहीं बनी जिससे वे वैज्ञानिक प्रयोगोंसे लाभ उठाते और अपने कष्ट दूर करते। उल्टे उनसे किसानोंको क्षति पहुँची।

कृषिसे सम्बन्ध रखनेवाले जो ग्रामोद्योग थे, वे नष्ट हो गए। अनेक प्रयत्न करने पर भी किसान उनकी रक्षा नहीं कर सके और न उन्हें कोई दूसरा मार्ग मिला कि ग्रामोंमें नए उद्योग धंधोंको जन्म देते। केवल कृषि-कार्य उनके जीवनका अवलम्बन रह गया। भूमि ही उनकी जीवनदायिनी देवी और एकमात्र अवलंब रही।

उद्योग धंधोंके विकाससे भारतके कुछ इने-गिने नगर समृद्धि-शाली बने, कुछ लोगोंके घेरेमें धन और सम्पत्तिका केन्द्रीय-करण हो गया, किन्तु उनकी प्रतिक्रिया लाखों ग्रामोंपर विपरीत हुई। उनकी प्रगतिसे ग्रामोंकी आर्थिक अवस्था बिगड़ गई। ग्रामोंमें निर्धनता और गरीबी बढ़ती गई और उसे रोकनेकी कोई सूरत नहीं रही। कारण, नगरोंकी औद्योगिक उन्नतिका ग्रामकी आर्थिक व्यवस्थासे कोई सामंजस्य स्थापित नहीं हुआ।

अन्नपूर्णा भूमि—

गोष्ठी की सफलता पर विचार
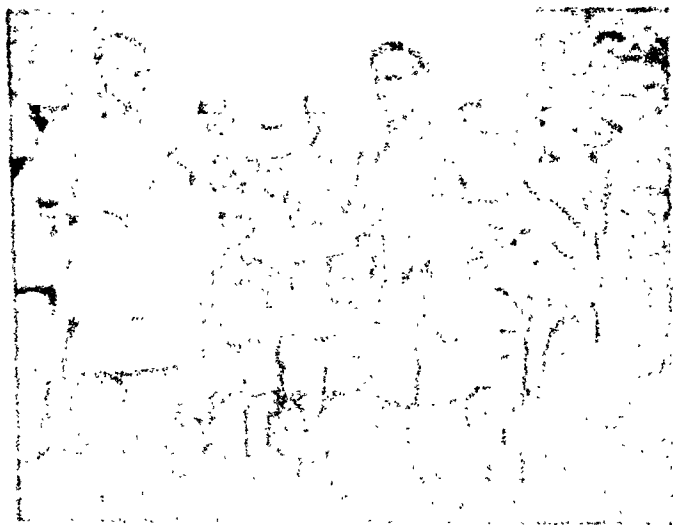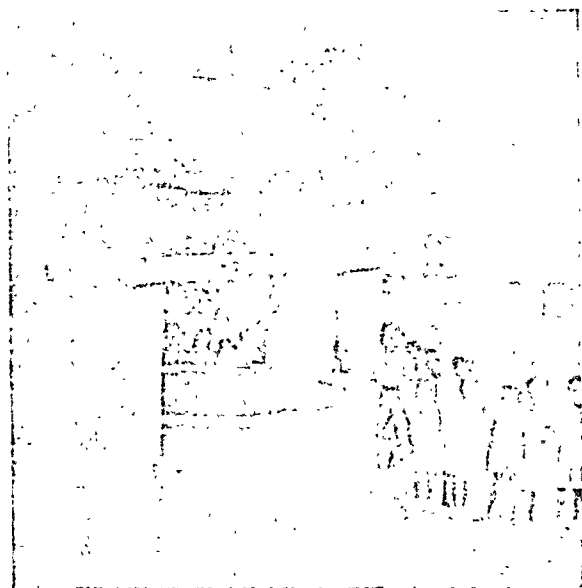
ग्राम का कुँआ
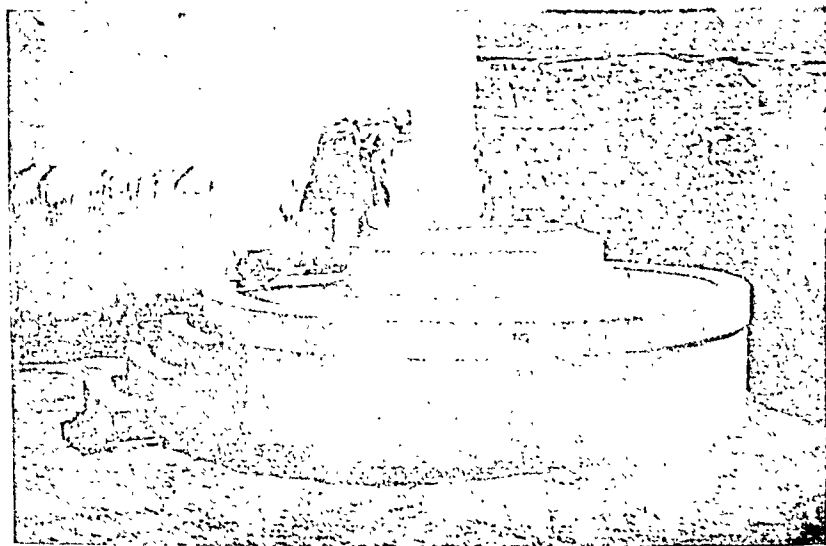
ग्राम में नये ढंग का पक्का कुँआ

भारतका किसान जहाँका तहाँ बना रहा। उसकी ओर किसीने दृष्टिपात नहीं किया। यही कारण है कि भारतकी कृषि, जहाँ थी, वहीं रह गई और उसमें कोई प्रगति नहीं हुई।

पर जब ग्रामोंकी अवस्था एकबारगी क्षीण हुई, और देशको यह मालूम हुआ कि राष्ट्रकी रीढ़, किसानकी जर्जर अवस्थासे भयानक परिणाम उपस्थित होनेकी आशंका है, तब नेतृवृन्दका ध्यान इस ओर गया। उन्होंने इस बातको समझा कि भारतके प्राण ग्रामोंका जब तक सुधार नहीं होता, तब तक देशका कल्याण संभव नहीं है। पर जब देशको खाद्य-संकटका सामना करना पड़ा, तब लोगोंका ध्यान ग्राम और किसानोंकी ओर पूर्ण रूपसे गया।

वर्तमान सरकारने एक ओर जमींदारोंके निराकरणकी तत्परता प्रकट की, वहीं देशके किसानोंको हर प्रकारसे सुख-सुविधा पहुँचानेके अनेक कार्य किए। अभी तक लोगोंकी यह धारणा रही कि समाजमें किसानका जीवन महत्त्वपूर्ण स्थान नहीं रखता क्योंकि खेतीसे कोई आर्थिक लाभ नहीं होता। पर खाद्य-पदार्थ और फसलके भाव दाम बढ़नेसे किसानोंकी आर्थिक अवस्थामें जो परिवर्तन हुआ, उससे लोगोंपर कृषिकी उपयोगिता प्रकट हुई। जिन किसानोंके पास जमीन थी, उन्हें इससे बड़ी अच्छी आय हुई। पर उन किसानोंकी संख्या बेशुमार है, जिनके पास जमीन नहीं है। उनकी दीन-हीन अवस्था दूर नहीं हो सकती।

इसके अतिरिक्त कृषि-प्रणालीमें कोई सुधार नहीं हुआ और उत्पादन बढ़नेके बजाय घटता जा रहा है। जब तक वैज्ञानिक प्रयोगोंसे उत्पादनमें वृद्धि नहीं लाई जाती, जमीनकी उर्वरा शक्ति की वृद्धिके लिए समुचित खादोंका उपयोग नहीं किया जाता, उत्पादन केन्द्रोंके निकट कृषि-उत्पादनके किसानों द्वारा बाजार नहीं बनते, ग्रामीण सड़कोंका पर्याप्त सुधार नहीं होता, सिंचाईकी समुचित व्यवस्था नहीं होती और ग्रामोद्योगका पुनरोद्धार नहीं होता तथा कृषि और उद्योगमें अर्थ-नैतिक सामंजस्य स्थापित नहीं होता, तब तक भारतीय किसानका जीवन स्तर उच्च नहीं होता। कृषिका उद्योग भारतवर्षका मेरु दण्ड है। राष्ट्र इसीके आधारपर आगे बढ़ सकेगा। कृषि तथा कृषि संलग्न उद्योगोंमें आधुनिक विज्ञानके आविष्कारोंका प्रयोग कर हमें वर्तमान सामाजिक अवस्थाको बदल देना होगा।

कृषिका अर्थ केवल अन्न आदिका उत्पादन ही नहीं समझना चाहिए। इसके अन्तर्गत पशु-पालन, वन-संरक्षण, मत्स्य-पालन जल शक्तिका व्यवहार, प्राकृतिक दृश्योंका संरक्षण और ग्रामोंकी उपजसे चलनेवाले अनेक धंधोंकी अभिवृद्धि करना भी है। आज ग्रामोंकी उपजके धंधे नगरोंमें धनियोंके हाथमें चले गए हैं और वे उनसे लाखों और करोड़ों रुपये उपार्जन करते हैं। यदि ये सब धंधे छोटे-छोटे पैमाने पर ग्रामोद्योगके रूपमें किसानों द्वारा ग्रामोंमें संचालित हो, तो ग्रामोंकी लौटी हुई लक्ष्मी पुनः वापस आ सकती है। चावल, दाल, तेल, गुड़ और गन्ने आदिके धंधे

राष्ट्रीय आयमें कृषिका स्थान

१९५१ की भारतीय जनगणनामें देहातमें रहनेवालोंकी संख्या २६ करोड़ ५० लाख दिखलाई गई थी, जिनमें २४ करोड़ ९० लाख खेती पर वसर करनेवाले थे। यहांपर दी गई तालिकासे यह ज्ञात होगा कि विभिन्न राज्योंके गांवोंमें कृषिकारों तथा अन्य पेशे वाले परिवारोंका अनुपात बहुत अधिक है—

कृषि और सरकारी आय

योजना आयोग द्वारा प्रकाशित योजना-प्रगतिमें विभिन्न विभागोंमें समस्त राज्योंकी आयका निम्नलिखित वर्गीकरण किया गया है।

(१९५३-५४ का वजट करोड़ रु० में)

लगान ६७·५	मोटर गाड़ियों पर टैक्स १२·२
कृषि आयकर ३·१	बिक्री कर ५४·७
राज्योंका नशाकर ४४·२	मोटर स्पिरिट कर ३·८
स्टाम्प २३·१	आन्तरिक पूँजी ६·१
रजिस्ट्रेशन ३·८	दूसरे कर २१·५

कुलयोग २४२·६

नीचेकी तालिकासे यह भी ज्ञात होगा कि भारतकी कुल राष्ट्रीय आयमें कृषिजन्य आयका क्या भाग है? १९४६ के आंकड़े देखिये—

लाख रुपयोंमें

	१९५०-५१	१९५१-५२
गोला	८६०	८९०
चाय	७९९०	६३४०
कच्चा तमाखू	१३००	१३९०
काली मिर्च	२०४०	२३२०
सिगरेट आदि	२२०	२८०
लाख	११९०	१४८०
कच्चा चमड़ा	६४०	८३०
मूंगफली व उसका तेल	२०३०	६६०
अरंडी व उसका तेल	७३६	६६०
अलसी व उसका तेल	६८०	६४०
रूई (कच्ची व वेस्ट)	१७३०	२१००
कपड़े	१०५८०	४२६०
हैसियन	५२६०	१२४७०
बोरियां	५५२०	१३३३०
सूत	१७१०	२००
कमाया हुआ चमड़ा	२५२०	२४९०

भारतसे निर्यात होनेवाले मालमें भी यहांके कच्चे मालका विशेष भाग है; दूसरा सामान बहुत कम निर्यात होता है।

योजना आयोगने ५ वर्षों तक कृषि उत्पत्तिका निम्नलिखित लक्ष्य नियत किया है।

गांवों में किसान परिवारों का भारी प्रतिशत

	ग्रामों की संख्या	कुल परिवार	कृषि—परिवार			कृषक परिवारों का
			भूमिस्वामी	जोतदार	कृषि मजदूर	प्रतिशत अनुपात
आसाम	(२५)	२३४७	११७०	४०५	२०३	९३·८
उड़ीसा	(४५)	३१९४	१३२२	१२३	१२१२	८६·३
उत्तरप्रदेश	(१२०)	१४९०९	१२५०	८३३०	१९३६	९४·३
काश्मीर	(१६)	१५१७	११३२	१८१	३०	८२·२
ट्रावनकोर कोचीन	(१६)	६०७१	१२५३	३६५	१९८८	९९·९
पंजाब	(२९)	५०७९	२२६९	८५७	५२८	७६·५
पेप्सू	(१६)	२३२८	१०५४	३६५	२९०	७६·१
बंगाल	(५९)	८७७३	५३८	३२०२	१९३६	९४·३
बम्बई	(५५)	८१००	३८६०	१६०३	१४७१	८५·७
बिहार	(८०)	९५५६	३८०	३७५४	३६१२	७७·६
मद्रास	(८४)	२५७४४	६१२५५	१७३०	१२४४७	९२·४
मध्य प्रदेश	(६०)	४९९१	३४८	९७५	१९९२	८६·४
मध्यभारत	(२४)	२५१२	१०४३	६०९	४११	८७·१
मैसूर	(२४)	१९५१	८८९	११४	७०५	९३·७
राजस्थान	(३७)	३१८६	१२९३	९६५	३५०	९३·१
सौराष्ट्र	(१२)	१२९४	३८०	२३८	२०४	९४·२
हैदराबाद	(३४)	५४२१	२२६५	२३९	१८००	८७·२

पहली संख्या उन ग्रामों की संख्या है, जिसमें यह गणना की गई है।

भारतका कृषि उत्पादन

[हजार की संख्या में]

फसलें	क्षेत्र	(एकड़में)	उत्पादन	(टनमें)
अनाज	१९४९-५०	१९५०-५१	१९४९-५०	१९५०-५१
चावल	७५४१४	७५९९७	२३१७०	२०२६०
जुआर	३८३३५	२८४४७	३७७७	५४०८
बाजरा	२२८८१	२९३१३	२७९०	२५५७
मक्का	८०८१	७७१७	२०१४	१७२३
रागी	५४५०	५४४२	१५२०	१४०७
छोटे अनाज	१५३८२	१२५५०	२२४२	१८०६
गेहूं	२४११४	२३९८३	६२९०	६९५०
जौ	७८६०	७६४६	२२१५	२३२५
दालें				
चना	२०४९७	१२३८७	३६६७	३७६६
दालें	२९३३६	२६४४८	४३६३	३८५८
गन्ना	३६२४	४१३८	४९३८	५४०२
आलू	५७७	५८८	१५१९	१६२०
अदरक (सूखा)	५७	५८	२४	२४
काली मिर्च	१९६	१९९	३१	३१
तमाखू	८६०	८३९	२६४	२

फसलें	क्षेत्र	(एकड़में)	उत्पादन	(टनमें)
	१९४९-५०	१९५०-५१	१९४९-५०	१९५०-५१
तेलहन				
मूंगफली	९८३२	११९३०	३३७९	३४३७
अंडी	१४५८	१३७८	१२८	१०४
तिलम	५०५५	५६२९	४३१	४५३
राई और सरसों	४७८१	५५०५	७९३	८२६
अलसी	३७५९	३५०३	४११	३८५
रेशे				
कपास	१२१७३	१३८५९	२६२८+	२९२६+
पटसन	११६३	५४५४	×३०८९	×३३०१

कृषि पदार्थोंके उत्पादनसे आय

[दस लाख रुपये में]

उत्पादन	१९४८-४९	१९४९-५०	१९५०-५१	१९५१-५२
चावल	९७६१	९६९७	९३०४	९४३८
गेहूं	२२११	२३७७	२७५७	२३७८
मक्का	५०३	५९८	६०७	६९७
जौ	७१५	५९८	७२६	६६४
जुआर	१४२४	१७१६	१७५२	१८६२
बाजरा	६४५	८६६	७५९	६११
रागी	३१७	३६९	३२३	२६८
गन्ना	१०२५	१०१३	११९४	११८४
चना	१५९१	११९७	१२९७	११०९
मूंगफली	१४८८	१६४२	२४१३	२२९६
अंडी	५२	७२	६९	७८
सरसों और राई	५२५	७०६	७२७	६८०
अलसी	२०५	२३३	२८१	२२४
तिल	२५२	३३१	४५१	३८१
चाय	८६४	९५४	१०६२	५३६
काफी	४०	७१	७२	९२
कपास	५१६	७८८	९४५	१०८३
पटसन	३००	४२९	५९१	१५९१
रबर	२५	२८	३०	२३
तमाखू	४४८	४६९	४९७	४९३
२० फसलोंकी आय	२२९१७	२४०७४	२५८५७	२६७८८
अन्य फसलोंकी आय	७५६०	७५२०	८०००	७६४०
कुल आय	३०४७७	३१५०४	३३८५७	३३७२८

अन्य छोटी फसलोंसे आय

	१९४८-४९,	१९४९-५०,	१९५०-५१	१९५१-५२
१—छोटी फसलोंका क्षेत्रफल (दस लाख एकड़में) (इसमें २५ प्रतिशत दुहरी फसलके क्षेत्रके कम उत्पादनका क्षेत्र कम करके)	४९	४०	४०	४०
२—प्रति एकड़ मुख्य फसलों की आयका औसत मूल्य—रुपयेमें	१०६	१०४	११०	१०५
३—फल और शाकभाजी की प्रति एकड़ औसत आय—रुपयेमें	५२०	५२२	५६४	५३६
४—प्रति एकड़ वजनके आधारपर मूल्य—रुपये में	१८९	१८८	२००	१९१
५—छोटी फसलोंकी कुल आय रुपयेमें	७५६०	७५२०	८०००,	७६४०

अन्नपूर्णा भूमि—
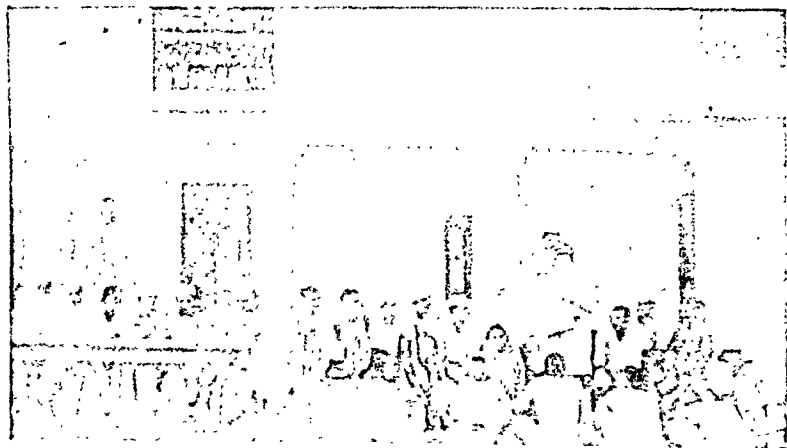
ग्राम-अदालत
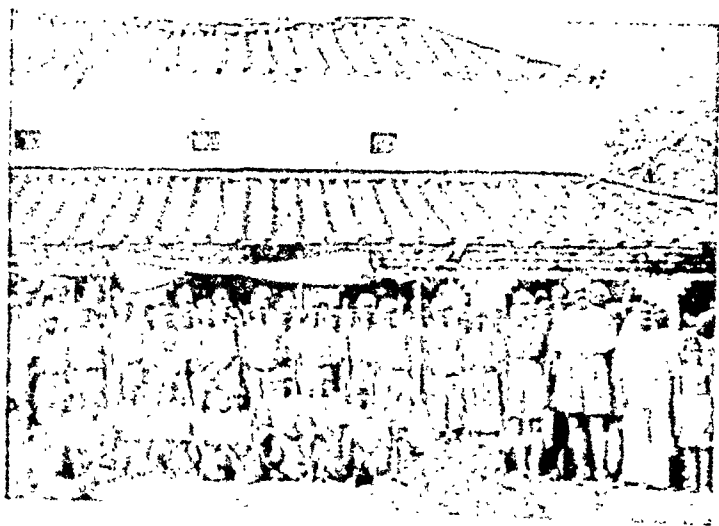
ग्राम-सेवादल

अन्नपूर्णा भूमि—

किसानों का जागरण

भारतीय किसानों को निर्देश

किसान उठें

देशके नव-निर्माणमें कृषि-विस्तार-कार्यने प्रमुख स्थान ग्रहण किया है। पर यह कृषि-विस्तार-कार्य क्या है? इस कार्यका लक्ष्य ग्रामीण जनताका जीवनस्तर उन्नतर करना है। इस योजनाके अन्तर्गत शिक्षित युवकगण ग्रामीणोंको इस प्रकार तैयार करें कि, वे अपने निर्माण-कार्यमें स्वयं जुट जाएँ। अतः ग्रामीणोंमें नवचेतना उत्पन्न करनेसे ही ग्रामोंका विकास संभव है। कृषि संबंधी योजनाओंकी सफलताका आधार यदि ग्रामीण जनता नहीं होती है, तो उनका कोई महत्व नहीं रहता है। ग्रामोंका निर्माणकार्य ग्रामीणोंके द्वारा स्वतः आरम्भ होना चाहिए। वह उनपर लादा नहीं जा सकता है। इस प्रकार ग्राम सम्बन्धी ज्ञान तथा कार्य-पद्धति और आधुनिक आवश्यकताओं का व्यवहार और प्रयोग ही कृषि-विस्तारका कार्य है। इसका मुख्य स्वरूप प्रदर्शनों द्वारा किसानोंको खेतीके नए-नए तरीकोंसे परिचित करना है। पर चूँकि हर एक प्रदेशकी परिस्थितियां भिन्न-भिन्न हैं, इसलिए कृषिविस्तार कार्यके लिए कोई एक समान लक्ष्य निर्धारित करना सम्भव नहीं है। अतएव हर एक प्रान्तकी विशेष परिस्थितियोंके अनुकूल आधुनिक ज्ञानके प्रकाश में अपनी उन्नतिका कार्यक्रम निर्धारित होगा।

कृषि-विस्तार कार्यके अन्तर्गत अनेक प्रकारके ऐसे सुधार सम्मिलित हैं, जो किसान और उसके कृषि-कार्य तथा ग्रामोंके

बहुमुखी सुधारोंके लिए अत्यन्त आवश्यक हैं। उदाहरणके लिए उत्तरप्रदेश राज्यमें इटावा योजनाके अन्तर्गत सौ ग्रामोंमें इस योजनाका आरम्भ किया गया है। यहाँ इस योजनाकी सफलतासे यह प्रकट हुआ कि ग्राम्य समुदायोंके विकासके लिए विस्तार-कार्य अधिक महत्वपूर्ण है। इस कार्यक्रम द्वारा वहां किसानोंको अच्छे बीज, खाद, सिंचाई और जुताई तथा फसल की रक्षा आदिके सम्बन्धमें ज्ञान कराया जाता है, वहाँ उन्हें वयस्क शिक्षा, स्वच्छता और स्वास्थ्य तथा रहन-सहनमें परिवर्तन करनेकी ओर इस ढंगसे अग्रसर किया जाता है कि सारा ग्राम्य-जीवन ही एक नई शक्तिसे संचारित हो उठे।

ग्रामोंमें जो प्रथाएँ प्रचलित हैं उनके साथही आधुनिक तरीकोंका संयोग किया गया है। जो किसान पहले नए तरीके अपनानेमें आनाकानी करते थे, उनके विचार नए तरीकोंके प्रदर्शनसे बदल गए। वे नए मार्गमें चलनेके लिए स्वयं प्रेरित हुए। इस प्रकार नए तरीकोंके प्रति उनकी उदासीनता मिट गई और उन्होंने उनका प्रयोग अपने खेतोंमें किया। जब एक परीक्षणमें उन्हें सफलता मिली, तब फिर क्या था, एक-एक करके सहस्रोंकी संख्यामें लोग नए तरीके अपनानेके लिये अग्रसर हुए।

इस योजना द्वारा ग्राम्य समुदायोंको नए तरीके व प्रयोगों की जानकारी कराकर शिक्षित करना है। इस प्रकार विस्तारका कार्य शिक्षाका है। इस शिक्षा द्वारा ग्राम-जनोंको उनकी समस्याओंसे उन्हें अवगत करना है और उन्हें यह विश्वास दिलाना

है कि नव-निर्माणके लिए नए परिवर्तन आवश्यक हैं। इस प्रकार इस कार्यक्रमके द्वारा ग्राम-जनोंकी विचारधाराको रचनात्मक प्रणालियोंमें प्रवाहित करने और उनके विचारोंमें नव परिवर्तन कर उन्हें एक नवीन दिशामें नए प्रयासके लिए जुटाना है।

जिन शिक्षित युवकोंने भारतके सामाजिक-विकासके कार्यक्रमको अपनाया, उनका जीवन ही बदल गया। अतः प्रशिक्षण केन्द्रमें जनसेवाकी शिक्षा प्राप्त करनेवाले शिक्षित युवकोंको यह स्वीकार करना पड़ा कि उनका जीवन इस प्रकार बदल गया है कि उन्हें न तो किसी सरकारी पदकी आकांक्षा रही और न किसी बड़े मान सम्मानकी तथा धनी व बड़ा बनने की। वे तो इस जनसेवाकी शिक्षा द्वारा ग्रामीणोंमें अपनेको मिला देना चाहते हैं। वे ग्रामोंके मार्ग-दर्शक बने हैं। इन युवकोंने ग्रामीणोंके मनोविज्ञान, कृषि-विधियों, पशुपालन और ग्रामवासियोंकी आवश्यकताओंके सम्बन्धमें सैद्धान्तिक अध्ययन किया।

यह कार्यक्रम राष्ट्रव्यापी है। भारतके १७५०० ग्रामोंकी जनताको जाग्रत करेगा। सारी शक्तियां उसे सफल बनानेमें जुटी हुई हैं। असफलता और निराशा तथा बाधाओंके बीचमें भी यह प्रशिक्षण कार्य जारी रहेगा। अमेरिकाकी फोर्ड मोटर कम्पनीके 'फोर्ड फाउंडेशन' नामक कोषसे भारत सरकारके कृषि विभाग द्वारा विकास सम्बन्धी योजनाका कार्यक्रम संचालित होगा। इसके अन्तर्गत प्रत्येक सौ ग्राम पीछे विकास-कार्य और प्रत्येक सौ ग्राम पीछे प्रशिक्षण और विकास-कार्यके केन्द्र संचा-

लित होंगे। राज्यों द्वारा जिले-जिलेमें प्रशिक्षण केन्द्रोंकी स्थापना का आयोजन है।

इसके अतिरिक्त भारत अमेरिकनके सम्मिलित विकास कोपकी आर्थिक और टेक्नीकल सहायताके अन्तर्गत बुनियादी समाज विकास सम्बन्धी कार्यक्रम प्रति ३०० ग्रामोंके पीछे संचालनका आयोजन है। सौ ग्राम पीछे विकास सम्बन्धी तथा मिश्रित कार्यक्रमके दलोंकी रचना भिन्न-भिन्न रूपसे ग्रामोंमें रचनात्मक कार्योंको अग्रसर करेगी।

संसारके सभी प्रमुख देशोंकी तुलनामें भारतकी कृषि व्यवस्था बहुत पिछड़ी हुई है। आज भी इस देशमें खेती-बारीके वही पुराने तरीके प्रचलित हैं। कृषि सुधारके सम्बन्धमें विशेषज्ञों और वैज्ञानिकोंने अपने ग्रंथ और पत्रों द्वारा जो परामर्श दिए, वे सब आलमारियोंमें बन्द रहे, धरतीके लाल क्रियात्मक क्षेत्रमें उनका कोई उपयोग न कर सके। एक खेतिहर मजदूर और वैज्ञानिकके जीवनके मध्यमें गहरी खाई है।

स्थिति यह है कि देशमें एक ओर अधिक परिमाणमें वैज्ञानिक कार्य हो रहा है, जो कृषिके लिए बड़ा उपयोगी हो सकता है और जिसके व्यावहारिक परीक्षण हमारी प्रयोगशालाओंमें किए गए, दूसरी ओर ग्रामों और जिलोंमें कृषि-सुधारके प्रयत्न किए जाते हैं, किन्तु ये दोनों आज तक सम्मिलित रूपमें नहीं किए गए, उन दोनोंमें गहरी खाई कायम है, वे आपसमें नहीं

मिलते, दोनोंका लक्ष्य एक ही है, किन्तु फिर भी दोनों एक दूसरेसे फासले पर है।

देश विदेशमें भारतीय किसानोंके प्रति एक धारणा फैली हुई है कि वे बड़े कट्टर, अत्यधिक अनुदार और अप्रगतिशील हैं। उनमें नए विचारोंके ग्रहण करनेकी प्रवृत्ति नहीं है। वे नई फसल के संबन्धमें नए विचार, नए औजार, रासायनिक खाद और खेतीके नए उपयोगोंको नहीं करना चाहते। सामाजिक विचारों में भारतीय किसान भले ही पिछड़े हुए हों, किन्तु कृषिके कार्य सम्बन्धमें उनके सम्बन्धमें एक बारगी ही ऐसा नहीं कहा जा सकता। तथ्यों और अंकोंके आधार पर यह प्रकट है कि किसानोंने नए प्रयोग और साधनोंको अपनानेमें कितनी प्रगति-शीलता प्रकट की है। पर इस दिशामें उसके अधिक आगे बढ़नेमें अनेक आर्थिक रुकावटें हैं। वह यह जानता है कि अमुक नई फसल या अमुक नई खादसे उसे अंतमें लाभ होगा किन्तु उनके उपयोगके लिए उसके पास धन नहीं होता है। उदाहरण के लिए एक एकड़ जमीनमें ४९० सेर आलूके बीज चाहिए। इसके लिए उसे करीब ३०० रुपये तो बीजके लिए चाहिए, फिर नई खाद खरीदनेके लिए भी धन चाहिए, सो एकाएक वह इतनी पूंजी कहांसे लाए? उसके पास कृषि विस्तार सम्बन्धी भावनाएँ हैं, सूझ है, किन्तु वह धनसे रहित है और उसे कोई बेहतर देनेवाला नहीं है।

भारतीय किसान अशिक्षित होने पर भी अपने काममें

चतुर है, उसके सामने जो बात प्रकट की जाए, उसे वह भली-भांति समझता है और नए तरीके बतलाने पर वह उन्हें प्रयोगमें लानेके लिए तत्पर रहता है। यदि वह समझ जाए कि नए तरीकोंसे उसे लाभ होगा तो वह उन्हें अपनानेमें कभी पीछे नहीं रहेगा। अलबत्ता उसके पास साधन तथा सुविधाएँ होनी चाहिए। गन्ना, चावल, गेहूँ, दाल और तमाखू आदिकी नए ढंगसे उपज करनेमें अनेक भारतीय किसान आगे बढ़े। उन्होंने नई फसलोंमें अंग्रेजी शाकभाजी भी पैदा करना आरम्भ किया। अतः वह नए विचार और तरीकोंके अपनानेमें कदापि पीछे नहीं है। इस सम्बन्धमें सबसे बड़ी बात यह है कि किसानोंका विश्वास प्राप्त करनेके लिए हमें उनकी विचारधाराओंमें मिलकर आगे बढ़ना चाहिए। आजकी समस्या मानव, धरती और पशुकी है। हमें नए रूपमें इन तीनोंको हल करना है। पर हमारे तरीके आरम्भसे ऐसे हों कि हम उनका विश्वास प्राप्त करें। एक बार विशेषज्ञोंकी गलतियोंसे जब उनका विश्वास जाता रहता है, तब फिर उनमें नई धारणाएँ उत्पन्न करना सहज कार्य नहीं है। अक्सर देखा गया कि कृषि अधिकारियोंकी उपेक्षाओंसे गलतियाँ होती हैं। इन गलतियोंसे नए तरीके असफल होने पर ग्रामोंमें उनका बड़ा उपहास होता है। जिस समय उन्हें खाद आदिकी आवश्यकता हो, उस समय उसे वितरित न कर अन्य अवसरों पर उसका वितरण करना अनुपयुक्त है।

किसानोंकी कट्टरता, अनुदारता और अशिक्षा भारतीय

कृषिकी उन्नतिके मार्गमें इतनी बाधा स्वरूप नहीं है, जितनी कि उनके बीचमें काम करनेवाले शिक्षित प्रचारकोंकी कमी है। कृषिके धंधे में खेतोंमें काम करनेवालोंके लाभके लिए कृषि संबंधी शिक्षाके संबन्धमें नई कृषि पद्धतियोंसे उन्हें आकर्षक ढंगसे परिचित कराया जाए। उन्हें वे तरीके बतलाए जाएँ जिनसे उन्हें निश्चित लाभ हो। किसानोंकी शिक्षाका एक ढंग नहीं हो सकता, वयस्कोंकी शिक्षा अशिक्षित बालकोंसे जुदी होती है और ग्राम-पाठशालामें जानेवाले छात्रोंकी शिक्षा उनसे सर्वथा भिन्न होती है। इसलिए अशिक्षित वृद्ध और तरुणोंको शिक्षित करानेके लिए नई प्रणाली अपनाई जाए। वयस्क किसानके पास इतना समय नहीं होता है कि वह खेतका काम छोड़कर शिक्षा प्राप्त करे। इसलिए उसके अवकाशके समयका अधिकाधिक सदुपयोग किया जाए।

किसानको कृषि-सम्बन्धी व्यावहारिक शिक्षाके लिए बीस एकड़वाले फार्मके दो भाग किए जाएँ। उसके एक हिस्सेमें नए तरीकोंसे काम हो और दूसरेमें पुराने तरीकोंसे। दोनों ही हिस्सोंमें खेती सीरमें हो। इस आयोजनमें किसानोंको पूरी सुविधाएँ दी जाएँ। वे नए तरीके प्रयोगमें लाए जाएँ जो उस स्थानके लिए अधिक उपयुक्त हों और किसान जिनकी असानीसे पूर्ति कर सकें। दोनों हिस्सोंमें बराबर बराबर खेत तैयार किये जाएँ, और दोनों ओरके समान भागोंके खेतोंमें एक ही प्रकारकी फसल बोई जाए। किसानोंका एक दल दोनों भागोंके खेतमें

काम करे। इस दलको दो वर्ष तक काम करने दिया जाए। इस कालमें ये किसान नए तरीके अच्छी तरह सीख जाएँगे और अपनी आँखोंसे पुराने और नए तरीकोंका भेद जानेंगे। इसके उपरान्त फिर दूसरे दलको शिक्षाके लिए लिया जाए। इस व्यावहारिक प्रयोगसे किसान कृषि-कार्यमें अधिक निपुण बनेंगे। किसानोंके जो लड़के अशिक्षित हैं, उन्हें सरकारी खेतोंमें शिक्षा के लिए रखा जाए। वहाँ वे शिक्षा-कालमें उपार्जन भी करेंगे, क्योंकि किसान नहीं चाहते कि वे वेकार रहें। अतएव उनकी थोड़ी बहुत आयसे उन्हें सन्तोष रहेगा। सरकारी खेतोंमें उन्हें इतनी मजदूरी पर रखा जाए, जिससे कि उनके जीवन-निर्वाहका व्यय पूरा हो सके। धीरे-धीरे उनकी मजदूरीमें वृद्धि की जाए। वहाँ उन्हें कृषि-सम्बन्धी शिक्षा आरम्भसे अन्त तककी दी जाय। वे हरएक फसलकी लागत लगानेमें निपुण हों। यह बड़ा महत्व-पूर्ण कार्य है। अवकाशके समयमें उन्हें जमीन, खाद, फसलका बदलना और कीड़ों आदिके सम्बन्धमें उन्हें सरल रूपमें ज्ञान कराया जाए। दो वर्ष तक उन्हें खेतमें रखा जाना चाहिए।

पाठशालामें जानेवाले कृषक बालकोंको व्यावहारिक शिक्षा देनेके लिए समीपमें ही एक खेत होना चाहिए। छोटी-बड़ी सभी कक्षाओंके विद्यार्थियोंके लिए उनकी श्रेणीके अनुसार सुविधापूर्वक खेतका विभाजन किया जाए और हरएक वर्गके लड़कोंसे उनकी वयके अनुसार कार्य लिया जाए। ऊँची कक्षाओंके लड़कोंसे निश्चित कार्य लिया जाना चाहिए। खेतोंमें

काम करनेवाले छात्रोंको पुरस्कार दिये जाएँ। उन्हें सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दोनों प्रकारकी शिक्षा दी जाए। उनकी वार्षिक परीक्षा भी दोनों रूपमें हो। यह न हो कि बड़े लड़कों को जरासे छोटे खेतमें काम करनेको कहा जाए, यह कोई खेल तो है नहीं, बल्कि व्यावहारिक शिक्षा है, इसलिए उनकी शिक्षाके लिए काफी बड़ा खेत हो। इनमेंसे जो छात्र अधिक मेधावी हों और उच्च शिक्षा प्राप्त करना चाहते हों, वे नगरोंमें शिक्षाके साथ कृषि ज्ञान प्राप्त करें। वे मैट्रिकके उपरान्त कृषिमें बी० एस-सी० तथा एम० एस-सी० पास कर अपने ग्राम और जिलेके लिए उपयोगी बन सकते हैं।

ग्रामोंमें कृषि-सम्बन्धी प्रशिक्षणके प्रचारकी अत्यन्त आवश्यकता है। ग्राम-पुनर्निर्माणमें प्रचार-कार्यको प्रमुख स्थान मिलना चाहिए। प्रचार-कार्यमें मितव्ययिता करना अनुपयुक्त है। उपयुक्त प्रचारके लिए उपयुक्त धन चाहिए। अधूरा प्रचार करनेकी अपेक्षा उसका न करना ही श्रेयस्कर है। पर यह तथ्य है कि प्रचार-कार्यमें व्यय किया जानेवाला प्रत्येक रुपया सार्थक होता है। ग्रामका विकास होने पर इस धनका सदुपयोग प्रकट होता है।

प्रचार-कार्य प्रचार करनेवालेके व्यक्तित्व पर निर्भर है। यह एक टेकनीकल विषय है। यह किसानोंको संदेश प्रदान करता है। यह संदेश प्रभावपूर्ण हो, इस सम्बन्धकी टेकनिक और विशेष ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। अतएव ग्रामोंमें प्रचार करने

वाले व्यक्ति प्रचारके तरीके और टेकनिकमें पूर्ण सुदक्ष हों। तात्पर्य यह कि जहाँ प्रचारकमें ग्रामीणोंमें उनकी भाषामें अच्छी तरह वार्तालाप करनेकी योग्यता हो, वहाँ उसे अपने विषयका भी भलीभांति ज्ञान हो। इसके साथ ही उसे ग्रामकी उपयुक्त तथा अनुपयुक्त परिस्थितियों और ग्रामीणोंके मनोभावोंका ज्ञान होना चाहिए। उसकी बातचीत जोरदार और विश्वास उत्पन्न करनेवाली हो। ग्रामीणोंके साथ जीवन बितानेकी उसमें प्रवृत्ति हो और वह उनके सुख-दुःखमें भाग ले। उसके कार्य-कलाप ग्रामीणोंमें घुल-मिल जाने चाहिए।

ग्रामोंमें प्रचार-कार्यके अनेक साधन हैं, जैसे कि वायरलेस, सिनेमा, नाटक-अभिनय, संगीत-नृत्य, कवि सम्मेलन, पर्चे, पुस्तिकाएँ, पोस्टर, प्रदर्शनियाँ, सभाएँ, प्रदर्शन, समाचारपत्र आदि बीसों साधन हैं। ग्राम पत्रिकाएँ किसानोंके लिए बड़ी उपयोगी हैं। पंचायतों द्वारा उनका प्रत्येक ग्राम परिवारमें वितरण होना चाहिए। उनमें खेतीबारीके सुधारकी बातें हैं। उनमें विशेषज्ञोंके सरल भाषामें लेख दिये जाएँ।

ग्रामोंमें प्रचार सभाएँ उन गैरसरकारी व्यक्तियोंके नेतृत्वमें हों, जिनके प्रति उनकी श्रद्धा और सन्मान हो। पर साथ ही वे कृषि विषयके जानकार हों। इस सभाओंमें ग्रामके पंच भी भाषण दें। बीज और खाद आदि सभाओंमें संग्रह करके रखे जाएँ। यदि फसलका मौसम नजदीक है, तो उनका वितरण किया जाए।

सामुदायिक विकास योजनाके अन्तर्गत पंजाबसे मद्रास और आसाम तक सभी स्थानोंमें केन्द्र खुले हैं। इन केन्द्रों द्वारा ऐसे प्रचारक तैयार किए जा रहे हैं, जो ग्रामोंमें सभी काम करके दिखाएँ। ग्रामोंकी स्वच्छता किस प्रकार की जा सकती है, इसके लिए वे स्वयं झाड़ू लेकर सफाई करनेके लिए अग्रसर होते हैं। उन्हें श्रमका महत्व बताया गया कि श्रम कोई बड़ा छोटा नहीं है, वह सब बराबर है। किसी भी श्रमके करनेसे कोई व्यक्ति बड़ा-छोटा नहीं बनता है। इसलिए शारीरिक श्रम सभी समान हैं, चाहे वह झाड़ू झाड़नेका काम हो, या खेती करनेका अथवा कोई व्यापार आदिका काम—श्रमकी दृष्टिसे सब उच्च और समान हैं, सबमें समाजकी सेवा भावना निहित है। उनमें से किसी भी कामके करनेसे ऊँच-नीच नहीं बनता है।

ग्राम स्वर्ग कैसे बनें ?

सदियोंसे भारतके किसान जिस दलित जीवनमें रहे, उससे वे अकर्मण्य, निरुद्योगी, अगतिहीन, पराजय-मनोवृत्तियुक्त, भाग्यवादी, नए विचारोंके प्रति उपेक्षावादी, अनुत्तरदायी और आत्म-निर्भर तथा सहयोगपूर्ण जीवनसे सर्वथा पिछड़ गए। संसारके किसान कहाँ खड़े हैं और किस प्रकार अपना नव-निर्माण करनेमें आगे बढ़ रहे हैं, उनसे वे पीछे न रहें, यह चिन्तना भारतीय किसानोंमें कभी उत्पन्न न हुई। रूढ़ियों और संकीर्ण जीवन तथा व्यक्तिगत स्वार्थोंकी भावनाओंने उनमें नव-जीवनके अंकुर उत्पन्न न होने दिए। जब कि दूसरे देशोंके किसान अपने व्यक्तिगत अधिकारोंको छोड़कर अपने, अपने ग्राम और अपने देशके हितके लिए सहकार रूपमें आगे बढ़ रहे हैं, तब भारतीय किसान जमीनके एक-एक इञ्च टुकड़ेके लिए खूँरेजी करनेमें आज भी पीछे नहीं हैं। उनकी अवस्था इतनी गिर गई है कि वे अपना उद्धार स्वयं करना नहीं जानते, अपने प्रयत्नोंसे आगे बढ़ें और नए साधनोंको अपनाएँ, इससे वे कोसों दूर बने हुए हैं। अतः वे अपनी मुक्तिके लिए सदा दूसरोंकी ओर दृष्टि-पात करते हैं।

पर किसानोंकी यह अवस्था होनेपर भी हमारी दृष्टिसे उनकी अन्तर-निहित शक्ति ओझल नहीं हुई है। हम जानते हैं कि किसानोंमें गोपनीय रूपमें अतुल शक्ति भरी हुई है। वे

महान् शक्तिके भण्डार हैं। यदि उसका उचित उपयोग किया जाए तो किसान क्या नहीं कर सकते हैं, बिजलीकी लिफ्टसे भी आगे वे अपने नव निर्माणमें आगे बढ़नेकी शक्ति रखते हैं। उनकी शक्तिके द्वारा अद्भुत कार्य सम्पादित हो सकते हैं।

अपनी गिरी हुई अवस्थामें—ये ही तो किसान थे, जिन्हें न तो शिक्षा थी और न कोई राजनीतिक चेतना थी, जिन्होंने स्वार्थों और प्रलोभनोंको ठुकराकर अपने देशकी स्वतन्त्रताके लिए महात्मा गाँधीके नेतृत्वमें कौन-सा आत्मत्याग नहीं किया। उनके ही बलपर स्वराज्यका युद्ध लड़ा गया और देशने स्वतंत्रता प्राप्त की।

स्वतन्त्रता प्राप्त करनेपर किसान नवजीवनमें आए। कहना न होगा, आज वे अपने नव-निर्माणमें स्वयं ही जुट पड़े हैं। वे ग्रामोंकी जिन्दगी बदल देनेके लिए आगे बढ़ रहे हैं। उनमें यह भावना उत्पन्न हो गई है कि वे अपने ही साधन और शक्तियोंसे अपने ग्रामोंको सुन्दर और हराभरा बनाएँगे और उसे एक नया रूप देंगे। अनेक स्थानोंपर किसानोंने स्वयं ही साधन जुटाकर अपने ग्रामोंकी पक्की सड़कें बनाईं, नए मकान बनाए, झोपड़ियाँ दुरुस्त कीं और ग्रामोंमें स्वच्छताका जीवन पैदा किया। पर ये सब प्रयत्न जहाँ-जहाँ हुए, वहाँ उन्हें उत्तेजना देनी पड़ी। स्वेच्छापूर्वक वे किन्हीं स्थानोंपर आगे नहीं बढ़े। जहाँ वे अपनी प्रवृत्तियोंसे बढ़े, वहाँ उनके प्रयत्न सामूहिक रूपमें नहीं हुए।

किन्तु दक्षिण भारतके कई जिलोंके किसानोंने सामुहिक रूपमें जो कदम बढ़ाया, वह भारतीय किसानोंके लिए पथ-प्रदर्शक है। ये जिले आदर्श ग्राम पुनर्निर्माणमें सारे देशके लिए अनुकरणीय बन गये। कौन-सी ऐसी ग्रामीण समस्या है, जिसके हल करने में वे आगे न बढ़े हों। इन जिलोंके ग्रामोंमें प्रवेश करनेपर हर एक व्यक्तिके हृदयमें यह खयाल पैदा होता है कि क्या वह भारतके ग्रामोंमें विचरण कर रहा है। यहांके किसानोंके आगे उसका मस्तक नत हो जाता है, ये किसान नहीं देवता हैं, जिन्होंने इन ग्रामोंको स्वर्ग बना दिया। पर इधर अकेला एक ही जिला नहीं, उत्तरसे दक्षिण तक अनेक स्थानोंपर किसानोंका आश्चर्यमय निर्माण हो रहा है।

दक्षिण प्रदेशका प्रसिद्ध गांधीग्राम डिंडीग्रलसे दक्षिण और मदुराके उत्तरमें है। इस ग्रामने जो रचनात्मक कार्य किए, वे गांधीग्रामके ही बोधक नहीं हैं, प्रत्युत् ये सब भारतीय किसानों के प्रति दृढ़ विश्वास प्रकट करते हैं। ये वे ही किसान हैं, जो कल तक निष्क्रिय जीवन व्यतीत कर रहे थे, आज वे कठोर परिश्रम और सादे जीवनमें आगे बढ़ रहे हैं। यह ग्राम आत्म-निर्भर बन गया है। वह ग्राम-कार्यकर्त्ताओंका भी एक छोटा सा केन्द्र है। अतः भारतमें 'गांधी-ग्राम' शब्द उस आत्म-निर्भरताकी भावनाको व्यक्त करता है, जो धीरे-धीरे विकास पाते हुए १२७ ग्रामोंमें व्याप गई है।

गांधी-ग्राम एक सुधार प्रशिक्षण केन्द्रके रूपमें सामुहिक

योजनाका एक भाग है, जो विगत पांच वर्षोंसे ग्राम-निर्माणमें लगा हुआ है। इस ग्रामके निर्माण कार्योंकी छाप समस्त मद्रास प्रदेशपर तो पड़ेगी ही, किन्तु भारतके अन्य ग्राम भी उससे अपना निर्माण करनेमें मार्ग-दर्शन पाएंगे। यहांके किसानोंकी सात्विक वृत्ति, सहकारिता और जीवनका औदार्य देखकर सहसा यह प्रकट होता है, वे मानवताके पाथेय हैं।

गांधीग्रामके किसान राष्ट्रकी अग्नि परीक्षामें नवनिर्माणकी ओर अग्रसर हैं। युगावतारी महात्माकी ग्राम-भावनाओंको वे सजीव बनानेमें भारतके किसी ग्रामसे पीछे नहीं रहना चाहते वे पराजय जानते ही नहीं हैं। अनेक अड़चनें आने पर वे हताश नहीं हुए। वे अपने अपराजित, शंकारहित हृदयमें अपने समाजकी पीड़ा पहचाननेकी भावनाएं रखते हैं। वे सारे ग्रामके स्वार्थमें अपना स्वार्थ मानते हैं। ऐसी हैं उदात्त भावनाएं गांधीग्रामके किसानोंकी। वे महात्मा गांधीके सिद्धान्तोंकी प्रतिध्वनि बन रहे हैं।

यही कारण है कि आज देशमें गांधीग्रामका महत्त्व बढ़ गया है। जिन तरुण युवकोंने यहाँ ग्राम निर्माणकी शिक्षा प्राप्त की, वे कुशल नेता बनकर प्रदेश भरमें ग्राम-विकास-कार्यका प्रचार करनेमें लगे हैं। गांधीग्रामके किसान कार्यकर्ताओंका एक लोकतन्त्र संगठन है। उनका अपना मंत्रि-मण्डल है। उनका प्रधानमंत्री ग्राम सभाओं एवं अपने कैबिनेटके सदस्योंसे प्रायः विचार विनिमय करता है। वे सदैव यह अनुभव करते

हैं कि अमुक-अमुक ग्रामोंमें उनका ही शासन है और उसके निर्माण तथा व्यवस्थाकी सारी जिम्मेदारियां उन पर हैं। स्त्री और पुरुष सभी कार्यकर्त्ता इस प्रकार अद्‌भुत सजगता रखते हैं।

मंत्रिमण्डलकी बैठकमें एक सदस्य कहता है कि ग्रामके विद्यार्थी कामके विभाजनके सम्बन्धमें शिकायत करते हैं। खाद्य मंत्रिणीने प्रधानमंत्रीकी ओर देखकर कहा—अन्नकी व्यवस्था बड़ी चिंतनीय है। हमें उन प्रवृत्तियोंको नष्ट करना है, जिनसे किसानोंमें माल जमा करने और चोर बाजारमें ऊँचे भावोंमें बेचनेके दुर्गण उत्पन्न होते हैं। इसके बाद स्वास्थ्य और स्वच्छता विभाग, वित्त विभाग और कृषि विभागके मंत्रीगण अपने-अपने विचार प्रकट करने लगे।

इन मंत्रियोंने बताया कि मूँगफलीके खेतोंकी निराई और सिंचाई करनी है, ग्रामकी नालियां साफ करनी है, पशुशालाएँ साफ करनी हैं, शौचालय नए बनाने हैं। खादके गड्ढेको कूड़े करकटसे पाटना है। रसोई-घरकी व्यवस्था और मकानोंकी सफाई किसानोंको बतानी है। इस तालिकामें वे सभी काम हैं, जो भारतके सभी भागोंके किसानोंको करने पड़ते हैं तथा कुछ नए काम भी शामिल हैं।

इसके उपरांत मंत्रियोंने बताया कि गांधीग्रामके विभिन्न विद्यालय और कक्षाओंमें शिक्षा प्राप्त करनेवाले चुने हुए विद्यार्थियोंको ये काम सौंपे गए हैं। ग्राम-पंचायतोंके कार्यकर्त्ता भी

इनके साथ काम करेंगे। फिर कामके वितरणके सम्बन्धमें काफी वादविवाद हुआ और अंतमें सबको काम बांट दिया गया।

उसी दिन गांधीग्रामके कार्यकर्ता मण्डलके एक सदस्य जेम्बालवम नामक ग्रामके किसानोंको उनके नए कुएँके सम्बन्ध में आवश्यक बातें बता रहे थे। उनके सामने भी काम बांटनेकी समस्या थी। यहांके ग्रामवासियोंने यह निश्चित किया था कि सवर्ण हिन्दू और हरिजन दोनोंको ही समान रूपसे कुएँकी आवश्यकता है। वे इस बातपर सहमत हो गए थे कि कुएँके खुद जाने पर उसे उपयोगमें लानेका अधिकार सभीको समान रूपसे होगा। अतएव सवर्ण हिन्दू और हरिजन, दोनोंको मिल-कर कुंआ खोदना चाहिए। इस प्रकार कुआं खोदनेवाले ग्रामीणों की एक सूची तैयार की गई। इसके अनुसार सवर्ण हिन्दुओंको हरिजनोंके साथ कंधेसे कंधा मिलाकर काम करना पड़ा।

इस ग्रामके ही एक वयोवृद्ध किसानने कार्यकर्तासे सम्बोधित कर कहा—"बेटा, समय बदल रहा है, बुद्धिमानी इसीमें है कि हम अपनी नई जिंदगी बनानेमें पीछे नहीं रहें। पांच वर्षोंके सतत प्रयत्नसे १२५ ग्रामोंके किसानोंका जीवन ही बदल गया। अब उनके लिए यह आवश्यकता नहीं रही कि ग्रामके बाहरका कोई व्यक्ति आकर उन्हें यह बतलाए कि समय बदल रहा है। खास गांधीग्राम तथा इस इलाकेके अन्य ग्रामोंके सभी निवासी 'अपनी सहायता स्वयं करो' के सिद्धान्तको चरितार्थ करनेमें लगे हैं।

जिस प्रकार बट वृक्षकी शाखाओंसे लटकनेवाली जड़ें कालांतरसें तनेका रूप धारण कर लेती हैं, उसी प्रकार गांधीग्राममें होनेवाले रचनात्मक कार्योंका कार्य-क्षेत्र सारे प्रदेशमें बढ़ता जा रहा है। जिस समय उत्साही कार्यकर्ताओंने अपना कार्य प्रारम्भ किया था, गांधीग्राम एक वंजर प्रदेश मात्र था। लेकिन उनके अथक सतत् प्रयत्नोंके फलस्वरूप आज गांधीग्राम अनेक ग्राम-निर्माण कार्योंका केन्द्र बन गया है। गांधीग्राममें ऐसे स्थाई कार्यकर्ता भी हैं, जो भ्रमण नहीं करते, और वे हर समय अपना सम्पर्क १२७ ग्रामोंसे रखते है और उनकी आवश्यकताएँ पूरी करते हैं।

यह निर्माण-कार्य न तो सरकार द्वारा प्रारम्भ हुआ और न आगे भी सरकारका कोई सहयोग लिया गया। ग्रामीण कार्यकर्ता और ग्रामवासियोंके प्रयत्नोंकी सफलताका यह मूर्तिमंत रूप है। उनके कार्योंसे प्रभावित होकर इस योजनाके संचालन में—मदुरा और डिंडीग्रलके उद्योगपति सहायता देनेके लिए अग्रसर हुए। कस्तूरबा ट्रस्टने भी रचनात्मक कार्योंमें भाग लिया। ग्राम सेविकाओंको प्रशिक्षण देनेकी व्यवस्था ट्रस्टके अन्तर्गत हुई। उसकी व्यवस्थासे अस्पताल भी खोले गए। परिणाम यह हुआ कि सैंकड़ों ग्रामसेविकाएँ तैयार हुईं और वे सबकी सब सेवाकार्यमें जुट गईं। अनेक ग्रामोंकी चुस्त तथा उत्साही स्त्रियाँ—विधवाएँ और परित्यक्त पत्नियां भी आगे आईं। उन्हें शिक्षा दी गई, सेवाकार्यके लिए तैयार किया गया

और आज उनका जीवन ही बदल गया। अनाथ बालक जितने ग्रामोंमें मिले, वे सब एकत्र किए गए। उनके लिए अनाथालय नहीं खोला गया। अपितु उन्हें पढ़ा लिखाकर कृषिकार्यके लिए तैयार किया गया। ग्रामोंमें छोटे-छोटे धंधे उन्हें उनकी रुचिके अनुसार सिखाए गए।

सारांश यह कि गांधी-ग्राम ग्रामोंमें आत्मनिर्भरताकी भावना भर रहा है। उसका एक सबसे बड़ा सिद्धान्त सभी ग्रामोंके किसान नर-नारियोंमें आत्म-निर्भरताकी भावना कूट-कूट कर भरना है। गांधीग्राममें जाति, सम्प्रदाय या धार्मिक भेद-भाव नहीं किया जाता है। प्रत्येक ग्रामीण कार्यकर्ता गांधीग्रामके आदर्शपर आस्था रखता है और कठोर परिश्रम करनेके लिए हर समय तैयार रहता है। गांधी-ग्राम और इतर ग्रामोंके छात्र और अध्यापक छुट्टियोंके दिनोंमें ग्रामोंमें शिक्षा और स्वास्थ्यका प्रचार करते हैं। प्रत्येक वयस्क स्त्री-पुरुषको वे पढ़ना लिखना सिखाते हैं। वे सहकारी कृषि और सहकारी कारबारकी महत्ता बतलाते हैं। ग्रामोंमें स्वच्छता रखनेके लिए हरएक किसानको तैयार किया जाता है।

इस प्रकार गांधीग्राम ग्राम-सुधार कार्यका समस्त भारतमें अपने ढंगका एक ही केन्द्र है, जो किसानोंकी नई जिन्दगी गढ़ रहा है।

ग्राम गणतंत्रके निर्माणमें

भारतका वह एक स्वर्णिम काल था, जब ग्राम-ग्राममें स्वशासन विद्यमान था। प्रत्येक ग्राम लोकतंत्रका प्रतीक था। वह काल इतना महान था कि भारतके समस्त ग्राम स्वतंत्र गण-राज्य थे। प्रत्येक ग्राममें उस ग्रामकी सत्ता विद्यमान थी और उसकी अपनी ही विधि-व्यवस्था थी। इस प्रकार इस विशाल देशमें ग्रामोंका प्राधान्य रहा। ये ग्राम ही भारतीय सभ्यता और संस्कृतिके मूलाधार रहे। यहींसे ज्ञान-विज्ञान और कला कौशलका भी उद्गम हुआ था। ऋग्वेदमें जिस संस्कृतिका उल्लेख है, वह भारतीय ग्रामोंका ही दिग्दर्शन है।

इसके उपरांत इस देशमें युग पर युग बीते, और यहाँ की सभ्यता तथा संस्कृतिपर अनेकानेक प्रहार हुए, किन्तु वह सबको मिलाती और खपाती हुई विकसित हुई। उसके परिवर्तनके अनुसार देशका जीवन बदला, शासन व्यवस्थामें भी उलट फेर हुए और ग्राम भी जहाँके तहाँ नहीं रहे। किन्तु इतने पर भी यह कहा जायगा कि भारतीय समाजका मूलभूत ढांचा जो ग्रामवत तथा कृपिजन्य था, वह यथावत बना रहा। पिछले कालका भारतीय ग्रामोंका रूप लोकतंत्रीय रहा और ग्राम पंचायतें उसकी वीज मूल रहीं। ग्रामीण समाजकी समस्त गति-विधियों पर कोई विपरीत प्रतिक्रिया नहीं हुई। ये पंचायतें कल तक ग्रामोंकी सत्ताकी निर्देशक रहीं। जो लोग वाहरसे आए

और जिन्होंने भारतीय ग्रामोंका पर्यटन किया, उन्होंने यही देखा कि वे सर्व प्रभुता-सम्पन्न गण राज्य हैं।

यह सच है कि भारतमें महान् साम्राज्य भी कायम हुए, मौर्य साम्राज्य हुआ, गुप्त साम्राज्य हुआ और बादमें मुगल साम्राज्य भी आया। इससे कुछ सत्ता केन्द्रीभूत हुई; किन्तु ग्रामोंकी अपनी स्वतंत्रता अक्षुण्ण बनी रही। अंग्रेजोंने जो राज्य पद्धति कायम की, उसमें इस परम्पराको नहीं छेड़ा जा सका और उनके प्रायः एक शताब्दीके शासनमें कोई अधिक केन्द्रीयकरण नहीं हुआ, सिवा इसके शासन और सुरक्षामें सब दृष्टियोंसे पूरा नियंत्रण किया गया। पर १८५७ के स्वतंत्रताके युद्धके उपरान्त यातायातके साधनोंमें यकायक परिवर्तन हुआ और तब अंग्रेज-शासकोंका दृष्टिकोण भी बदला। इस बदलका परिणाम यह हुआ कि शासनके केन्द्रीयकरणकी ओर अधिकसे अधिक प्रवृत्तियां बढ़ीं।

पर कांग्रेसके नेतृत्वमें जिस राष्ट्रीयताका उदय हुआ, उसने केन्द्रीयकरणको रोका। सन् १९१९ के सुधारोंमें केन्द्रकी सत्ताका प्रान्तोंमें विकेन्द्रीकरणका सिद्धान्त स्वीकार किया गया। प्रान्तोंको यह अधिकार दिया गया कि वे केन्द्रके बिना निर्देशके अपनी स्वतंत्र नीति निर्धारित कर सकते हैं। इसके बाद सन् १९३५ के भारतीय विधानमें पूर्ण रूपसे प्रादेशिक स्वायत्तता स्वीकार की गई।

विधान सभाके सामने भारतके जिस नये विधानकी रचना थी, उसने तीन बातें स्वीकार की। पहले इन बातोंकी सूची

है, जिनके सम्बन्धमें कानून बनानेका अधिकार केवल केन्द्रीय शासनको है। राज्योंके कामकी सूचीमें राज्योंको कानून बनाने का अधिकार है। एक समान सूचीके नाम हैं, जिसमें केन्द्र और राज्य दोनोंको कानून बनानेके अधिकार हैं, पर शक्ति मूल रूपमें केन्द्रके आधीन है।

हमारे कथनका तात्पर्य यह है कि शासनके विकेन्द्रीकरणके द्वारा राज्योंको जो सत्ता प्राप्त हुई, उससे उनकी व्यवस्था स्वतः आमूल बदली। इन प्रदेशोंकी सत्ताका भी पुनः विकेन्द्रीकरण हुआ और ग्रामोंको नागरिकता और स्वशासनके अधिकार प्राप्त हुए, जिससे कि वे प्रारम्भिक आवश्यकताएँ स्वतः पूरी कर सकें। यदि ग्राम इन अधिकारोंका उपयोग पूरा करें और अपना सामाजिक तथा आर्थिक व्यवस्था नए रूपमें परिणत करें तो वे स्वयं ही अपने लिए सर्वोपरि सत्ताके केन्द्रीभूत बन सकते हैं। उस अवस्थामें न केवल राज्य प्रत्युत केन्द्र तकको उनकी ओर झुकना पड़ता है। पर यह तभी संभव है, जब कि ग्रामोंका सामाजिक और आर्थिक जीवन उच्चतर हो, लड़ाई-झगड़े और उपद्रव न हों, और जो भी हों, वे सब ग्रामोंमें तय हो जाएँ, तथा ग्राम-आर्थिक-स्रोतोंका ग्राम पूर्ण उपयोग करें।

इस दिशामें उत्तर-प्रदेशने सर्वप्रथम कदम बढ़ाया। उसने ग्राम-ग्राममें पंचायतोंकी नींव डाली और पंचायत राज्य कानून स्वीकृत किया। इस कानूनके द्वारा राज्यने ग्रामोंको बहुत-सी जिम्मेदारियाँ प्रदान कीं। यदि इस प्रयोगमें ग्राम पंचायतें

सफल हुईं, जिस लक्ष्यसे उनका संगठन है, यदि प्रत्येक ग्रामके कार्यकर्त्ता और ग्रामकी जनताने अपना नवनिर्माण किया, अनुशासनपूर्ण और एक्यताका जीवन उत्पन्न किया, तथा ग्रामके कार्योंको सर्वथा नवीन रूप दिया, तो ये संगठन सफल हुए माने जाएँगे। इस अवस्थामें ग्राम पंचायतें महान् शक्ति प्रकट होंगी और तव वे राज्य तथा केन्द्रकी आश्रित न रहेंगी ; वल्कि राज्य तथा केन्द्र शक्ति पानेके लिए उनकी ओर दृष्टि डालेंगे। अब ग्रामोंपर जिम्मेदारी है कि वे इस प्रयोगको सफल कर दिखाएं।

उत्तर प्रदेशके उपरान्त अन्य राज्य भी ग्रामोंको सत्ता देनेके लिए आगे वढ़े। किसानोंमें नव जागरणकी लहर फैल रही है। उनके अपने संगठन कायम हो रहे हैं। नगर, जिला, राज्य और केन्द्रमें किसानोंका नेतृत्व हो, इस दृष्टिसे किसानोंके राजनीतिक दलोंका संगठन हो रहा है।

पंजाव राज्य भी उत्तर प्रदेशके समान अपनी शक्तिके विकेन्द्रीकरणकी ओर अग्रसर है। उसका सन् १९५२ का गाँव पंचायत विधेयक ग्राम पंचायतोंको सर्वाधिक अधिकार प्रदान करता है। उत्तर प्रदेशकी पंचायतोंको जुडीशियल और शासन-सम्वन्धी अधिकार प्राप्त हैं। पंजावकी पंचायतें भी नए कानूनसे इन अधिकारोंको हस्तगत कर रही हैं। पंजावकी ग्राम पंचायतें जिला वोर्ड और म्युनिसिपैलिटीके भी अधिकार किन्हीं अंश तक उपयोग करेंगी।

ग्राम पंचायतोंकी व्यवस्थाके लिए धनकी आवश्यकता होना

स्वाभाविक है। केवल उनके संचालनके लिए ही नहीं, प्रत्युत् उनकी विविध प्रवृत्तियाँ भी धनकी अपेक्षित रहती हैं। उत्तर प्रदेशकी राज्य सरकार पंचायतोंको प्रति वर्ष भारी आर्थिक सहायता देती है। पंचायतोंका अस्तित्व प्रभावमूलक नहीं होता है, यदि वे ग्रामकी अवस्थाका सुधार न करें। ग्रामकी सड़कें, ग्रामके मैदान, कुएं, तालाब, नालियाँ, सफाई और स्वच्छता, पीने और नहानेके लिए जलकी व्यवस्था, श्मशान, संगठन कार्य, उत्सव-समारोह, खेतीवारीके पशुओंका सुधार, ग्राम-उद्यान, बागवानी, खेल-कूद और व्यायाम, वाचनालय, पुस्तकालय, प्राथमिक विद्यालय, कृषि, उद्योग और व्यापार शिक्षणकी पाठशालाएँ, कृषि-विकास, ग्राम उद्योग-धन्धे, सार्व-जनिक स्थानोंका सुधार और व्यवस्था, सार्वजनिक उपयोगके भवन, मातृभवनकी व्यवस्था, बाल-रक्षणगृह, बीज-भण्डार, खाद-भवन, सहकारी विक्रय-संघ, सहकारी ऋण-संघ, आदि सभी व्यवस्थाके कार्य ग्राम-पंचायतके अन्तर्गत आते हैं। यदि ग्रामीण जनता सजगता धारण करे, एकता कायम करे और सम्मिलित रूपसे सुधारकी ओर बढ़े तो वह अपने ग्रामका जीवन बदल सकती है। तब ग्राम किसीके आश्रित न रहेंगे और एकता तथा सहकारितामें—भाई-भाईके जीवनमें झगड़े-टंटे और कलह, मार-पीट, खूरेंजी आदि सब मिट जाएँगी। पंचायतोंको अदा-लती अधिकार भी किसी सीमा तक प्राप्त हैं। वे दण्ड देने और जुर्मानाका भी अधिकार रखती हैं। उत्तर-प्रदेश राज्यने अपनी पंचायतोंको न्याय-सम्बन्धी विशेष अधिकार प्रदान किए हैं।

जमींदारी प्रथाके उन्मूलनके कारण हरएक किसानका सम्बन्ध जमीनका लगान चुकानेके मामलेमें सीधे राज्यसे कायम हो गया है। अतः यह भार पंचायतोंपर पड़ा कि वे किसानोंसे लगान वसूल करें। इसप्रकार उनके अधिकारमें एक ओर जहाँ राजस्वके वसूल करनेकी सत्ता आती है, वहाँ दूसरी ओर व्यवस्था भी है। इस प्रकार शासनके मूल तत्व इन पंचायतोंको प्राप्त होते हैं। यदि वे इनके उपयोगमें अधिक बल प्राप्त करें, तो वे ऊपरी सत्ताको अपनी माँगोंके लिये झुका सकते हैं। इस प्रकार सत्ता केन्द्रके अधिकारसे निकलकर प्रत्येक ग्राम-ग्राममें विकेन्द्रित होती है। पर यहाँ तक पहुँचना और शक्ति अर्जन करना ग्रामोंके अग्रसर होनेपर निर्भर है।

ग्राम पंचायतें सभी प्रवृत्तियोंको एक बारगी ग्रामोंमें आरंभ नहीं कर सकती हैं, क्योंकि उन सबके लिए धन तथा साधनकी आवश्यकता है। किन्तु बुनियादी रूपमें शिक्षा, स्वास्थ्य, याता-यात और कृषि-सुधारके कार्योंको हाथमें लिया जा सकता है। पर पंजाबमें पंचायतें अपने कार्योंके लिए कर लगा सकेंगी। अभी जिलाबोर्ड आदि जो कर वसूल करते हैं, वे ग्राम-पंचायतोंके हाथमें आएँगे। 'कृषि-लाभ कर' वस्तुतः ग्राम-निर्माणमें ही व्यय होना चाहिए। पंजाबमें हरएक ग्राम जितना धन स्वयं संग्रह करेगा, उसका ७५ प्रतिशत भाग राज्य-सरकार देगी। जिन ग्रामोंमें साम्यवादी तथा अन्य उग्रदलोंका प्रभाव होगा, वहां राज्य सरकारें तुरन्त ही ७५ प्रतिशत सहायता देंगी। ग्राम-सत्ताका रूप इसप्रकार है :—

राज्य-मंत्रिमण्डल की विकास समिति
प्रादेशिक विकास अधिकारी और विकास-मंत्री
राज्य-विकास बोर्ड
प्रत्येक डिवीजनका एक प्रतिनिधि
डिवीजन पंचायत [१००० ग्रामोंकी]
जिला—पंचायत [२००० ग्रामोंकी]
जिला विकास अधिकारी [एक]
जिला विकास अधिकारी
वर्तमान जिला बोर्डके स्थानपर विकास संबंधी अन्य कार्योंके सहित
तहसील विकास अधिकारी [चार]
तहसील पंचायत [५०० ग्रामोंकी]
ग्राम-विकास संगठन-कर्त्ता [२०० प्रत्येक जिलेके लिए]
ग्राम पचायतकी व्यवस्थापक समिति, न्याय समिति कृषि समिति, सहकारी क्रय-विक्रय समिति, ग्राम उद्योग समिति और ग्राम मजदूरीकी समिति, स्वास्थ्य, स्वच्छता और शिक्षा तथा संस्कृति समिति
हल्का पंचायत [१० ग्रामोंकी]
ग्राम पंचायतका रूप

उत्तर-प्रदेश और पंजाव दोनों राज्योंमें पंचायतोंके संगठन, व्यवस्था, और कार्य संचालन तथा अधिकारोंके संवन्धमें 'पंचायत-कानून'में पूर्ण निर्देश हैं। पंचायत-कानून ग्राम-अधिकारोंके वास्तविक प्रतीक हैं और ग्राम-व्यवस्थाके लिए उनका उपयोग अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। वे ग्राम सत्ताको प्रकट करते हैं। ५०० के आवादी वाले हरएक ग्राममें पंचायत है। जिन ग्रामोंमें आवादी थोड़ी है, वहां कई ग्रामोंको मिलाकर पंचायतका संगठन हो सकता है। पर पर्वतीय भागोंमें जन-संख्या थोड़ी होने पर भी पंचायतका संगठन हो सकेगा। राज्य-सरकारके पंचायत विभाग द्वारा ग्राम-पंचायतोंका नियंत्रण और व्यवस्था होगी। पंचायतोंके संचालन उपयुक्त ढंगसे हो, उनमें कोई गड़वड़ न हो, इसलिए उनके विरुद्ध होनेवाली शिकायतों पर राज्य पंचायत विभाग तुरन्त ध्यान देगा।

वालिग मताधिकारके द्वारा पंचायतोंका निर्वाचन होगा। उत्तर-प्रदेशके ग्रामोंमें इस अधिकारका उपयोग होने पर अनेक अछूत जातिके व्यक्ति सरपंच और पंच वने, और सवर्ण किसान भी पूर्ण सहयोगसे उनके साथ कार्य करनेके लिए आगे वढ़े। पर जहां हरिजन अल्पमतमें हों, वहां उनकी जनसंख्याके आधार पर उनका प्रतिनिधित्व सुरक्षित रहेगा। पंजावमें यह संरक्षण दश वर्षोंके लिए प्रदान किया गया है। पंचायतकी अदालतमें फौज-दारी तथा दीवानी मामले किस हद तक फैसलेके लिए पेश किए जाएँगे, इस सम्वन्धके विस्तृत अधिकार पचायतोंको दिए

गए हैं। आवश्यकता यह है कि जो मामले पंचायतोंकी सत्ताके बाहर भी हों, वे भी आरम्भमें पंचायतके रेकार्डमें आएँ। इससे वर्तमान झूठ-सच, जालफरेब और धोखाबाजी बहुत कम होगी। काम सचाईसे होनेपर लोगोंका जीवन स्तर उच्चताको प्राप्त होगा।

ग्राम-पंचायतोंके कानून और उनकी सत्ता तथा अधिकार शासनके विकेन्द्रीकरणका पहला कदम है। यदि ये पंचायतें अपने कार्योंमें सफल हुईं तो उन्हें यह सहजमें अधिकार होगा कि वे राज्य सरकारसे नए अधिकारोंकी मांग करें। कौन उनकी मांगको रोक सकेगा? इस प्रकारके उत्तरोत्तर प्रयत्नों द्वारा यह आशा की जा सकती है कि निकट भविष्यमें भारतीय ग्रामोंमें पुनः अतीत काल आ सकता है, जब कि ग्राम स्वतन्त्र गणतन्त्र राज्य थे। इससे महात्मा गांधीके आदर्शोंकी पूर्ति होगी।' इस आदर्शकी सफलताजनक-पूर्तिमें राष्ट्रके भविष्यकी महान आशाएँ अन्तर-निहित हैं।

भारतीय किसानोंकी क्षमता

भारत एक कृषि प्रधान देश है। वह अति प्राचीन कालसे सदा धनधान्यसे परिपूर्ण रहा। उसके प्राङ्गणमें घी-दूधकी नदियां वहीं। कृषि और गोपालन भारतीय जीवनमें सर्वश्रेष्ठ माना गया। गौ और बैल भारतकी अतुल सम्पति, वैभव और सजीवताके प्रतीक प्रकट हुए। यही कारण है कि भारत ग्रामोंमें बसा है। इन्हीं ग्रामोंमें भारतकी सभ्यता, संस्कृति और शिक्षा का विकास हुआ। यहींसे अखिल विश्वमें ज्ञानकी रश्मियां फैलीं। यही नहीं, ये ग्राम उद्योग-धंधे तथा कला-कौशलके भी केन्द्र बने जिनकी अद्भुत प्रगतिसे सारा संसार चकित हो गया था। उस कालके विदेशी व्यापारसे संसारकी धन-राशि भारतमें ढुई हुई चली आती थी।

पर कालान्तरमें भारतका प्राचीन वैभव नहीं रहा। लगातार विदेशी आक्रमणोंके कारण भारतके ग्राम उजड़ गए और निर्जीव बन गए। उनका सुख और आनन्द नहीं रहा। उनकी श्री हत-प्रभ हो गई। दीर्घ-कालीन अंग्रेजी शासनमें भारतके ग्रामोंका केवल ढांचा रह गया। यद्यपि भारतकी जनसंख्याका ६० प्रतिशत भाग ग्रामोंमें बसा रहा, तथापि अशिक्षा, अज्ञान, दीनता और शोषणके कारण उनका उत्तरोत्तर ह्रास हुआ। ग्रामका किसान समयकी गतिके अनुसार आगे पैर न बढ़ा सका। विकाससे वह कोसों दूर रहा। वह साधारण-सा हल और

पुरानी बैलगाड़ी बनी रही, जो ईसासे तीनहजार वर्ष पूर्व मोहन-जोदारोंके समयमें चलती थी। अंग्रेजी शासनमें परिस्थितियाँ ऐसी थीं कि उनकी उपज उनके आगेसे छिन जाती थी। किसान अर्द्धनग्न रहते और एक बार जैसा-तैसा मोटा अनाज खाकर जीवन-यापन करते थे। समाजका वह अंग जो सोना पैदा करे और फिर भी विभुक्षित अवस्थामें रहे, यह कैसी संतापपूर्ण अवस्था थी।

इस अवस्थामें भी भारतीय कृषक समुदाय शांत रहा। उसने अपने इस उत्पीड़ित जीवनसे मुक्त होनेके लिए कोई विद्रोह नहीं किया। इतनेपर भी विदेशी शासन और जमीनपर अधिकार रखनेवाली शक्तियाँ कितने किसानोंका विनाश न कर सकीं? पर अपने अज्ञानके कारण न तो उनमें कोई चेतना थी और न संगठन था, बल्कि आध्यात्मिकताके कारण वे जैसे-तैसे जीवनमें रहने ही में सन्तोष मानते थे। इस भावनाके कारण जमीनके स्वामियों और धनपतियोंने उनका हर प्रकारसे शोषण किया। पैदावार वे करते और उसका उपयोग जमींदार और व्यापारी करते। उनका जीवन तो लकड़ी काटने और पानी भरनेवालेके समान था।

उन कारणोंकी संख्या कम नहीं थी, जिनके भारतीय कृषक शिकार हुए। भारी लगान, करोंका बोझ, महाजनोंके ऋण और बेगारने उनकी पीठ तोड़ दी। सरकार और जमींदारोंका ध्यान केवल मालगुजारी वसूल करना और व्यवस्था कायम

रखना ही था। उनकी खड़ी फसलें खरीद ली जातीं। लगान चुकानेके बाद जो कुछ पैदावार बचती वह महाजनके घर चली जाती। बेचारा कृषक कैसे वर्ष व्यतीत करता, उसकी कहानी बड़ी दर्दनाक है। ऐसी स्थितिमें अच्छी सिंचाई, खाद और विकासके अन्य साधनोंका उपयोग उपज बढ़ानेके लिए कब सम्भव था। अच्छे मार्ग, चिकित्सालय और विद्यालयोंसे लाभ उठानेमें ग्रामोंकी जनता सर्वथा वंचित थी। उनके उपयोग करनेका अधिकार तो नगरमें बसनेवालोंके लिए था। सरकार की उपेक्षणीय नीतिके कारण ग्रामोंकी कठिनाइयाँ दूर करनेकी ओर कभी कोई ध्यान नहीं दिया गया। नगरमें रहनेवालोंके लिए शिक्षाकी व्यवस्था होनेके कारण उनकी गाँववालोंपर प्रधानता कायम हुई। यही कारण है कि नगरका जीवन ग्रामोंसे इतना आगे बढ़ गया।

परन्तु एक दिन सबके भाग्य जागते हैं। भारतके राजनीतिक क्षेत्रमें महात्मा गांधीने अवतीर्ण होकर भारतीय कृषकोंमें नव जागरण उत्पन्न किया। उनमें अप्रतिम साहसका संचार किया और उन्हें अपने स्वत्वोंका भान कराया। भारतके दीन-हीन कृषकोंके जीवनके महात्मा गांधी स्वयं प्रतीक बन गए। गांधीजीने साधु और महात्मा बननेकी आकांक्षासे नहीं, प्रत्युत् अपनेको किसानोंका प्रतीक प्रकट करनेके लक्ष्यसे लंगोटी धारण की। उन्होंने अपने इस वेशसे संसारको प्रकट किया कि ग्रामोंमें बसनेवाली भारतकी ९०प्रतिशत जनताकी यह अवस्था है।

गांधीजीने किसानोंके जीवनमें आग पैदा की। उन्होंने कोटि-कोटि किसानोंमें निर्भयता और निडरता उत्पन्न की। यही कारण हुआ कि गांधीजीके नेतृत्व द्वारा भारतीय कृषकोंके जीवनमें एक शान्तिमय क्रान्ति हुई। जो किसान जमींदार और अधिकारियोंसे भय खाते थे, वे उनका मुकाबला करनेके लिए तैयार हुए। अपने दयनीय जीवनके प्रति उनमें घृणा उत्पन्न हुई। वे उससे छुटकारा पानेके लिये ऊबसे उठे। उन्होंने यह भली-भाँति अनुभव किया कि उनका भाग्य देशकी स्वतन्त्रताके साथ जुड़ा हुआ है। उन्होंने स्वतन्त्रताके आन्दोलनका साथ दिया। कांग्रेसने भी प्रतिज्ञा की कि स्वतन्त्रता प्राप्त होनेपर देशमें जमी-दारियाँ खत्म कर दी जाएँगी। किसान जमीनके मालिक होंगे। देशका शासन उनका अपना होगा। स्वतन्त्र भारतमें किसान और मजदूरोंका राज्य होगा। फिर क्या था, सच्चे, ईमानदार किसान स्वतन्त्रताके युद्धके महान् शक्तिशाली अङ्ग बन गए। वे सोने चांदीके टुकड़ोंसे कब खरीदे जा सकते थे। वे तो उनके लिए कंकड़-पत्थरके समान थे।

संसार हैरान हो गया कि अशिक्षित किसानोंमें कैसी जबर्दस्त राजनीतिक चेतना उत्पन्न हुई। उन्होंने कोसों नंगे पैर चलकर और चने खाकर निर्वाचनमें कांग्रेस प्रतिनिधियोंको जमींदारोंके विरोधमें मत दिए। करोड़ों किसानोंने इस निर्वाचन में जमींदार और अधिकारियोंकी घुड़कियाँ और अत्याचारोंकी जरा पर्वाह नहीं की। बारदोलीमें किसानोंने अपने संगठन और

दृढ़ निश्चयका जो परिचय दिया, उसे देखकर विदेशी सत्ताको अनुभव हुआ कि अब वह इस देशमें न टिक सकेगी।

स्वतंत्रताके आखिरी युद्धमें किसानोंने जो विद्रोह किया वह भारतीय स्वतंत्रताके इतिहासकी अमर घटना है। स्वतंत्रताकी प्राप्तिमें किसानोंका सर्वोपरि भाग है। किसानोंका जीवन स्वतन्त्रता प्राप्तिमें मुख्य साधन बना। गांधीजीने कृषक वेश भूषामें अपना जीवन व्यक्त किया और वह भारतका लड़ाका योद्धा सरदार वल्लभ भाई पटेल बैरिस्टर, महान् राजनीतिज्ञ और राष्ट्रका अग्रगामी नेता होने पर भी अपनेको किसान प्रकट करनेमें सदा गौरवान्वित हुआ।

कांग्रेसने प्रादेशिक धारा सभाएँ और केन्द्रीय शासनमें जबसे प्रवेश किया, उसका लक्ष्य किसानोंका हित रहा। अंग्रेजों के रहते-रहते भी कांग्रेसी प्रतिनिधियोंके प्रयत्नोंसे धारा सभाओं द्वारा किसानोंके सम्बन्धमें अनेक कानून स्वीकृत हुए। जहाँ उन्हें ऋणसे मुक्त किया गया, वहाँ जमीन पर उनके अधिकार, बेदखली और लगान आदिके सम्बन्धमें अनेक कानून स्वीकृत किये गए। इन सुधारोंसे किसानोंके जीवनमें एक बारगी परिवर्तन हुआ। ग्रामके महाजन और जमींदार दोनोंके प्रहारोंसे उन्होंने राहत पाई।

स्वतन्त्रता प्राप्त होने पर कांग्रेसने जमींदारी उन्मूलनका कार्य हाथमें लिया। देशकी नाजुक अवस्था होने पर भी कांग्रेसी शासनने इस ओर दुर्लक्ष नहीं किया। उत्तरप्रदेश बिहार और

मध्यप्रदेश जमींदारी उन्मूलनमें आगे आए। भारतीय विधानके निर्देशनके आधार पर मुआवजा देकर जमींदारी विनाशके कानून विहार, मध्यप्रदेश और उत्तरप्रदेशमें स्वीकृत हुए। किन्तु इस बीचमें जमींदारवर्ग किसानोंका हितैषी बना और उसने यह प्रचार किया कि जमींदारी प्रथाके विनाशसे किसानोंका कोई हित न होगा। किसानोंका हित जमीदारोंके हाथमें सुरक्षित है। पर वह ताशका किला समयके पूर्व ही ढह गया। नए निर्वाचनमें जमींदारोंको मत न देकर यह बता दिया कि अब वे स्वयं अपने भाग्यके निर्माता है। जमींदारोंकी कानूनी अड़चनें भी कारगर न हुईं। विधानमें जो कुछ कमी थी, वह दूर की गई और सर्वोच्च कार्यालय द्वारा जमींदारी विलीन संबंधी कानून वैध घोषित हुआ। इस दिशामें उत्तरप्रदेश सबसे आगे रहा। बिहार और मध्यप्रदेशमें भी जमींदारियोंका अंत हुआ। बंगाल और आसाम भी इस प्रथाको मिटानेमें आगे बढ़े। पंजाब और पटियाला राज्य संघके अतिरिक्त रियासती संघोंमें राजस्थान, मध्यभारत और सौराष्ट्र आदिमें जमींदारियाँ आखिरी साँसें लेने लगीं। इस प्रकार समस्त भारतमें करोड़ों किसान जमीनके मालिक बने।

किसान स्वयं अपने पैरोंपर खड़े होंगे

ग्रांड ट्रँक रोडसे ३॥ मीलकी दूरी पर अवस्थित परवा ग्रामके बच्चे तक यही शब्द कहते सुनाई देते हैं। परवा एक मामूली गांव नहीं है। वहां नगरसे दूर बंजर भूमि पर बसे ३५ शरणार्थी परिवार यह सिद्ध करनेका प्रयत्न कर रहे हैं कि उन्होंने सहकारी प्रयत्नोंके रूपमें देशकी समस्याओंका नया उत्तर पा लिया है।

उन्होंने स्वयं अपने प्रयत्नोंसे, और सरकारसे थोड़ीसी मदद लेकर, एक सहकारी समितिकी स्थापना की है। जमीनसे लेकर घर और ट्रैक्टर तक उनकी प्रत्येक वस्तु समितिके सदस्योंकी संयुक्त मिल्कियत है और वे जो भी काम करते हैं, उनमें सभी लोग हाथ बँटाते हैं। उनका उद्देश्य एक ऐसे आदर्श समाजकी स्थापना करना है, जो इस बातका ज्वलंत उदाहरण बन सके कि यदि भारतीय लोग मिलकर और अपने साधनों तथा शक्तिको संगठित करके काम करें तो वे क्या नहीं कर सकते हैं।

अन्य अनगिनत शरणार्थियोंकी तरह परवा ग्रामके इन निवासियोंको भी १९४७ में पाकिस्तानसे निष्क्रमणके समय अपना सब सामान और धन अपने पूर्व गांवोंमें ही छोड़ देना पड़ा था। किन्तु उन्होंने पुनर्वासके लिए भारत सरकारकी ओर मुंह नहीं ताका। इसके विपरीत, उन्होंने पेप्सू सरकारके समक्ष

एक ऐसा परीक्षण करनेका सुझाव रखा, जिससे लगभग २०० व्यक्ति एक संयुक्त परिवारके रूपमें रह कर काम कर सकें।

अप्रैल १९५० में, पेप्सू सरकारने उन्हें ४०,००० रुपयेका ऋण और परवाके परित्यक्त ग्रामके आसपासकी ५६५ एकड़ भूमि प्रदान की। जब इन शरणार्थियोंने उस ग्राममें प्रवेश किया, वह बिल्कुल खण्डहर पड़ा था और भूमि बंजर थी।

आज वहां मिट्टीकी ढहती दीवालोंकी जगह इंटोंके नए पक्के मकान खड़े हैं, एक स्कूल, एक जनरल स्टोर्स; औजारोंका एक कारखाना और अनेकों बाड़े खुल चुके हैं। गांववालोंके पास १ ट्रैक्टर, १ कुट्टी काटनेकी मशीन, ४ जमीनसे पानी निकालने के इंजन, ३५ बैल, १३ भैंसे, २ गाएँ तथा ७ अन्य पशु हैं। जमीनमें कपास, मक्का और गन्नेकी अच्छी फसल होने लगी है।

किन्तु यह परिवर्तन और प्रगति सरलतासे नहीं हुई। धनाभावके कारण वे लोग अभी बहुत कम जमीनको उपजाऊ बना पाए हैं। उनकी अब तककी सफलता बहुत धीरे-धीरे हुई है और उन्हें विकासके लिए अभी बहुतसी मशीनों तथा अन्य सामग्रीकी आवश्यकता है। इसके अलावा वे जिस जीवनका परीक्षण कर रहे हैं, उसमें भी उन्हें कई बार परिवर्तन करने पड़े हैं।

परवा ग्रामकी सारी व्यवस्था ४ व्यक्तियोंकी एक पंचायत द्वारा की जाती है। लोगोंमें काम बांटना, उत्पादन-सामग्रीको बेचना, माल खरीदना, बच्चोंके लिए शिक्षाकी व्यवस्था करना

और ग्राममें व्यवस्था तथा अनुशासनको बनाए रखना सब इसी पंचायतका काम है।

प्रारम्भमें, पंचायतने सब ग्रामवासियोंके लिए एक ही लंगर चालू करनेका प्रयत्न किया। इससे उसका उद्देश्य समयकी बचत करना था ताकि प्रत्येक पुरुष अपना सारा समय खेतोंमें लगा सके और स्त्रियां पहिनने और बेचनेके लिए कपड़ा बुन सकें। किन्तु एक लंगरमें भिन्न-भिन्न रुचिके लोगोंके लिए भिन्न-भिन्न पदार्थ तैयार करना सम्भव नहीं था, अतः बादमें इस प्रयत्नको छोड़ दिया गया।

दूसरा परिवर्तन शादियोंके बारेमें था। पहले यह निश्चय किया गया कि किसी शादी पर १०० रुपएसे अधिक व्यय नहीं किए जायेंगे और न कोई दहेज दिया जाएगा। ग्रामवासियोंकी एक सभामें यह विचार व्यक्त किया गया कि परिवारके निजी मामलोंमें इस प्रकारका हस्तक्षेप करना उचित नहीं है। इस पर पंचायतने शादीके मामलेमें सबको स्वतन्त्रता दे दी।

किन्तु वर्तमान परिस्थितियोंमें परवा ग्रामके निवासियोंने जो परीक्षण किया है, उसमें वे अब तक पर्याप्त सफल रहे हैं। ग्रामके मुखिया परस्तीश सिंहने बताया "मेरे सब आदमी मुझसे प्यार करते हैं और मैं उनसे प्यार करता हूं। वे मेरी बात मानते हैं, मैं उनकी बात मानता हूं। वे मेरे लिए और मैं उनके लिए काम करता हूं। यद्यपि देखनेमें हम अनेक हैं, पर असल में एक हैं।"

भोर होते ही, परवा ग्रामके पुरुष खेतोंमें चले जाते हैं और स्त्रियाँ चर्खा कातने बैठ जाती हैं। ३६ बच्चे सुबहका समय ग्रामकी पाठशालामें बिताते है और बादमें उन्हें मवेशियोंको नहलानेका और उनकी देखभाल करनेका काम सौंपा जाता है।

तीसरे पहर पुरुष तो कुछ घण्टे ग्राम सुधारका काम (यथा नई इमारतें बनाना) करते हैं और स्त्रियाँ शामका खाना अथवा घरका अन्य काम करती हैं। रातको लोग एक जगह बैठकर आपसी समस्याओं पर विचार करते हैं, गाना गाते हैं और रेडियो सुनते हैं।

सहकारी स्टोर गाँवकी हलचलोंका मुख्य केन्द्र है, जहाँ ग्रामवासियोंको दैनिक आवश्यकताकी सभी वस्तुएँ बिना नकद रुपया दिए मिल जाती हैं। यदि कोई व्यक्ति साबुनकी टिकिया लेना चाहता है, तो उसके हिसाबमें उस टिकियाके पैसे लिख लिए जाते हैं और फसल कटने पर उधारकी सब रकम जमा करके हिसाब साफ कर लिया जाता है। हिसाबके बाद यदि कोई रकम बच जाती है तो उसे सब परिवारोंमें समान रूपमें बाँट लिया जाता है।

अब तक सहकारी स्टोरको बहुत कम बचत हुई है। परवा ग्रामके निवासी यह अनुभव करते हैं कि आदर्श ग्रामके निर्माण का उनका कार्य अभी प्रारम्भ ही हुआ है। उन्होंने निकट भविष्यके लिए जो योजनाएँ तैयार की हैं, उनमें एक विशाल खेतीका निर्माण फलों, कोयले तथा लकड़ीकी उपलब्धिके लिए

५,००० वृक्षोंका लगाना, एक नया ट्रैक्टर खरीदना तथा नल-कूप लगाना भी शामिल है।

कार्यक्रम बड़ी-बड़ी आकांक्षाओंसे पूर्ण है। उनके मार्गमें अनेकों कठिनाइयां आ चुकी हैं और अनेकों आयेंगी। किन्तु वे उन पर विजय प्राप्त करते जा रहे हैं। परवा ग्रामके निवासियोंको इस बातकी प्रसन्नता है कि उन्होंने हालमें ही पेप्सू सरकारके ऋणकी पहली किस्त अदा कर दी है।

आदर्श ग्रामकी रचना

भारत बम्बई, कलकत्ता, मद्रास और नई दिल्लीमें नहीं वसा है। वह तो सहस्रों ग्रामोंमें बसा है। पर आजके ग्राम, ग्रामीणोंकी अवस्था,—अर्थात् उनका रहन-सहन और वेश-भूषा देखकर कोई क्या कल्पना कर सकता है। योरपके ग्रामोंको जाने दीजिए। उन देशोंके ग्रामोंको देखिए, जो कल तक असभ्य और जंगली थे, उन्होंने कैसी आश्चर्यजनक उन्नति की। उन्होंने हरएक ग्रामको अपने परिश्रम और अध्यवसायसे स्वर्ग बना दिया।

पर भारतके किसान हठ, दुराग्रह और पिछड़े जीवनमें रहनेके लिए बड़े प्रसिद्ध है। वे बड़ी पराजय और घातक मनोवृत्तिके हैं। नये विचारोंको अपनानेके प्रति उनकी कोई भावना नहीं होती है। आत्मनिर्भरतामें वे पीछे हैं, और अपनी सहायताके लिए सदा दूसरोंपर निर्भर रहते हैं। सहयोगपूर्ण जीवन, जातीय भावना और एकताका उनमें सर्वथा अभाव है।

आज भी किसानोंमें ऊँच-नीचका भेदभाव मौजूद है, धार्मिक रूढ़ियां और सामाजिक रीति-रिवाजोंके पालन करनेमें वे बड़े कट्टर हैं, कलह, फूट और झगड़ोंके आगार बन गए हैं। उन्होंने अपने पूर्वजोंके सभी सद्गुणोंको खो दिया। पूर्व पुरुष दूसरोंके हितके लिए अपना स्वार्थ त्याग करनेमें पीछे नहीं रहते थे। गाली बकना, मारपीट करना और दूसरोंको कष्ट पहुँचाना

आदर्श-ग्राम

१. केले के वृक्ष, २. साग-भाजी का बगीचा, ३. पशुओं का सायबान, ४. गन्ने के खेत ५. घर, ६. नारियल के वृक्ष, ७. बतख घर, ८. पपीते के वृक्ष, ९ मछली का तालाब १०. घांस के मकान पर लताएँ, ११. ट्यूबवेल, १२. ढोंगा(सिंचाई का साधन)।

अन्नपूर्णा भूमि—

किसानों का लगान जमा करना

सामुदायिक योजना का श्रीगणेश

पुराने समयके लोग पाप मानते थे। वे उसे अधर्म समझते थे। धर्म केवल तीर्थयात्रा और पूजा-पाठमें ही नहीं है, वह तो मनुष्यको अच्छे आचरणसे प्राप्त होता है। जिस मनुष्यका परोपकारपूर्ण जीवन होता है, उसे लोग सदैव स्मरण करते हैं, ऐसे पुरुष वंदनीय हैं, वे अपने ग्राम, समाज और देशमें सन्मान पाते हैं। कहनेका तात्पर्य यह है कि वह आदर्श ग्राम है, जहाँ किसान कर्मयोगी हैं, पुरानी रूढ़ियोंका परित्याग कर जमानेके साथ चलते हैं, और न तो कलह प्रिय हैं और न कभी अदालतोंमें जाते हैं।

किसानोंके बाप-दादे बंडियाँ और मिर्जई पहनते थे। पर आज किसान कमीज और कोट पहनते हैं, साइकिल और टार्च-लाइटका उपयोग करते हैं। यह सब क्या प्रकट करता है। यही न कि समयने उनसे पुरानी चीजें छुड़ा दीं और नई चीजें उपलब्ध कीं। आज वे उन्हीं रेल गाड़ियोंमें बैठते हैं, जिनमें बैठे हुए यात्रियोंको कोई यह नहीं पूछता कि वे किस जातिके हैं। वहाँ तो यह चिन्ता रहती है कि कहीं बैठनेके लिए थोड़ा-सा स्थान मिल जाय। अतएव सभी वर्णके लोग एक साथ बैठते हैं। इस प्रकार नए साधनोंने हममेंसे छुआछूतका भेदभाव मिटा दिया। इसलिए ग्रामोंमें भी यह भेदभाव नहीं रहना चाहिए। ग्रामोंके कुएँ, देवालय और विद्यालय, पंचायत-घर तथा अन्य सार्वजनिक स्थान भगवानके बनाए हुए सभी मनुष्योंके लिए हैं—चाहे वे किसी वर्णके हों। मनुष्योंमें भेद करना

महान् पाप है। ऐसी भावना धर्मपर कलङ्क लगाती है। जब हममें से लोग विधर्मी बन जाते हैं, तब हम उन मुसलमान और ईसाइयोंसे परहेज नहीं करते, उन्हें घरोंमें बिठाते हैं, उनसे खाने-पीनेकी चीजें खरीदते हैं, तब फिर हम कितने मूर्ख और अज्ञानी हैं कि राम और कृष्णका नाम लेनेवाले अछूतोंको हीन समझें, उन्हें कुँओंपर न जाने दें, और मंदिरोंमें उनका प्रवेश न होने दें। हम राम और कृष्णका नाम लेते हैं, पर वह नाम लेना तब तक बेकार है, जब तक कि हम रामके उपदेशोंपर न चलें। रामने शबरी और निषादको अपनाया, जो हीन जातिके थे और उस विद्वान् ब्राह्मणसे युद्ध लड़ा जो समाजके लिए कलंक था। अतएव मनुष्य जातिसे नहीं, गुणोंसे पूजनीय होता है। अतएव नवीन ग्राम रचनामें भारतीय किसानोंको सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टिसे नवजीवनमें पदार्पण करना है।

जब तक ग्रामके किसान सभ्य, सुशिक्षित, सुसंस्कृत और एकताके भावोंके प्रतीक न हों, तब तक ग्रामोंकी उन्नति कभी सम्भव नहीं है। आदर्श ग्राम तभी निर्माण हो सकते हैं, जब कि उसमें निवास करनेवाले किसानोंका जीवन भी आदर्श-मय हो।

समय किसीकी प्रतीक्षा नहीं करता। यदि आज भी किसान न सम्हले, और संसारकी दौड़में पीछे बने रहे, तो अपना विनाश स्वयं करेंगे। केवल धन-दौलत, सम्पदा और जायदादसे न तो कोई मनुष्य बड़ा बनता है और न वह ग्राम तथा देश महानता

ग्राम करता है। बिना सामाजिक सुधार हुए यह कभी संभव नहीं है कि ग्राम अपना अभ्युदय कर सकें।

किन्तु भारतीय ग्रामोंके इस चित्रणको मिटानेमें कुछ ग्राम आगे बढ़े हैं। वे अपना नया चित्रण निर्माण कर रहे हैं। यह तो सभी जानते हैं कि भारतीय ग्रामोंमें मानव-शक्तिका अभाव नहीं है। आवश्यकता केवल यह है कि इस शक्तिका उचित उपयोग हो। यदि ग्रामोंकी मानव-शक्तिमें नवजीवन उत्पन्न हो और वह सामाजिक योजनाओंको अग्रसर करनेमें सहायक हो तो यह निश्चय समझना चाहिए कि उनके द्वारा आश्चर्य-जनक कार्य परिपूर्ण हो सकते हैं। कहना न होगा कि ग्रामोंमें लोगोंने चमत्कार कर दिखाए हैं। उन्होंने अपने ही प्रयत्नोंसे अपने ग्रामोंको नया बनाया। वे अपने ग्रामके नवनिर्माणमें परमुखापेक्षी नहीं रहे। उन्होंने किसीकी सहायता और सहयोग की कामना नहीं की। अपने ही बूते और शक्तिसे अपने ग्रामको नमूनेका ग्राम बनाया और उन्होंने संसारको बता दिया कि मनुष्य अपने परिश्रमसे क्या नहीं कर सकता है। उन्होंने अपने ग्रामकी सड़कें तैयार कीं। विद्यालयका पक्का मकान बनाया, पंचायत-घरका निर्माण किया, पक्के कुएँ बनाए, बगीचा खड़ा किया, कई सौ नए वृक्ष लगाए, और सफाई तथा स्वच्छता बर-करार रखी। अपने योजनाके आधार पर यह काम एक प्राण-सब होकर पूरा किया। सब ग्रामीण एक उमंगसे काममें जुट गए। स्वेच्छापूर्वक और सामूहिक रूपसे गोलापुर ग्रामके

किसानोंका इस प्रकार आगे बढ़ना भारतके अन्य ग्रामोंके लिए नेतृत्त्व पूर्ण हुआ। यहाँ आकर एक बार देखिए कि किसानोंने पिछड़े हुए ग्रामको क्या कर दिखाया है। ग्रामीणोंके लिए यह तीर्थ बन गया है। इस ग्रामको देखकर लोग आशान्वित और प्रसन्न होते हैं, और यह सोचते हैं कि यदि शोलापुरके समान भारतके अन्य ग्राम और जिले अपने प्रयत्न और साधनोंसे आगे बढे तो भारत एक नया भारत बन सकता है। तब निकट भविष्यमें ही इस देशके तीस करोड़ मानवोंमें नए जीवनका सचार हुए बिना न रहेगा। उनके इन प्रयत्नोंसे देखते-देखते देश और समाजकी काया पलट हो जाएगी। उस समय सारी व्यवस्थाएँ ही बदल जाएँगी। क्योंकि किसान ही सब उन्नतिके श्रोत हैं।

शोलापुर जिलेके ग्रामोंके किसानोंने एक वर्ष अर्थात् अक्तूबर १९५० से सितम्बर १९५१ के मध्यमें स्वेच्छापूर्वक अपने ही प्रयत्न और साधनोंसे ४११ स्कूलोंके मकान बनाए, जिनमें १९२७ कमरे हैं, और १४६ पुराने स्कूलोंकी मरम्मत की। ४१ मील लम्बी पक्की सड़क नई बनाई और १२६ मील पुरानी कच्ची सड़ककी मरम्मत की। १३ धर्मशालाएँ नई बनाई और ३५ की मरम्मत की। ५ पुस्तकालय बनाए, १७ व्यायामशालाएँ बनाईं, १६५ देव मन्दिरोंकी दुरुस्ती की, १७ शौचगृह तथा प्रत्येक ग्रामके अनुपातसे ३३२७ खाद तैयार करनेके गड्ढे तैयार किए। १९२४ वृक्ष लगाए, ३५ पानी पीनेवाले कुओंकी मरम्मत की और इससे

दुगुने नए कुएँ बनाए, वर्षाके जलको ग्रामोंमें रोकनेके लिए ४१ ग्राम बान्ध खड़े किए गए और कंक्रीटका एक पुल बनाया। इसके अतिरिक्त उन्होंने सामाजिक जीवनको एकताका आदर्श प्रकट किया और इस दृष्टिसे २६५४ मामले आपसमें तय किए। दो कृषि योजनाओंके विस्तारके लिए १०५०० रुपएकी सहायता प्रदान की। इसके अतिरिक्त इन ग्रामीणोंने अन्य महत्त्वपूर्ण कार्य किए। उनकी प्रगति इन अंकोंसे कहीं अधिक बढ़ गई है। पर यहाँ हमने जितने कार्योंका उल्लेख किया है, यदि वे स्वेच्छापूर्वक न होते तो उनके व्ययमें करीब एक करोड़ रुपए व्यय होते। पर शोलापुरके किसानोंने अपने श्रमसे ही यह सब कर दिखाया।

ग्राम विकासके पथमें

महात्मा गांधी भारतके लिए राम-राज्यका स्वप्न देख रहे थे। राम-राज्यसे बापूका मतलब था प्राचीन कालके उन सुनहरे दिनोंका, जब देश धन-धान्यसे परिपूर्ण था, किसीको भी अन्न-वस्त्रका कष्ट न था, परिवार गाँवके लिए था, गाँव जिलेके लिए, ज़िला सूबेके लिए और सूबा देशके लिए। राम-राज्य गाँधीजीके लिए विश्वासकी वस्तु थी।

१५ अगस्त, १९४७को भारत विदेशियोंके निरंकुश शासनसे तो मुक्त हो गया, पर ग़रीबी और अभावसे मुक्ति पाना अभी भी उसके लिए शेष रहा। विदेशियोंके हाथसे शासन-सत्ता प्राप्त करके हमारे जन-नायक अभी उसे पूरी तरहसे सँभाल भी न पाए थे कि विभाजित देशके दोनों ओर भयंकर सांप्रदायिक कलहकी आग लग गई। शरणार्थियोंका ताँता बँध गया और हमारे ८० लाख भाई-बहनोंको अपनी तथा अपने पूर्वज़ोंकी कमाई हुई सारी पूँजी पाकिस्तानमें छोड़कर प्राणोंकी रक्षाके लिए भारत भाग आना पड़ा। इन लाखों शरणार्थियोंको तो भोजन, वस्त्र और आश्रय देना ही था। इसके साथ ही इनके लिए जीवनयापनकी व्यवस्था भी करनी और भविष्यके लिए आशा बँधानी थी। इसी बीच युद्ध-विध्वस्त राजकीय यंत्रको ठीक करना था। रेलों, डाक, तार, जहाजों, सड़कोंपर चलनेवाली गाड़ियों आदिका सुधार करना था। अन्न-प्राप्तिकी भी

व्यवस्था करनी थी। विदेशी नौकरोंके चले जानेपर नए आद-मियोंको तरक्की देकर शासन-व्यवस्था भी सँभालनी थी। यह सब किस कठिनाईसे हुआ, इसकी केवल कल्पना ही की जा सकती है।

सामुदायिक विकास-योजनाका उद्देश्य

सबसे बादकी जन-गणनासे ज्ञात हुआ है कि भारतकी कुल जनसंख्याका ८२·५ प्रतिशत भाग गाँवोंमें रहता है। लोकतन्त्र बहुसंख्यापर निर्भर होता है। अतः यह स्वाभाविक ही था कि भारत-सरकार बहुसंख्यक ग्रामीण जनताकी भलाईके लिए विशेष रूपसे सोचती और कोई सुयोजित परिकल्पना तैयार करती। सामुदायिक योजना इसी अभिप्रायसे बनाई गई है। उसके उद्देश्यकी व्याख्या यों की गई है: सामुदायिक विकास-योजना का उद्देश्य होगा योजनाके अन्तर्गत पड़नेवाले इलाकेके पुरुषों, स्त्रियों व बच्चोंके 'जीवित रहनेके अधिकार' संस्थापनमें एक मार्ग प्रदर्शक व्यवस्थाके रूपमें सेवाएँ प्रदान करना; किन्तु कार्य-क्रमकी प्रारम्भिक अवस्थाओंमें इस उद्देश्यकी पूर्त्तिके मुख्य साधन खाद्यकी ओर सर्व प्रथम ध्यान देते हुए। इस उद्देश्यकी पूर्त्तिके लिए जिन बातोंकी व्यवस्थाकी ओर सर्व प्रथम ध्यान देनेकी आवश्यकता है, वे हैं (क) खेती-बाड़ी और उससे संबंधित क्षेत्र, उपलब्ध अनजुती तथा परती भूमिका खेतीके लिए सुधार, सिंचाईके लिए नहरों, ट्यूबवैल, देसी कुओं, नालों आदिकी व्यवस्था; उत्तम कोटिके बीज; खेतीके अधिक अच्छे तरीके;

पशु-चिकित्सा-सम्बन्धी सहायता; खेतीके अच्छे औजारोंका प्रबन्ध; पैदावार बेचनेके लिए हाट-व्यवस्था तथा ऋणोंकी सुविधा; पशु-पालनके लिए पशु-प्रजनन-केन्द्रोंकी व्यवस्था; अन्तर्देशीय मछली व्यवसायका विकास; खुराक-व्यवस्थाका पुनस्संगठन; फलों व सब्जियोंकी खेतीका विकास; मिट्टीके सम्बन्धमें खोज; पेड़-पौधोंकी खेती और वन रोपण तथा इन कार्योंके परिणामकी जाँचके लिए व्यवस्था; (ख) संचार-साधन, सड़कोंकी व्यवस्था; यांत्रिक सड़क-परिवहन-सेवाओंको प्रोत्साहन और पशु-परिवहनका विकास; (ग) शिक्षा (प्रारम्भिक अवस्थामें अनिवार्य तथा निःशुल्क शिक्षाकी व्यवस्था; हाई और मिडिल स्कूलोंकी व्यवस्था; सामाजिक शिक्षा तथा पुस्तकालय सेवाओंकी व्यवस्था); (घ) स्वास्थ्य (सफाई व जन-स्वास्थ्य-व्यवस्था; बीमारोंके लिए चिकित्सा-सहायता; गर्भवती स्त्रियोंकी बच्चा पैदा होनेसे पहले और उसके बादकी देख-भाल: दाइयोंका प्रबन्ध); (ङ) प्रशिक्षण या ट्रेनिंग (मौजूदा कारीगरोंको अधिक कुशल बनानेके लिए रिफ्रेशर कोर्स; खेतिहरोंकी ट्रेनिंग; कृषि-विस्तार सहायकोंकी ट्रेनिंग; सुपरवाइ-जरोंकी ट्रेनिंग; कारीगरोंकी ट्रेनिंग; प्रबन्ध-कार्य सँभालनेवाले स्वास्थ्य-कर्मियोंकी ट्रेनिंग तथा योजनाओंके लिए एक्जीक्यूटिव-अफसरोंकी ट्रेनिंग; (च) नियोजन या काम: मुख्य या सहायक धंधोंके रूपमें ग्राम-उद्योगों व शिल्पोंको प्रोत्साहन; फालतू आदमियोंको काममें लगानेके लिए छोटे-मोटे उद्योग-धंधोंको

प्रोत्साहन, आयोजित वितरण, व्यापार, सहायक तथा कल्याणकारी सेवाओं द्वारा काम दिलानेकी व्यवस्था); (छ) आवास-व्यवस्था (देहातमें घर बनानेके लिए अधिक अच्छे तरीकों और डिजाइनोंकी व्यवस्था; शहरी इलाकोंमें मकान बनवानेकी व्यवस्था); (ज) सामाजिक कल्याण (स्थानीय बुद्धि-बल व सांस्कृतिक साधनोंकी सहायतासे जन-समुदायके मनोरंजनकी व्यवस्था; शिक्षा व मन बहलानेके लिए दिखा-सुनाकर समझानेकी (श्रव्य-दृश्य) व्यवस्था; स्थानीय तथा अन्य प्रकारके खेल-कूदका प्रबन्ध; मेले लगवाना; सहकारिता तथा 'अपनी मदद आप'-आन्दोलनोंका संगठन ।

ऊपरकी सूचीसे स्पष्ट हो जाता है कि सामुदायिक योजनामें आनेवाले कार्योंका क्षेत्र काफी व्यापक है। यह भी स्पष्ट है कि केवल सरकारके बलपर सारा कार्य नहीं किया जा सकता। यह सत्य हैं कि गाँववालोंको खेती-वाड़ीके लिए नए तौर-तरीकों, पैदावार बेचनेके लिए संचार-साधनोंके समुचित विस्तार और खाली समयके सदुपयोगके लिए छोटे-मोटे धंधों तथा भलाईके अन्य उपायोंकी आवश्यकता है। वर्त्तमान वित्तीय साधनोंसे सरकारी शाखाएँ विकासकी उन आवश्यक बातोंके लिए ही सहायता दे सकती हैं, जिनका सम्बन्ध सारे जन-समुदायसे हो और जिनके खर्चमें गाँववाले भी नकद देकर या परिश्रम करके हाथ बँटानेके लिए तैयार हों। व्यक्तियों या व्यक्तियोंके दलोंकी सहायता केवल आंशिक रूपमें ही हो सकती है। अतएव यह

साफ हो जाता है कि गाँवोंके विकास कार्यका अधिक भार गाँववालोंको ही उठाना होगा। तो पहले गाँववालोंको ही निश्चय करना है कि उन्हें सबसे अधिक किन-किन चीजोंकी जरूरत है और किस क्रमसे उन्हें किया जाय।

अमरीकी टेक्निकल सहयोग

सामुदायिक-योजनाओंका आयोजन बड़ौदा, मद्रास, इटावा तथा गोरखपुरकी ग्राम्य-विकास योजना, पुनस्संस्थापनके परिणाम-स्वरूप उत्पन्न नीलोखेड़ी तथा फरीदाबादकी ग्राम्य व शहरी विकास-योजनाओं और समय-समयपर किए गए अन्य प्रयोगोंसे प्राप्त अनुभव तथा प्रेरणाके आधारपर किया गया है। इन योजनाओंमें से कोई भी ऐसा नहीं है, जो अपनेमें स्वयं पूर्ण हो। इसलिए सामुदायिक विकास-योजनाको हम भारत तथा विदेशोंमें प्राप्त अनुभवोंके एकीकरणका एक प्रयास मात्र रखते हैं। देशकी वर्तमान अर्थ-व्यवस्थामें, सामुदायिक योजनाका आयोजन भारत और अमरीकाके बीच हुए औद्योगिक (टेक्निकल) सहयोगके समझौतेके कारण संभव हुआ है। इस समझौतेके अधीन भारत-भरके राज्योंमें कोई ५५ योजनाएँ आरंभ की गई हैं। इन योजनाओंके अन्तर्गत लगभग १६,५०० गाँव तथा १२० लाख जन-संख्या आती है। अमरीकी सरकारको इस दिशामें—विशेषकर कृषि-सम्बन्धी क्षेत्रमें—काफी अनुभव प्राप्त है और इस कार्यमें हमारी सहायता करनेके लिए इसने अपना हाथ बढ़ाया है। आयोजनको क्रियान्वित करनेके लिए

उसने धन, सामग्री तथा औद्योगिक टेक्निकल सहायता द्वारा हमारे अपने साधनोंको बढ़ाने और बढ़ाकर उन्हें इस कार्यकी पूर्तिके लिए जुटानेका अवसर दिया है।

गांववाला ही असली मालिक

सामुदायिक-योजना हमारे लिए एक आर्थिक कार्यक्रम और नवीन लोकतंत्रकी अभिव्यक्ति दोनों ही है। आज हम हर साल लगभग ३०० करोड़ रुपये मूल्यकी विदेशी मुद्रा बाहरी देशोंसे अन्न मंगानेमें खर्च करते हैं। ५५ सामुदायिक योजनाओंमें खर्च होनेवाली रकमकी यह रकम सतगुनीसे अधिक है! अतएव इस आयोजनके फल-स्वरूप जो भी अतिरिक्त अन्न पैदा होगा, उससे विदेशोंको अन्नके मूल्यके रूपमें भेजी जानेवाली यह भारी रकम कम होगी और इस प्रकार जो भी रुपया बचेगा, वह लोगोंके लिए अधिक माल तैयार करनेके लिए देशी उद्योग-धंधोंके विकासमें खर्च किया जा सकेगा। पर इस कार्यक्रमका केवल आर्थिक महत्व ही नहीं है। इसके द्वारा भूमिपर काम करनेवाले करोड़ों व्यक्तियोंको सामाजिक सुधारका भी अवसर प्राप्त होगा। जैसे-जैसे आयोजनका काम आगे बढ़ेगा, गांवोंके लोग समझने लगेंगे कि लोकतन्त्रात्मक शासनका अर्थ पुराने समयकी तरह जोर-जबरदस्ती करनेका नहीं है। जब वे देखेंगे कि डाक्टर, पशु-चिकित्सक, सफाईका इंस्पेक्टर, खेती-बाड़ी-सम्बन्धी सुपरवाइजर और पुलिस सभी उसकी मददके

लिए हैं, तब गाँववालोंकी समझमें आयगा कि अपने भविष्यका एकमात्र निर्माता वह स्वयं है।

सामुदायिक-योजनाका बृहत् प्रयास इस धारणासे प्रेरित है कि अपने बाहुबलसे मनुष्य क्या नहीं कर सकता—अर्थात् वह सब कुछ कर सकता है। भारतके पास विपुल साधन हैं, जिन सबको जुटाकर वह इस महान् कार्यको पूरा कर सकता है, किंतु कठिन परिश्रम करके ही। स्पष्ट है कि भूख, रोग और अज्ञान का विनाश मंत्रों द्वारा नहीं किया जा सकता और न रो-चिल्ला-कर अथवा एक-दूसरेकी भर्त्सना करके ही। उसे पूरा करनेके लिए पसीना और आँसू चाहिए। कठोर परिश्रमके कारण जो आँसू निकलते हैं, उनमें अपनी एक पवित्रता होती है। राम-राज्य इस देशके महाजनोंकी कई पीढ़ियोंके पसीनेपर ही आधारित था। यदि उस ऐश्वर्यको फिर लाना है, तो आगे आने-वाली कई पीढ़ियोंको कठिन परिश्रम करना होगा। शायद यही सोचकर हमारे प्रधान मन्त्रीने कई साल पहले कहा था कि 'इस पीढ़ीको कठिन परिश्रमकी सजा मिली है।' संकटके दिनों में भारतने अनेक बार मार्ग-प्रदर्शन किया है। यदि एक बार फिर वह अपनेको सुव्यवस्थित रूपमें पुनर्निर्मित कर सका, तो बहुतेरे देशोंके लिए वह आदर्श बन सकेगा और हो सकता है कि इस प्रकार वह 'नवीन संसार' के लिए 'विश्व-राज्य' का द्वार खोल सकनेमें भी सहायक होगा।

सामूहिक योजनाकी प्रगति

सम्बद्ध राज्यों द्वारा दी गई जानकारीके आधार पर सामूहिक योजना-प्रशासनने सामूहिक योजनाकी ९ महीनों (अक्टूवर १९५२ से जून १९५३) की प्रगति और सफलताके विषयमें जो विवरण तैयार किया है, उससे ज्ञात होता है कि इस कार्यक्रममें लोगोंने भी लगभग उतना ही धन लगाया है, जितना सरकारने। २ अक्टूबर, १९५२ को जिन ८१ विकास-क्षेत्रों (ब्लाकों) में काम शुरू हुआ था, उनमें इस अवधिमें ११६·७९ लाख रुपए सरकारने और १०·६२८ लाख रु० लोगोंने लगाए। लोगों द्वारा लगाई गई इस रकममेंसे लगभग ४८·३६ लाख रु० की सहायता श्रमके रूपमें और ६०·२६ लाख रु० नकद और भूमि आदिके रूपमें दिया गया। प्रगतिका विवरण देखनेसे ज्ञात होता है कि इस कालके आखिरी ३ महीनोंमें काम अपेक्षाकृत अधिक हुआ। निम्न तालिकासे यह स्पष्ट हो जायगा कि पहले ६ महीनोंमें कितना काम हुआ और कुल नौ महीनोंमें क्या प्रगति हुई—

खादके लिए खोदे गए गढ़े	४३७६१	८००९१
रासायनिक खादका वितरण	६०१२५ मन	२८९८९० मन, ६०८३३ बोरी
प्रदर्शनोंके लिए खोले गए फार्म	८२	४३४
फलोंकी खेतीवाला इलाका	६,२७७ एकड़	६,४७८ एकड़
तरकारियोंकी ,, ,,	३,५५२ ,,	६,१३७ एकड़

परती भूमिका सुधार	२१,०५७ एकड़	३५,४३७ एकड़
सींची गई अतिरिक्त भूमि	२४,७७६ ,,	६८,६८६ एकड़
नस्ल-सुधार और कृत्रिम गर्भधारण-केन्द्र	६२ और ४ मुख्य ग्राम-केन्द्र	१४१ और ४ मुख्य ग्राम-केन्द्र
पशुओंको टीके लगाए गए	४,०३,३५८	६,२८,६७१
गन्दा पानी सोखनेके गढ़े	११,१२८	१३,६६८
नालियाँ	४१,०२३ गज	५८,१४६ गज
नए कुएँ	२०७	२०७
कुओंकी मरम्मत	३८१	६८८
बुनियादी शिक्षाके लिए पाठ-परिवर्तित पाठशालाएँ	७०	२०६
नई पाठशालाएँ	४६४	१,०८६
वयस्क शिक्षा केन्द्र	१,४२६	२,३५३
वयस्क शिक्षार्थी	१७,७२८	३०,२८५
पक्की सड़कें	६६ मील	६५ मील
कच्ची सड़कें	१६३२ मील	२१३३ मील और ३ पुल
कलाओं और शिल्पों द्वारा अतिरिक्त नियोजन	४६३	८११
ग्राम्य कार्यकर्त्ताओं और दूसरे कर्मचारियोंका प्रशिक्षण	५८०	१,७५३
गाँवोंमें बनाए गए मकान	४८८	६८५

सामाजिक तथा सांस्कृतिक कार्योंमें नए स्कूलों तथा वयस्क शिक्षा-केन्द्रोंकी स्थापना, स्वास्थ्य व स्वच्छताकी ओर अधिक ध्यान, बड़े पैमानेपर टीके व दवाइयोंके प्रयोग द्वारा बीमारियोंकी रोक-थाम आदि बातें सम्मिलित हैं। पशुओंकी चिकित्सा आदिका भी प्रबन्ध व्यापक रूपमें किया गया है। कर्ज देकर और कामके बेहतर तरीकोंकी ट्रेनिंग देकर मौजूदा ग्रामोद्योगोंका सुधार किया गया है। सहकारी समितियां खोली गई हैं और कई जगह कर्ज-देवा सोसाइटियोंको बहु-कार्य कारिणी सोसाइटियोंमें बदल दिया गया है। लोगोंने सामूहिक कार्य-क्रमका स्वागत उत्साहके साथ किया है। सड़कों, नहरों, तालाबों, तथा स्कूलों, पंचायतघरों, स्वास्थ्य-केन्द्रोंके निर्माणके लिए लोगों द्वारा धन, सामग्री तथा श्रमके स्वेच्छापूर्ण दान बढ़ गए हैं। विभिन्न राज्योंमें हुए मुख्य-मुख्य कार्योंका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

आसाम

गोलाघाट-मिकिर पहाड़ी-विकास-खण्डमें ७१ मील लम्बी सड़कें लोगोंने अपने-आप अपनी मेहनतसे बनाई हैं। इसी तरह दरंग-योजनाके पहले खण्डमें भी (जुलाई, १९५२ तक) १५९ मील लम्बी सड़कें बनाई गई हैं।

बिहार

एकनागरसराय-बडबीघा-योजना-क्षेत्रमें वयस्कोंके लिए ११६ रात्रि-पाठशालाएँ खोली गई हैं। कई स्थानोंमें स्कूलों व

पुस्तकालयोंकी इमारतें गाँववालोंने खुद बनाई हैं और २० मील कच्ची सड़कें तैयार की गई हैं। पूसा-समस्तीपुर-बेगूसराय क्षेत्रमें गाँववालोंने १७५ मील लम्बी कच्ची सड़कें बनाई हैं या उनकी मरम्मत की है, जिनके साथ १३ पुलिया भी शामिल हैं।

बम्बई

कोल्हापुर-योजनामें लगभग १ लाख व्यक्तियोंने गाँवोंकी सड़कोंका काम दिया। अनुमान है कि उन लोगोंने लगभग १,१५,००० रु० मूल्यका श्रम दान दिया होगा। इसके अलावा गाँववालोंने इन सड़कोंके लिए लगभग १६,१५,७०० रु० मूल्यकी जमीन भी मुफ्त दी है। इस योजनाकी एक विशेषता नदियों पर सम्मिलित बाँध-पुल बनानेकी भी है, जिनमें हरेक पर डेढ़-दो लाख रु० खर्च बैठता है। मेहसाना योजना-क्षेत्रके तीन गाँव बिना किसी बाहरी सहायताके हाई-स्कूलोंकी इमारतें बना रहे हैं, जिनकी लागत लगभग डेढ़ लाख रु० होगी। बीजापुरमें लोगोंने एक अस्पतालकी इमारत बढ़ानेके लिए ४२ हजार रु० चन्देमें दिए हैं। पोथापुरके लोगोंने एक जच्चा-बच्चा-कल्याण केन्द्रके निर्माणके लिए २५ हजार रु० दिया है।

मध्यप्रदेश

अमरावती-मोरसी-दरियापुर-योजनाके खण्ड १ के हर गाँव, खण्ड २ के अधिकांश गाँवों और खण्ड ३ के ५० प्रतिशत गाँवोंमें विकास-मंडलकी स्थापना की गई है। हर विकासमंडलने 'एमोनियम सल्फेट' नामक रासायनिक खादका स्टाक रखनेकी जिम्मेदारी

ली है। हरियाना-किस्मके १० साँडोंको गाँववालोंने अपने खर्च पर रखना स्वीकार किया है और स्कूल, अस्पताल आदिके निर्माण व सुधारके लिए लोगोंने ४८ हजार रु० चंदेमें दिए हैं। वख्तर-योजनाके अन्तर्गत २७ मील कच्ची सड़कें बनाई गई हैं। इसके अलावा निवासके लिए नमूनेके पाँच पक्के मकान, पाँच पक्के स्कूल और १८ पंचायतघर भी बनाए गए हैं। होशंगाबाद-सोहागपुर योजनामें ३५३ नये पक्के कुएँ खोदे गए तथा १०७ पुराने कुओंकी मरम्मत की गई।

मद्रास

इस्ट-गोदावरी-क्षेत्रमें सिंचाईके लिए एक को-ऑपरेटिव सोसाइटी बनाई गई है और इसमें किसानोंने लगभग ३५ हज़ार रु० की पूँजी लगाई है। सिंचाईका पानी बिजलीसे चलनेवाले पम्पोंसे खींचा जाता है। मालमपूजा-क्षेत्रमें २० मील कच्ची सड़कें बनाई गई हैं और इनमें एक सड़कपर १० हज़ार रु० की लागतसे पुल भी बनाया गया है। कई स्वास्थ्य तथा बच्चा-जच्चा-केन्द्र भी स्थापित किए गए हैं।

उड़ीसा

भद्रक-योजना-क्षेत्रमें गाँववालोंने अपने खर्चसे साढ़े १५ मील लम्बी कच्ची सड़कें बनाई हैं। रसलकांडा-योजना-क्षेत्रमें कई सौ एकड़ ज़मीनमें अब सब्जियोंकी दूसरी फसल भी उगाई जाने लगी है। पहले इस ज़मीनमें सिर्फ खरीफकी एक फसल होती थी और बादमें ज़मीन परती पड़ी रहती थी।

पंजाब

विभिन्न योजना क्षेत्रोंमें १६३ मील कच्ची और ६ मील पक्की सड़कें बनाई जा चुकी हैं। पानीकी निकासीके लिए ६८ हज़ार फुटकी लम्बाईमें नालियां बनाई गई हैं और सड़कोंका २ लाख वर्गफुटका क्षेत्र भरा जा चुका है। फरीदाबादमें पालीसे छैंसा तककी १७ मील लम्बी सड़क गाँववालोंने ३ सप्ताहमें बना दी थी। सड़कके लिए ज़मीन गाँववालोंने दानमें दी थी। मँझौलीमें एक बाँध भी बनाया गया है। जगाधरीमें गांववालोंने ३ नई सड़कोंको ३० लाख घनफुट मिट्टीसे भरनेका काम पूरा किया। श्रम-दानके अलावा सड़कें बनानेके लिए गाँववालोंने १० हज़ार रु० चन्दा इकट्ठा किया है। २६ स्कूलोंकी इमारतें बनाई जा चुकी है तथा और बनानेके लिए २८ हज़ार रु० इकट्ठा किया गया है। बटाला-क्षेत्रमें लोगोंने ६७ मील लम्बी नई सड़कें अपनी मेहनतसे बनाई हैं। इनकी जमीन तथा इनके लिए की गई मेहनतका मूल्य लगभग १० लाख रु० बैठेगा।

उत्तर-प्रदेश

देवरिया-क्षेत्रमें मई, १९५३ के श्रमदान-आन्दोलनके दिनों तथा बादमें ५१ तालाब खोदे और गहरे किए गए। अल्मोड़ा-जिलेके गरुड-क्षेत्रमें ६० मील लम्बी सड़कें बनाई गई। गाँववालों ने चार मील लम्बी एक और सड़क बनाई, जो मोटरोंके चलने योग्य है। सिंचाईकी तीन मील लम्बी नालियां खोदी गई और १८ मील पुरानी गूलोंकी मरम्मत की गई। श्रमदान-आन्दोलन

के दिनों २०,००० व्यक्तियोंने श्रम-दान दिया। फैज़ाबाद सामूहिक विकास खंडमें ४१ नल-कुएँ बनाए गए और २६ तालाबोंको बढ़ाया तथा गहरा किया गया। ४१ मील लम्बी नई गूलें बनाई गई हैं और ४ मील पुरानी गूलें साफ़ की गई हैं। ४ प्राइमरी स्कूल, पंचायतघर, ८० मील कच्ची सड़कें, २१ पुलियाँ, २८ घर और २ बांध बनानेमें लोगोंने बड़े पैमाने पर श्रमका दान किया। स्वेच्छासे दी गई उनकी सहायताका मूल्य लगभग डेढ़ लाख रुपए है।

पश्चिम-बंगाल

पश्चिम बंगालमें लोगोंने अपनी मेहनतसे ६५॥ मील लम्बी कच्ची सड़कें बनाई हैं और नलकुएँ आदि बनानेके लिए सहायता देनेका वचन दिया है। कई स्कूल बन चुके हैं और कईके लिए चन्दे मिल रहे हैं।

हैदराबाद

सात हज़ार पांच सौ एकड़ परती ज़मीनको खेतीके योग्य बनाया गया है और ११,००० एकड़में सिंचाई-व्यवस्था की गई। तुंगभद्रा-क्षेत्रमें जिन लोगोंके गांव नए बांधकी ज़मीनमें आ गए हैं, उन्हें बसानेके लिए १६ नए गांव बसानेको प्राथमिकता दी गई। मुलुग-विकास-खंडमें ८० मीलकी सड़कें बनाई गई हैं। निज़ामसागर-इलाकेमें गांववालोंने ४१८०) रु० की लागतसे ३॥ मील लम्बी सड़कें बनाईं। यदि गांववाले श्रम-दान न देते, तो इन सड़कों पर वैसे १४०६७ रु० खर्च होता। इसी प्रकार उन्होंने केवल ६०००) रु० के खर्चसे १६ कुएँ खोदनेमें सहायता दी।

मध्य-भारत

मध्य-भारतके राजपुर-योजना-क्षेत्रमें १,३६४ नए कुएँ बनाए गए और १,०३२ पुराने कुएँ किसानोंने बिना सरकारी मददके बनाए। नकद, साज-सामान और श्रमके रूपमें गाँववालोंने कुल अनुमानतः ६,७६,५०० रु० की सहायता दी। सरकारी ऋणोंसे बहुतसे कुओंपर पम्प भी लगाए गए। छः महीनोंमें गाँववालोंने ९० पम्पिग-सैट लगानेके लिए ९०,०००) रु० की सहायता दी। हरसी-योजना-क्षेत्रमें लगभग ५,००० एकड़ और ज़मीनमें जापानी तरीकेसे धानकी खेती की जाने लगी। इससे कम-से-कम १,००,००० मन अतिरिक्त धानकी उपज होगी। पहले योजना-खंडमें १३ प्रारम्भिक स्कूल, दो बुनियादी स्कूल और दो लड़कियों के स्कूल खोले गए। इनके लिए गाँववालोंने लगभग १८,२०० रु० की सहायता दी है।

मैसूर

अनुमानतः ७५,०००) रु० की लागतसे सोराब शिकारपुर-क्षेत्रमें १३ तालाब और ४ मील लम्बी छोटी नहरें बनाई गई हैं। गाँववालोंने २२,००० रु० का श्रम-दान दिया। इनसे १,१५५ एकड़ ज़मीनमें सिंचाई होगी।

राजस्थान

विभिन्न विकास-खंडोंमें कुल ८५ विकास-मंडल और २०१ सहकारी-समितियाँ हैं। इनका उद्देश्य कृषि, पशु-पालन, सिंचाई, स्वास्थ्य और सफाई, समाज-शिक्षा और संचार-व्यवस्थाओंमें

सुधार करना है। अच्छे मौसममें काम देनेवाली ३६ मील लम्बी सड़कें और १७,२५ मील लम्बी कच्ची सड़कें और ३,७५ मील लम्बी पक्की सड़कें बनाई गई हैं। लोगोंने ५८,०००) रु० का श्रमदान दिया है। उन्होंने २४,०००) रु० की मकान बनानेकी सामग्री और लगभग ४६,०००) रु० नकद भी दिए हैं।

पेप्सू

धुरी-योजना-क्षेत्रमें सहशिक्षाके ५३ प्रारम्भिक स्कूल खोले गए हैं। इस प्रकारके अब १५७ स्कूल हो गए हैं। ६४ . वर्गमीलके इलाकेमें अब किसी भी बच्चेका स्कूल एक मीलसे अधिक दूर नहीं रहा। ३५ स्कूलोंकी जमीनें और मकान गाँववालों द्वारा दिए गए हैं। श्रम, भूमि और भवनोंके रूपमें उन्होंने कुल लगभग १,८१,३०० रु० की सहायता दी।

सौराष्ट्र

योजना-क्षेत्रमें अब एक भी गाँव बिना पंचायतके नहीं रहा। सिंचाईके कार्यों और स्कूलों, सड़कों तथा मनोरंजनके लिए लोगोंने नक़द और श्रमके रूपमें १,६१,२०० रु० की सहायता दी।

त्रावणकोर-कोचीन

कुनथुनाद-चलकुडी-योजनाके अंतर्गत १५ से २० तक नलदार कुएँ बनानेका कार्यक्रम है। ११ कुएँ बनाए जा चुके हैं। नहानेके तीन घाट बन रहे हैं। मछुओंके लिए सस्ते मकान बनानेका काम शुरू होनेवाला है। २६ मील सड़कें बन गई हैं। लोगोंने

उनके लिए ५२, ३००) रु० की जमीन और ५२,६७०) रु० नकद और श्रमके रूपमें दिये है । नेय्याटिंकारा-विलावनकोडे योजनाके अन्तर्गत ५ नए कुएँ बन गए हैं और ५ की मरम्मत की गई है । थिरुपुरमें ७५,०००) रु० के खर्चसे स्रोतोंका पानी पहुँचनेकी एक योजना शुरू की गई है । मछुओंके मकानोंके ४ ब्लाक बनकर तैयार होनेवाले हैं और २० ब्लाक और बनाये जायेंगे । १५ मील लम्बी सड़कें बनाई गई हैं ।

अजमेर

किसानों द्वारा तैयार की गई लगभग ८,०३३ टन खादका लगभग २,००८ एकड़ जमीनमें उपयोग किया गया । परिणाम-स्वरूप ४,०१६ मन अतिरिक्त अनाज पैदा हुआ है ।

भोपाल

टूमरा और झोरखेरा गांवोंमें दो युवक-शिविर संगठित किए जिन विद्यार्थियों और अध्यापकोंने इनमें भाग लिया, उन्होंने एक स्कूलका भवन और ४०० फुट लम्बी पक्की नाली बनानेमें सहायता दी ।

कुर्ग

सिंचाईके लिए बाँध बनानेकी सात छोटी योजनाओंमेंसे छः का काम चल रहा है । १६ मील लम्बे नाले बनाए गए हैं और २० मीलकी सफाई की गई है । ६ नए तालाब बने हैं और ७४ की सफाई की गई है । ९ पुलियाँ, ६ पुल या तो पूरे हो गए या उनका काम चल रहा है । १०७ मील लम्बी कच्ची सड़क बनाई गई है । १,८६,०००) रु० का श्रम-दान मिला है ।

दिल्ली

आठ मील लम्बी कच्ची सड़कें बनाने, १४ तालाबोंके गहरे करने और एक स्कूलका भवन बनानेमें गांववालोंने सहायता दी। नक़द सामान और श्रमके रूपमें ५३,२००) रु० की सहायता मिली। बरसोंसे पटी हुई ३२ मील लम्बी नालियोंकी सफाई की गई। १५,००० लोगोंने इसमें हाथ बँटाया। अनुमान है, इससे लगभग २,००० एकड़ जमीनकी फसलें खराब होनेसे बच गई हैं।

कच्छ

सिंचाईके लिए १२ छोटे तालाब बन गए हैं, जिनसे ६००. एकड़ जमीनकी सिंचाई होगी। ४ मील लम्बी नहरें और ६० नए कुएँ बनाए गए हैं। स्कूलों, सड़कों, पुलों, तालाबों आदिके लिए लोगोंने नकद और श्रमके रूपमें २·३६ लाख रु० की सहायता दी।

मणीपुर

मणीपुर-गांववालोंने ८ मील लम्बी सड़क बनाई। एक और ६ मीलकी सड़कपर मिट्टी डालनेका भी काम पूरा हो गया है। जमीन और सामानके रूपमें लोगोंने अनुमानतः २ लाख रु०. की सहायता दी।

उत्तर-पूर्वी सीमा-एजेन्सी

पासीघाट-योजना-क्षेत्रमें ८४,०००) रु० की लागतसे लोगोंने मकान, सड़कें पुल आदि बनाए हैं।

ग्राम-पंचायत

भारतके ग्रामीणोंके लिए पंचायत प्रथा कोई नई चीज नहीं है। एक काल था, जब कि प्रत्येक ग्राम स्वावलम्बी था और पंचायत द्वारा उसकी सारी व्यवस्थाएँ होती थीं। अतएव पंचायतका अस्तित्व ग्रामकी स्वतन्त्रता और लोक शासनका प्रतीक था। हर एक ग्राममें साम्यवाद विद्यमान था। ब्राह्मण विद्या प्रदान करता था, वह त्याग और तपस्याकी मूर्ति था। ग्रामवासी उसके सुख-प्रद जीवनकी स्वयं व्यवस्था करते थे। बढई, लुहार, जुलाहा, धोबी और नाई आदि सभी कारीगर हरएक ग्राममें रहते थे। जुलाहा कपड़ा तैयार करता, तो लुहार खेतीके औजार बनाता। आपसमें सब एक-दूसरेके श्रम और चीजोंका विनिमय करते थे। यदि नाई वर्ष भर तक हजामत बनाता और देखता कि किसानको अधिक आय हुई है तो वह उस अनुपातसे मेहनताना मांगता, अन्यथा उसे जो मिलता, उसमें सन्तोष करता। सारा ग्राम एक परिवार था और कोई किसीके श्रमका शोषण नहीं कर पाता था। भारतीय ग्रामोंमें यह व्यवस्था किसी आतंक पर कायम नहीं थी। निष्पृहता, त्याग और भ्रातृभाव ग्राम-संगठनका आधार था। इसलिए अतीत कालके भारतीय ग्राम साम्यवादके सच्चे प्रतिरूप थे। लोगोंमें स्वार्थभावना और मोल-तौलका जीवन नहीं था। जिनके पास कुछ अधिक सम्पदा होती थी, तो वे यह सदा

ख़याल करते कि वे उसके अमानतदार हैं, वह सारा धन ग्रामके उपयोगके लिए है। शादी-विवाह और अन्य कामकाज ग्रामके सब लोगोंके एक समान स्तर पर होते थे। ये ही ग्राम थे, जहांके कारीगर जो चीजें तैयार करते, वे योरप और एशिया भरके बाजारोंमें बिकती थीं। वे ऐसी सुन्दर बनती थीं कि आजकलके कल-कारखानोंको उनका मुकाबला करना दुस्तर हुआ। ग्रामके लोगोंमें सच्ची एकता थी। उनमें आजकलके समान कलह, फूट और वैरभावका नाम तक नहीं था।

पर देशका जीवन अस्तव्यस्त होनेपर विदेशी शासनमें ग्राम-पंचायतोंका लोप हो गया। ग्रामोंका पूर्वकालका सुन्दर जीवन स्वप्नवत हो गया, यद्यपि पंचायतका रूप एकबारगी नष्ट नहीं हुआ। ग्रामोंकी सामाजिक व्यवस्थामें पंचायतोंकी श्रेष्ठता फिर भी रही। इन पंचायतोंने जातिका रूप धारण कर लिया। हरएक जातिकी अलग-अलग पंचायत हो गई। जातीय व्यवस्थाओंमें इन पंचायतोंका निर्माण सर्वोपरि रहा। कोई व्यक्ति अपने समाजकी पञ्चायतका निर्णय नहीं टाल सकता। पर आगे चलकर लोगोंके जीवनमें इतनी प्रतिक्रिया हुई कि ये पंचायतें भी नगण्य हो गईं और लोग सभी मामलों में अदालतोंमें जाने लगे।

भारतीय ग्रामोंकी आज जैसी निरीह अवस्था है, वैसी ही अवस्था सन् १९१७ के पूर्व रूसकी थी। पर उसके उपरांत सोवियट पद्धतिने जिस आधारपर ग्रामोंका संगठन किया,

भारतकी ग्रामीण पंचायतोंका भी उस रूपमें निर्माण हो सकता है। रूसकी 'सेलो-सोवियट' संस्था ग्रामीण पंचायतका रूप है। ग्रामके निर्वाचित किसान प्रतिनिधियों द्वारा उसका संगठन होता है। इस संस्थामें जमींदार, व्यापारी और बेकार व्यक्ति कोई स्थान नहीं पाते। सोवियट ग्राम-पंचायतमें वह व्यक्ति मत देनेका अधिकार रखता है और वह व्यक्ति निर्वाचनके लिए खड़ा हो सकता है, जो समाजके उपयोगी कार्यमें परिश्रम द्वारा या मस्तिष्क द्वारा क्रियात्मक भाग ले। जो व्यक्ति परिश्रम न करे, उसका ग्रामकी व्यवस्थामें कोई अधिकार नहीं है।

इस आधार पर रूसने ग्रामका निर्माण किया। ग्राम पंचायतका साधारण सदस्य प्रत्येक ग्रामीण स्त्री और पुरुष हो सकता है, जिसकी अवस्था १८ वर्षसे ऊपर हो। परिश्रम न करनेवाले संस्थाका सदस्य होनेका अधिकार नहीं रखते। जनसाधारणकी एक कौंसिल होती है, जो ग्रामकी नित्यप्रतिकी व्यवस्था करती है। साधारण सभाका जीवनकाल तीन वर्षका होता है। ये ही ग्राम पंचायतें सोवियट शासनकी आधारभूत हैं। रूसके ५९६८९० ग्राम और कुटियोंके द्वारा ७१७८० पंचायतोंका निर्माण हुआ। आठ और नौ संयुक्त ग्रामोंकी एक पंचायत निर्माण हुई। रूसकी कृषक जनता भारतके समान ग्रामोंमें रहती है। उत्तर पश्चिमी क्षेत्रमें कुछ ऐसे बिखरे हुए फार्म हैं, जो ग्रामोंसे जुदा है, किन्तु उनका भी ग्राम-पंचायतोंमें नेतृत्व है।

सोवियट रूसकी ग्राम-पंचायत केवल स्थानीय मामलों पर

ही विचार नहीं करती हैं, अपितु उन्हें जो नए अधिकार प्राप्त हुए हैं, उससे वे जिला, प्रदेश और सोवियट केन्द्रीय शासनके सम्बन्धमें भी निर्णय करनेका अधिकार रखती हैं। इससे देशके जीवनमें ग्राम-पंचायतोंका कितना महत्त्वपूर्ण स्थान है, वह सहजमें जाना जा सकता है। ग्राम-पंचायतके कार्य-क्षेत्रके सम्बन्धमें यह आम तौर पर प्रकट किया गया है कि वह अपनी सीमामें सभी नागरिक और अधिकारियों पर नियंत्रण करनेका अधिकार रखती है। अतः पंचायत ग्रामकी सरकारके रूपमें है।

ग्राम-सोवियट पूर्ण सत्ताधारी संस्था है। सोवियट कानून ने इन ग्राम-पंचायतोंको विशिष्ट अधिकार प्रदान किए हैं। वे शासन सम्बन्धी सारी व्यवस्थाएँ करती हैं। लोगोंको सजा देती हैं, दण्ड देती हैं और आवश्यकता पड़ने पर आर्डिनेंस निकालती हैं। इन ग्राम-पंचायतोंके तत्त्वावधानमें ग्राम-अदालतें कायम होती हैं जो लेन-देन और साधारण फौजदारीके मामलों का निर्णय करती हैं। संयुक्त कृषिकी प्रथा जारी होनेपर ग्राम-पंचायतें खेतीबारीके सम्बन्धमें आदेश देती हैं, निरीक्षण करती हैं और हिसाबकी देखभाल करती हैं। वे यह सदा खयाल रखती हैं कि ग्रामका कोई व्यक्ति कानूनका उल्लंघन न करने पावे।

ग्रामोंके नजदीकमें राज्य द्वारा संचालित फैक्टरियों और व्यापारिक संगठनों पर इन पंचायतोंकी निगाह रखती है। उनका माल खरीदनेके लिए ग्राम-उपभोक्ता सहकारी समितियों

का संगठन होता है। ये समितियाँ ग्रामीणोंके लिए आवश्यकतानुसार माल खरीदती हैं। वे कभी इतना माल नहीं खरीदतीं, जिनके बिल चुकाना ग्रामीणोंके लिए भारी हो। सारांश यह कि ग्रामकी व्यवस्थामें ऐसा कोई कार्य नहीं है, जिसके पूरा करनेकी ग्राम-सोवियट क्षमता न रखे। ग्रामके व्ययसे सड़कें ठीक होती हैं, पानीकी आमद की जाती है, क्लब, नृत्यगृह, आमोद-प्रमोद, थियेटर, स्कूल, अस्पताल और अन्य संस्थाओंका संचालन होता है।

इस प्रकार ग्रामके क्षेत्रमें सेलो-सोवियट, सोवियट ग्राम-पंचायत 'सर्वप्रभुतासम्पन्न' हैं अर्थात् उसका ही एक मात्र शासन है। उसे किसी उच्च अधिकारीसे आदेश नहीं लेना पड़ता। ग्रामोंमें पंचायतों द्वारा लोगोंके जीवन-स्तरको उच्च करनेमें जो सार्वजनिक व्यय होता है, उसमें सरकार कोई हस्तक्षेप नहीं करती है। सोवियट शासनका प्रत्येक केन्द्रीय विभाग रूसके ७०००० ग्रामोंमें अधिकसे अधिक नवजीवन उत्पन्न होनेकी कामना करता है। सोवियट शासनके सारे मंत्रि-मंडलकी शक्तियाँ ७०००० ग्रामोंकी पंचायतोंको बलशाली बनानेमें योग देती हैं। इन्हीं पंचायतोंके बल पर सोवियट शासनने अप्रतिम शक्ति अर्जित की है।

सोवियट ग्राम-पंचायतोंको निम्नलिखित अधिकार प्राप्त हैं :-

१—कृषिके क्षेत्रमें—

१—अंक-गणनाका अधिकारी निर्वाचित करना। ग्रामीणों

के प्रतिनिधियोंमेंसे इसकी नियुक्ति होती है, जो ग्रामके उत्पादन आदि सम्बन्धी अंक तैयार करता है।

(२) प्रत्येक घरकी सामग्रीका रजिस्टर रखा जाता है।

(३) पशुओंकी देखभाल करना।

(४) संयुक्त कृषिकी योजनाओंका निर्धारण करना और उनकी स्वीकृति देना तथा अन्य सहकारी संगठनोंके संचालनकी व्यवस्था करना।

(५) संयुक्त-कृषिके लिए नये प्रयोगोंकी स्वीकृति देना।

(६) संयुक्त कृषिमें खेतोंके लिए मजदूर और विशेषज्ञोंको काम बांटना और पूर्ण अनुशासन कायम रखना जिससे कि, किसान, मजदूर और विशेषज्ञ कोई भी नियमोंको न तोड़ सके।

(७) कृषि-क्षेत्रकी वृद्धिके लिए सभी आवश्यक प्रयत्नोंको जारी करना और अधिक उत्पादनके लिए ग्रामकी सारी शक्ति लगाना तथा फसलकी रक्षाके लिए सभी उपाय काममें लाना। कृषि-सुधारकी सभी नई योजनाओंको व्यवहारमें लाना।

२—ग्राम-उद्योगके क्षेत्रमें—

(१) ग्राम-पंचायतके संचालनमें उद्योग चलते हैं।

(२) पंचायत खाद, चूना और मिट्टी आदिका संग्रह करती है।

(३) पंचायत कुटीर धन्धोंको प्रोत्साहन देती है और वह कारीगरोंको कच्चा माल उपलब्ध करने तथा तैयार मालकी बिक्री में हर प्रकारका सहयोग प्रदान करती है।

(४) पंचायत ग्रामकी सीमामें चलनेवाले सभी प्रकारके उद्योग और कारबारकी देखभाल करती है।

३—जंगलकी व्यवस्थामें—

पंचायत स्थानीय उपयोगिताके कार्योंमें जंगलकी देखभाल करती है।

पंचायत लकड़ी और अन्य रासायनिक वस्तुओंकी उत्पतिका विकास करती है।

पंचायत अपने ग्रामकी सीमाके जंगलकी समस्त लकड़ी और अन्य पदार्थोंकी पूरी देखभाल करती है।

४—वस्तुओंके आमद और व्यापारके क्षेत्रमें—

(१) सहकारी संगठनोंमें स्थानीय जनताको सहयोग देनेके लिए प्रेरित करना और इन संस्थाओंकी उन्नति करना।

(२) जिन किसानोंके पास जमीन नहीं हैं, उनके रहने और कामकाजकी सहकारी संगठनोंके अन्तर्गत व्यबस्था करना।

(३) ग्रामके मकान, दूकान और अन्य स्थानोंका किराया नियत करना।

५—आर्थिक सम्बन्धमें—

(१) जमीनका कर और किराया आदि वसूल करना।

(२) जुर्माना इकट्ठा करना और जो लोग कर या जुर्माना आदि न अदा करें उनकी सम्पत्ति नीलाम करना।

(३) ग्राममें जिन लोगोंकी जितनी जायदाद है तथा जिनकी

जितनी आय होती है, उसकी सूची तैयार कर उच्च अधिकारियोंके पास भेजना।

(४) जनताके स्व-कर निर्धारणकी व्यवस्था करना।

६—स्थानीय शासनकी व्यवस्था—

(१) ग्रामके समस्त मकान, विद्यालय और अस्पतालके मकानोंकी व्यवस्था करना।

(२) स्थानीय पुल, सड़कें, और तालावकी व्यवस्था करना तथा ग्रामकी स्वच्छता और सफाईकी ओर पूरा ध्यान देना।

७—मजदूरोंके सम्बन्धमें—

पंचायत स्थानीय लोगोंको आवश्यकतानुसार सार्वजनिक कार्योंकी ओर आकर्षित करती है। सड़कें तैयार करना, यातायात तथा ग्रामके अन्य साधनोंके निर्माणके लिए मजदूरोंकी आवश्यकता पड़ती ही है।

८—शिक्षा और स्वास्थ्य—

(१) ग्राममें निरक्षरताका अंत करना। शिक्षा-संस्थाओं द्वारा सब प्रकारके शिक्षणकी व्यवस्था करना।

(२) वालकोंकी शिक्षाकी पूरी देखभाल करना। निराश्रित और अनाथ वालकोंकी शिक्षा तथा जीवन-यापनकी व्यवस्था करना और उनके लिए संरक्षक नियुक्त करना।

(३) सरकारको कृषि और औद्योगिक शिक्षामें सहयोग

देना। विभिन्न विद्यालय और फैक्टरियोंमें शिक्षित नवयुवकोंको काम देनेकी व्यवस्था करना।

(४) अस्पताल और स्वास्थ्यका संचालन करना। ग्रामके बजट के आधारपर इन संस्थाओंका कार्य विस्तार पाता है।

(५) प्रत्येक व्यक्तिको स्वास्थ्य सम्बन्धी साहित्यका ज्ञान देना और शारीरिक शक्तिवर्धनकी ओर आकर्षित करना। किसीको निर्बल, सुस्त तथा बेकार न रहने देना।

९—सुरक्षाके क्षेत्रमें—

(१) ग्राममें जो नवयुवक सेनाके लिए उपयुक्त हों, उनकी सूची रखना।

(२) युद्धमें काम आने लायक घोड़े, गाड़ियाँ और अन्य आवश्यक सामानकी सूची तैयार रखना।

(३) सेनाकी भर्तीमें योग देना।

१०—न्याय और शान्तिकी स्थापनाके लिये—

(१) ग्राममें सिविल और फौजदारी मामलोंके निर्णयके लिए अदालतें कायम करना।

(२) अदालतोंके फैसलोंका पूरी कड़ाईसे पालन कराना। उत्पात, हुड़दंग और जुआ तथा शराबके नशेके लोगोंको नियंत्रण में लाना जिससे लोग गुप्त शराब न बनाएँ और न बेचें।

(३) सब जुर्मानोंको वसूल करना।

११—व्यवस्थाके क्षेत्रमें—

(१) दस्तावेजोंका इन्दराज करना और परिचय-पत्र जारी करना।

(२) व्यवस्था सम्बन्धी कार्योंकी लम्बी सूची सोवियट विधानके अन्तर्गत तैयार की गई है, ग्राम-सोवियट-पंचायत उन सब कार्योंके करनेका पूर्ण अधिकार रखती है। अपने ग्रामीण क्षेत्रमें सोवियट-पंचायत सभी कार्योंके लिए स्वतंत्र है। इन्हीं अधिकारोंसे दलित सोवियट किसानोंमें राजनीतिक चेतना उत्पन्न हुई और उन्होंने स्वतंत्रताका अनुभव किया।

सोवियट पंचायतोंके संगठनकी यह रूप-रेखा इस देशमें ग्राम-पंचायतोंके निर्माणमें पूर्ण सहायक हो सकती है। राजनीतिक विचारधाराका खयाल न कर ग्राम-पंचायतोंका क्रियात्मक संगठन होना चाहिए। देशकी सत्ताका सूत्रपात ग्राम-पंचायतों द्वारा होना चाहिए। ग्राम ही शासनका मूल-आधार है। उसीके सहयोगसे सारी व्यवस्थाएँ चलती हैं। भारतमें सर्वत्र इस प्रकारके पंचायत-संगठनोंकी आवश्यकता है, जिन्हें ग्राम व्यवस्थाके पूर्ण अधिकार प्राप्त हों। ग्रामके मामले-मुकदमे विकास और आर्थिक तथा सामाजिक व्यवस्थाओंके निर्णय तथा संचालनमें पंचायतें पूर्ण क्षमता रखनेवाली हों। ग्रामोंके लोग मामले मुकदमोंके लिए शहरोंकी अदालतोंमें न दौड़े आएँ और न ग्रामकी व्यवस्थामें प्रादेशिक शासनका सर्वदा हस्तक्षेप ही हो। अतएव इस प्रकारके पंचायतोंके संगठनोंकी पूर्ण आवश्यकता है, जिनके सदस्योंका निर्वाचन ग्रामके बालिग मताधिकार के आधार पर हो और उन्हें विस्तृत अधिकार प्राप्त हों। पिछले कई वर्षोंसे कई प्रदेशोंमें पंचायतोंका निर्माण आरम्भ हुआ है, पर उन्हें वस्तुतः विशेष अधिकार प्राप्त नहीं हैं।

भारतीय किसानोंमें पंचायत सम्बन्धी नई और पुरानी भावनाओंके जाग्रत करनेकी आवश्यकता है। इस देशमें पंचायत राजका अस्तित्व युग-युगसे चला आया है। प्राचीन कालमें राज-शासन भी पंचायतके आधीन रहता था। रामायण और महाभारत जैसे ऐतिहासिक ग्रन्थोंमें पंचायतोंकी महत्ताका वर्णन है। महाराज दशरथ और भरतके निर्णय पंचायतोंके आधीन थे। शुक्राचार्यने नीतिसारमें ग्राम-पंचायतोंके विस्तृत कार्योंका भलीभांति उल्लेख किया है, जो अठारहवी शताब्दीकी रूसी पंचायतोंसे मिलता जुलता है। इस देशमें अंग्रेजोंके आनेके पूर्वकाल तक ग्रामोंमें पंचायतोंकी सत्ता थी। पर जब ब्रिटिश शासनमें जिलोंमें शासन-सत्ता केन्द्रीभूत हुई, तब ग्रामोंमें पंचायतें लोप हो गई। केवल छोटी जातियोंमें जातीय पंचायतें उत्तर-प्रदेश, पंजाब और दक्षिण आदि प्रदेशोंमें बनी रहीं। कई प्रदेशोंमें व्यवस्था सम्बन्धी पंचायतें अंग्रेजी राज्यमें भी नए सिरेसे अस्तित्वमें आई, जिनका कार्य साधारण मामलोंको निपटाना मात्र रहा। साधारण चोट, चोरी, पशुओंका खेत लांघना और अन्य साधारण झगड़ोंके निपटारेमें इन पंचायतोंने योग दिया। पर उनके अधिकार सीमित होनेके कारण वे ग्राम के निर्माणमें पूरा योग नहीं दे सकीं।

नए भारतका निर्माण ग्राम-पंचायतों द्वारा होना चाहिए। भारतके ग्राम-ग्राममें पंचायत संगठन हो। ये संगठन प्रादेशिक शासनके सभी विभागोंके सूत्रपात हों। सरकारका हरएक

अन्नपूर्णा भूमि—
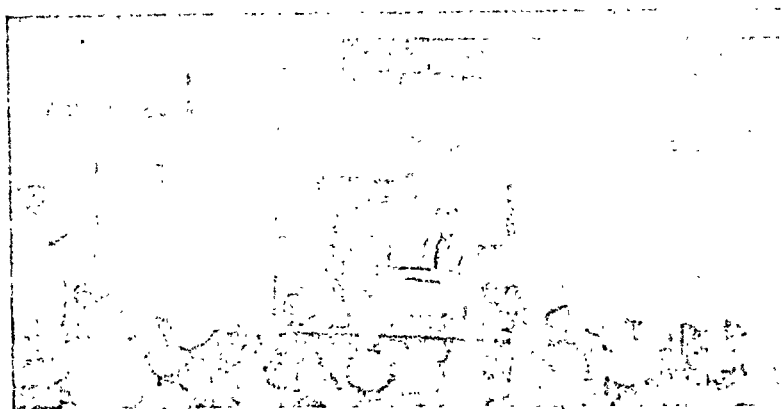
पंचायतघर में रेडियो
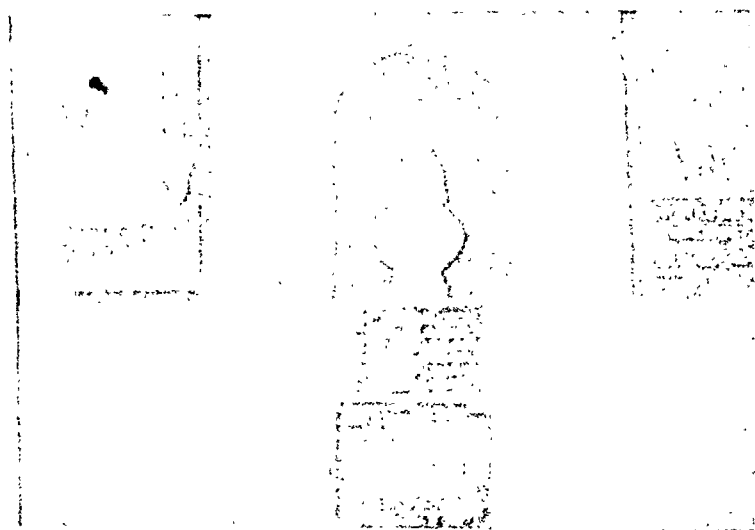
पंचायतघर का अंतरंग

अन्नपूर्णा भूमि—
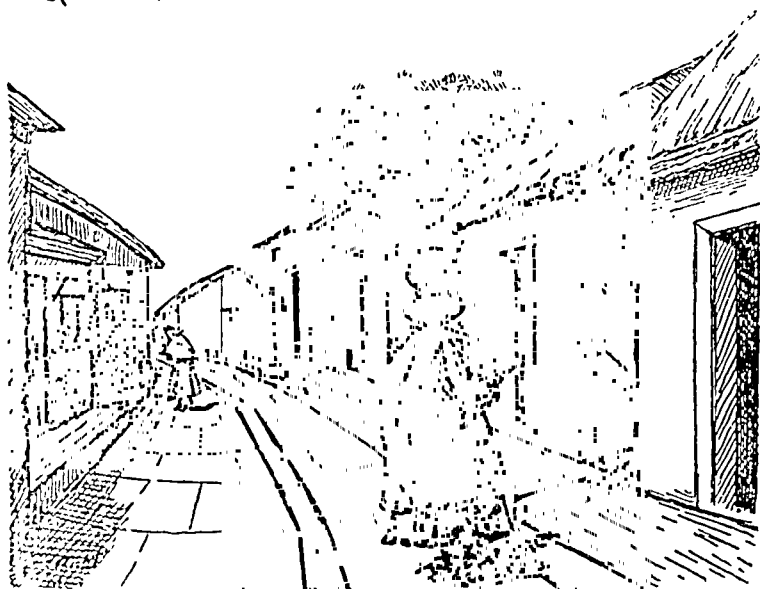
आदर्श ग्राम की नई पक्की सड़कें और गलियाँ
तथा हवादार मकान

ग्राम में श्रमदान
ग्रामीणों द्वारा तैयार की गई कंकरीट की सड़क

कार्य पंचायत पर आधारित हो। ग्रामीणों द्वारा पंचायतका निर्माण हो, जिसे ग्रामके सम्बन्धमें जुडीशियल अधिकार प्राप्त हों। ये संगठन ग्रामके आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विकासमें पूर्ण योग दें। जिस-जिस प्रकार पंचायतोंका संगठन बलशाली होता जाए, उनके जुडीशियल अधिकारोंका वृद्धि हो। पर आरम्भमें सौ रुपए या इससे अधिक दीवानी मामलोंका निर्णय पंचायतों द्वारा हो। साधारण मार-पीट, चोट, खेतोंके झगड़े और मामूली चोरी आदिके मामले भी पंचायतों द्वारा तय हों। ग्राम-पंचायतें सौ रुपए तक दण्ड देनेका कानूनी अधिकार रखें।

दस ग्रामोंके संयुक्तीकरण द्वारा हल्का पंचायतका निर्माण किया जा सकता है। इस पंचायतका विशेष महत्व है। यह सोवियट रूसकी 'सेलो-सोवियट'के समान होगी। ग्राम-विकास का संगठन-कर्ता इसका मंत्री होगा और उसमें प्रत्येक ग्रामसे पाँच मंत्री होंगे। दस ग्रामोंके पचास सदस्योंकी पांच समितियां होंगी। प्रत्येक समितिके दस सदस्य होंगे। ये समितियां होंगी:—व्यवस्थापक समिति, न्याय समिति, कृषि-समिति, सहकारी क्रय-विक्रय, ग्रामधंधे और मजदूर समिति और स्वास्थ्य, शिक्षा, और सांस्कृतिक प्रचार समिति। ये समितियां ग्राम-पंचायतोंको हर प्रकारसे सहयोग देंगी। यह सम्भव नहीं है कि, हरएक ग्राम अपने साधन और शक्तियों द्वारा पूरा विकास करनेमें समर्थ हो। अतएव दस ग्रामोंकी सम्मिलित शक्तिसे

ग्राम-विकास अधिक सम्भव होगा। व्यवस्थापक समिति प्रत्येक ग्राम-पंचायतके दिन-प्रति-दिनके कार्यमें सहयोग देगी। वह पत्र-व्यवहार और हिसाब-किताब रखेगी। न्याय समिति मामलों पर विचार करेगी। ग्रामोंके मुकदमे इस समितिके पास आएँगे। दलबन्दी, व्यक्तिगत शत्रुता और लड़ाई झगड़ोंके कारण अक्सर ग्रामीण अपनी ग्राम-पंचायतमें विश्वास नहीं करते हैं। इसलिए ये मुकदमे हल्का पंचायतके पास आते हैं। पर जहाँ तक सम्भव हो, अधिकसे अधिक मामले ग्राम-पंचायतों द्वारा तय होने चाहिए। ग्राम-पंचायतका मुखिया या सरपंच तथा सदस्य उस मामलेमें दूसरे प्रतिनिधियोंको बिठाएँ, जिसमें देखा जाए कि विचाराधीन मामलेके व्यक्तिके प्रति उनकी शत्रुता है। यद्यपि पंचायतके अधिकारी होकर हरएक सरपंचको निष्पक्ष होना चाहिए, जिसके प्रति उसकी व्यक्तिगत शत्रुता हो, उसके प्रति वह न्याय करे। पंचायतके अन्दर किसीके प्रति पक्षपात न हो। हल्का पंचायतको अधिकार हो कि वह दीवानीके ५०० रुपए तकके मामले चला सके और फौजदारीके मारपीट, चोट, दंगा और धोखाधड़ीके मामलोंमें छः मासकी सजा और ५०० रुपए तक दंड देनेका उसे अधिकार हो। स्थानीय पुलिस पंचायतके आदेशका पालन करे। इस प्रकार पंचायतों द्वारा मामले तय होने पर लड़ाई-झगड़े कम होंगे, लोगोंमें नैतिकता आएगी और वे अदालतोंके भारी व्ययसे बचेंगे।

कृषि-समिति कृषि-विकासका कार्यक्रम प्रति वर्षके लिए

निरधारित करेगी। पशुपालन, कृषि-भूमि और जंगलका उपयोग, वनस्पति तथा वृक्षोंकी रक्षा, और खेती नष्ट करनेवाले कीड़ोंके विनाश आदिकी व्यवस्था समिति करेगी। जब पंचायतके प्रयत्नसे संयुक्त-कृषिका विकास हल्केके ग्रामोंमें होगा और छोटे-छोटे खेतोंके बड़े फार्म बनेंगे, तब उन सहकारी कृषि खेतों का पंचायत पूर्ण निरीक्षण करेगी। वह यह निश्चय करेगी कि किन-किन फार्मोंमें किन पदार्थोंकी उपज की जाए। इसके अतिरिक्त ईंधन, पशु-घास, फल और वृक्ष तथा बागवानी आदि की ओर भी पंचायत ध्यान देगी। अच्छे बीज, खाद, और कृषि औजार आदिकी व्यवस्था करेगी। क्रय-विक्रय सहकारी समिति ग्रामोंके उत्पादनके विक्रयका प्रबन्ध करेगी। वह खाद्य पदार्थ, कच्चा माल तथा ग्रामीण-धंधों द्वारा तैयार वस्त्रोंका स्टाक रखनेकी समुचित व्यवस्था करेगी। ग्रामोंमें नए-नए उद्योगोंको जन्म देकर आर्थिक दृष्टिसे उन्हें स्वावलम्बी बनानेका प्रयत्न करेगी। ग्रामीणोंके लिए स्टोर भी खोलेगी, जिसमें दवाइयाँ, साबुन और अन्य सभी आवश्यक वस्तुएँ विक्रीके लिए रहेंगी। स्वास्थ्य, शिक्षा और सांस्कृतिक समितिका संचालन सुधारवादी पुरुषोंके अधिकारमें होगा। यह समिति शिक्षा, पुस्तकालय, और ज्ञानवर्द्धनके अन्य साधनोंकी व्यवस्था करेगी। ग्रामोंमें नृत्य, संगीत और अन्य मनोरंजन समारोहोंका आयोजन करेगी। ग्रामीणोंको जातीय पर्वोंका वास्तविक महत्व बताएगी। धार्मिक तथा सामाजिक संकीर्णताएँ तथा संकुचित

विचारोंसे मुक्त कर सब ग्रामवासियोंमें सच्ची मानवताके भावों का उदय करेगी। शादी विवाह, रीति-रस्म और धार्मिक कार्योंमें होनेवाले अपव्ययोंको रोकेगी। आज जिस रूपमें हजारों और लाखों ग्रामीण पर्वोंके समय स्नान आदिके लिए दौड़ पड़ते हैं, उसकी अपेक्षा उन्हें सच्ची यात्राका महत्व बतायेगी। आज तो शक्ति और धन—दोनोंका अपव्यय होता है। वस्त्र, वेशभूषा और आभूषणोंके उपयोगमें क्रान्तिकारी परिवर्तनकी आवश्यकता है। चांदीके भारी जेवरोंका सर्वथा परित्याग होना चाहिए। किसान पुरुष और स्त्रियोंकी वेशभूषा चुस्त और वीरताकी होनी चाहिए। कृपक राष्ट्रके उत्पादनके सैनिक हैं, अतएव उनकी पोशाक भी उसीके अनुरूप हो। शादी, विवाह और मौतके अवसर पर अधिक व्यय न हो। सब कृत्य सादगी और पवित्रतासे किए जाएँ। भारी व्यय करनेसे न तो समाज में कोई प्रतिष्ठा होती है और न पुण्य ही अर्जन होता है। दीन-दुखी और पीड़ितोंकी सहायता तथा अतिथिका स्वागत और सेवा-शुश्रुषा करना ग्रामवासियोंका परम कर्तव्य हो। ग्रामीणोंमें ऊँच-नीचका भेदभाव न हो। मनुष्यमें भेद करना अज्ञानताका सूचक है। अतएव ग्राममें कोई किसी जाति और वर्णका हो, सबका एक समान आदर होना चाहिए। ग्रामके जीवनमें कोई छोटा-बड़ा नहीं है। पंचायत इस सामाजिक-सुधारमें पूर्ण योग दे। इसके अतिरिक्त शराब, गांजा और तमाखू आदिके नशोंके विरुद्ध आन्दोलन करे। जातीय भेदभावके दुर्गुण, पर्दा, बाल-

विवाह, वृद्ध विवाह और अनमेल विवाह तथा अन्य कुरीतियों से लोगोंको मुक्त करनेका प्रयत्न करे। इस प्रकार पंचायतके प्रयत्नसे ग्रामोंमें नवजीवन उत्पन्न होगा। इस सामाजिक कार्यके लिए सच्चे कार्यकर्ताओंकी आवश्यकता है।

पंचायतोंके उपयुक्त संगठन तथा कार्य-संचालनके लिए नियमित आर्थिक श्रोतोंकी व्यवस्था हो। जमीनके लगानके साथ अतिरिक्त कर लगनेसे पंचायतोंकी आय निश्चित हो जाएगी। इसके लिए राज्यके विधान मण्डलों द्वारा कानून स्वीकृत किए जाएँ। इसके अतिरिक्त जुर्माना, दान और सहायता तथा अन्य ग्रामीण करोंसे भी पंचायतोंको आय होगी। हल्का पंचायतें ५०० ग्रामोंकी तहसील पंचायतका निर्माण करेंगी और आजकलके जिला बोर्डोंके स्थान पर तहसील पंचायतें जिला पंचायतोंका संगठन करेंगी। फिर आगे चलकर जिला पंचायतें औसतन दस हजार ग्रामोंकी डिवीजन-पंचायतें निर्माण करेंगी। जो प्रान्तीय विकास-बोर्डके आधीन होगी। इस प्रकार ग्रामका लोकतन्त्र राज्य भरमें विस्तार पाएगा।

ग्रामोंमें आज नई भावनाके उदयकी आवश्यकता है। राज्यका कार्य है कि वह सहस्रों कार्यकर्ता ग्रामोंमें कार्य करनेके लिए तैयार करे और उनकी नियुक्तियां राज्य भरमें हो। इन कार्यकर्ताओंका लक्ष्य ग्रामोंका नव-निर्माण करना हो। वे ग्रामोंकी समस्याओंके लिए जिएँ और मरें। राज्य सरकारी लगानका एक भाग ग्राम-विकास तथा संगठनके लिए व्यय करे।

राज्यके कंधों पर नई जिम्मेदारियाँ आई हैं। अब सरकार का कार्य केवल कर वसूल करना और पुलिसका इंतजाम करना-मात्र नहीं है। शासनके अवलम्ब किसान और मजदूर हैं और उनके उद्धारकी कोई योजना तब तक सफल न होगी, जब तक कि अधिकारी-वर्ग सच्ची भावनाओंसे उसे क्रियान्वित न करेगा। ग्राम-ग्राममें नई भावनाएँ और नया जीवन उत्पन्न करना है। ग्रामोंमें शांतिमयी क्रान्तिकी अपेक्षा है जिससे हर-एक किसानके जीवनमें नूतनता आए।

आज कई राज्योंमें राज्य सरकारोंके नेतृत्वमें ग्राम पंचायतोंका विकास हो रहा है। उत्तर प्रदेश राज्यने 'पंचायत राज कानून' स्वीकृत कर उनके अस्तित्वको वैधानिक रूप प्रदान किया है। ग्राम-पंचायतोंको ग्रामकी व्यवस्था और मामला-मुकदमा तय करनेकी भी अधिकार मिले हैं। ये ही पंचायतें जमींदारी समाप्त होनेपर ग्रामका लगान वसूल कर सीधे सरकारी खजानेमें जमा करेंगी। इसलिए उनके कार्य और जिम्मेदारियाँ अधिक बढ़ गई हैं। इन पंचायतोंका संगठन चुनाव द्वारा होनेके कारण साधारण लोगोंको भी ग्रामके नेतृत्वका अधिकार मिलता है। पंचायतका पद सेवा और विश्वासका है। जिसे भी बहुमतसे चुना जाय, उसका नेतृत्व सबके लिए मान्य है। सार्वजनिक कार्योंमें हमें जातीय भेदभावोंको स्थान न देना चाहिए। ग्रामके लिए जिन्हें पंचायतमें चुने, वे पंच परमेश्वरके रूपमें है। उनका कर्तव्य है कि ईमानदारी और सच्चाई तथा स्वार्थ-त्यागसे ग्रामकी सेवा करें।

हर एक पंचायत-घरमें पुस्तकालय, औषधालय, बीजभण्डार खाद-भवन, कृषि-औजार-गृह, और पशु-केन्द्रशाला तथा अनाज-भण्डार और दवाइयां तथा सामान आदिका स्टोर आदि भिन्न-भिन्न कमरे हों। कमसे कम पांच-छः कमरे होने चाहिए। लायब्रेरी भवनमें वाचनालय तथा रेडियो लगा हो। ग्रामोंमें विद्युत् आने पर रेडियो बिजलीसे चलने लगेंगे पर तब तक उनका उपयोग बेटरीके द्वारा हो सकता है। ग्रामीणोंको प्रति दिनके ताजे समाचार मिलने चाहिए। प्रातःकाल और संध्यामें रेडियो द्वारा समाचार सुनाए जा सकते हैं। ग्राममें व्यायामशाला, बाग और छोटासा मैदान सार्वजनिक सभाके लिए हो। रात्रि-पाठशालाएँ भी हों, जहां वयस्क लोगोंको शिक्षा दी जाए। किसी ग्राममें कोई अशिक्षित न रहने पाए।

पंचायती व्यवस्था द्वारा बागवानी हो। फलोंके वृक्ष लगाए जाएँ, जिनका ग्रामवासी उपयोग करें। अधिक फल पैदा होने पर बेचे जा सकते हैं। पंचायत-घरमें एक दो कमरे अतिथियों के निवासके लिए हों। सरकारी अधिकारी भी इन कमरोंमें ठहर सकते है। अब ग्राममें यह अनुभव किया जा रहा है कि उनका भी अन्य देशोंके आधारपर नवीन संगठन होना चाहिए। सदियोंकी गहरी नींदके उपरांत भारतीय ग्रामोंमें नव-जागरणकी आवश्यकता है। ग्रामीण लोगोंकी शक्तियोंका सदुपयोग किया जाए। ग्रामोंमें नव-निर्माणके कार्य पंचायतों द्वारा ही हो सकते हैं। पंचायतोंके शक्तिशाली बनने और ग्रामीणोंमें नव

चेतना आने पर ही विकास सम्बन्धी कार्योंमें सफलता प्राप्त होना संभव है। अशिक्षित और असंगठित तथा पुराने संकीर्ण भावोंसे ओत प्रोत किसानोंको नए जीवनमें लाना आसान नहीं है।

पर किसी भी योजनाकी पूर्तिमें बराबर लगे रहनेपर उसमें सफलता प्राप्त होना निश्चित है। सरकारी सहायतापर ही आश्रित न रहकर ग्रामवासी स्वयं अपने परिश्रम और साधनों द्वारा ग्रामोंमें सभी कार्योंको आरम्भ करें। ग्रामकी सड़कें, पंचायत-घर, विद्यालय, पुस्तकालय, तालाव, उपवन, खेल-कूदका मैदान चिकित्सालय, पशुशाला, और कम्पोस्ट खादके गड्ढे आदिकी व्यवस्था वे सव मिलकर करें। प्रत्येक ग्रामवासीका कर्तव्य है कि वे किसीसे लड़ाई झगड़ा न करें और ग्रामका जीवन अशांतिमय न बनाए। आज ग्रामोंकी बड़ी शोचनीय अवस्था है। मारपीट, हत्याएँ और उपद्रव किसी भी ग्रामके लिए आम बात है। यह जीवन ग्रामोंमें विकास पा रहा है। जिन मनोवृत्तियोंसे लोगों में ये भावनाएँ उत्पन्न होती हैं, उनका नाश होना चाहिए। एक ग्रामवासीका चरित्र सदाचार, शांति, प्रेम और सौहार्दका प्रेरक हो। वह ग्रामीण नहीं है, जो लड़े-झगड़े। उन्हें देखना चाहिए कि शहरोंके मजदूरोंमें कितनी एकता है। किसी मजदूर को कोई क्षति पहुँचती है, तो उसके हितके लिये सबके सब मजदूर कारखानेमें हड़ताल कर देते हैं। मजदूर कभी आपसमें लड़ते हुए नहीं पाए जाते। तब ग्रामीण ही क्यों लड़ें-झगड़ें? पंचायत

उनके धंधेकी ट्रेड-यूनियन है और ग्राममें बसनेवाले सब लोग एक दूसरेके साथी-कामरेड हैं। उनके लिए अशोभनीय है कि वे लड़े झगड़ें। पर लड़ाई झगड़ेके कारण ग्रामोंमें केवल एक धंधा फल-फूल रहा है और वह है अदालतकी मुकदमेबाजी। अधिकांश किसानोंकी प्रसन्नताके लिए केवल यही काम रह गया है और जो मामले वे ग्राममें तय कर सकते हैं, उनके लिए वे अदालतोंमें दौड़े जाते हैं और अपनी गाढ़ी कमाईको वकील, मुख्त्यार, दरख्वास्त लिखनेवाले मुन्शी और अदालतोंके बेईमान चपरासी और अहलमदोंको देनेमें फूँकते हैं। पर किसान प्रतिज्ञा करें कि उनके सारे मामले पंचायती अदालतों द्वारा तय होंगे। यदि किसीने अन्याय किया है तो वह उसे कबूल कर ले और कभी अपने पक्षमें निर्णय प्राप्त करनेका प्रयत्न न करे।

भूमिका राष्ट्रीयकरण

'सामाजिक दृष्टिसे, जो कि आर्थिक दृष्टिसे कम महत्वपूर्ण नहीं है, भूमि सम्बन्धी नीति उसी हदतक उचित समझी जाएगी, जिस हद तक वर्तमान समयमें और भविष्यमें सम्पत्ति और आयकी असमानताको कम करनेवाली होगी, शोषणको मिटानेवाली होगी, किसान और मजदूरको सुरक्षा पहुँचानेवाली होगी और अन्तमें ग्रामीण जनताके विभिन्न वर्गोंके जीवन-स्तरमें समानता लानेवाली होगी।' —योजना आयोग

भारतमें अधिक अन्न उत्पादन किसानोंकी समस्या हल हुए बिना सम्भव नहीं है। आज राष्ट्रका अस्तित्व और उसकी सुख-शान्ति किसानकी गति-विधि पर निर्भर है। किसान ऐसे मोर्चे पर ही खड़ा है। उसके हाथमें राष्ट्रकी जिन्दगी है। पैंतीस करोड़ जनसंख्यामें तीस करोड़ किसान हैं और उनके उत्थानकी समस्याका एक ही हल है कि भारतमें जमीनका समान आधार पर बँटवारा किया जाए। नई चकबन्दी राष्ट्रके लिए अत्यन्त आवश्यक है। अतएव भारतीय संविधान द्वारा समस्त भूमिको राष्ट्रीय सम्पत्ति मान लिया जाए अर्थात् उस पर राज्य का अधिकार करार दिया जाए। यह होने पर ही देश नई क्रान्ति तथा बगावतसे अपनी रक्षा कर सकता है। यदि यह शीघ्रतम न हुआ तो भारतके एक दो हिस्सेमें जो स्थिति हुई, वह एक दिन सारे देशकी हो जाएगी।

भूमिके राष्ट्रीयकरणको चाहे जैसा भी उपाय कहा जाए,

उसके हल किए विना कोटि-कोटि किसानोंकी अवस्था न सुधरेगी। भले ही यह प्रयत्न क्रान्तिकारी हो, उग्रतम हो, किन्तु हमें उसका अवलम्बन लेना ही पड़ेगा। राष्ट्रीय सरकारोंने राज्योंमें इस ओर अपना पैर बढ़ाया और जमींदारी प्रथाके उन्मूलनके लिए कानून बनाए। उत्तर-प्रदेश, विहार, मध्य-प्रदेश और मद्रास आदिमें जमींदारी उन्मूलनके कानून बनाए गए। इन कानूनोंको अवैध करार दिए जानेके सम्बन्धमें जमींदारोंके सारे प्रयत्न वेकार गए क्योंकि सर्वोच्च न्यायालयने उत्तर-प्रदेश के जमींदारी उन्मूलन तथा भूमिसुधार अधिनियम और मध्य-प्रदेशके स्वामित्व अधिकार अधिनियम तथा विहारके भी जमींदारी विनाश सम्बन्धी कानूनोंको वैध प्रकट किया। उत्तर-प्रदेश इस ओर आगे वढ़ा, और उसने जमींदारोंको क्षतिपूर्ति देनेकी घोपणा कर भूमिका स्वामित्व किसानोंको प्रदान किया।

कुछ राज्य सरकारोंने जमींदारोंके पंजेसे किसानोंको छुड़ाने और उन्हें उनकी खेतीकी जमीनका मालिक बना देनेकी जो व्यवस्थाएँ कीं, वे बड़ी महत्त्वपूर्ण हैं। वम्बई सरकारने भी निखंडन-निपेध नामक जो कानून बनाया, वह किसानोंके लिए हितकर है। इन सब प्रयत्नोंने किसानोंको जमीनका स्वामी बनानेका क्षेत्र तैयार किया है।

जमींदारी उन्मूलन तथा अन्य इसी प्रकारके कानून इस दिशामें आखिरी कदम नहीं है। यह तो जमीनकी समस्याको हल करनेका आरम्भ है। अब आगेका कदम यह होना चाहिए कि

समस्त जमीन पर केवल खेती करनेवाले किसानोंका अधिकार कायम हो। ऐसे किसी व्यक्तिका जमीन पर अधिकार न हो, जिसकी आजीविका कृषि न हो और जो स्वयं खेतोंमें काम न करता हो। आज अनेक व्यक्ति भूमिधर बन गए हैं और जमींदारी उन्मूलनके उपरान्त भी बड़े जमींदारोंका फिर भी बहुत बड़ी जमीन पर अधिकार बना रहता है। इस विषमताको मिटानेका क्रान्तिकारी कदम तो यह है कि समस्त जमीन राज्यकी घोषित होकर उसका समान वितरण खेती करनेवाले किसानोंमें किया जाए।

जब तक सरकार किसानोंमें भूमिका समान वितरण नहीं करती, तब तक भारतीय उत्पादनकी समस्या हल नहीं होती। इस प्रकार जब तक भूमिका राष्ट्रीयकरण नहीं होगा, तब तक कृषि-विकासके कोई भी प्रयत्न सफल न होंगे। जिस दिन खेती करनेवाले मजदूर किसान समान आधार पर जमीन पा जाएँगे, और जब वे एक सेनाके रूपमें खेतोंमें पैदावार बढ़ानेके प्रयत्नमें जुट पड़ेंगे, उस दिन सारी समस्याएँ हल हो जाएँगी। ग्रामकी समस्याएँ ही हल न होंगी, उत्पादन ही न बढ़ेगा, बल्कि किसानोंके जमीनके स्वामी होने पर देश साम्यवादके खतरेसे भी रक्षा पाएगा।

कृषिकी नई योजनाएँ और व्यवस्थाओंकी प्रगतियोंके लिए राष्ट्रीयकरणका प्रश्न अनिवार्य है। पर इस राष्ट्रीयकरणका यह रूप नहीं है कि आजके जिस तिस परिमाणमें ऐसे सब लोगोंके पास

जमीन रहे, जो खेती करें या न करें। फिर सरकार सोचे कि आज उसने जमींदारी प्रथाका विनाश किया है, दस पाँच वर्ष उपरान्त फिर नया कदम वितरण सम्बन्धी उठाए; तो समय उसकी प्रतीक्षा न करेगा। किसानोंकी समस्या इतनी संजीदगी की है, कि भूमिका वितरण तात्कालिक प्रश्न है। यदि इसे हल न किया गया तो करोड़ों किसान जमीनके अभावमें असन्तोष-पूर्ण स्थितिमें रहेंगे और उनकी चिन्ताएँ खतरनाक स्थितियोंको जन्म देंगी। एशियाके किसान जब तेजीसे आगे बढ़ रहे हैं, तब क्या भारतीय किसानोंकी समस्या एक युगके बाद हल होगी।

यांत्रिक-कृषि और सहकारी प्रथाके आधार पर कृषि विस्तार के लिए जमीनका राष्ट्रीयकरण और उसका समान वितरण आवश्यक है। सरकार जमीनका नया वितरण इस आधार पर करे, जो सहकारी रूपमें खेती करनेके लिए प्रस्तुत हों। सरकारके अधिकार-क्षेत्रमें जितनी भी नई जमीन आए, उसके वितरणका आधार सहकारी-संगठन हों। आगेसे सहकारी संस्थाओंको ही जमीन दी जाए। जमीन भले ही किसानोंके नामसे दर्ज हो, किन्तु उन सबका सहकारी-संगठन होना चाहिए। इस दिशामें सभी राज्योंका तीव्र गतिसे प्रयत्न होना चाहिए। धीरे-धीरे आगे बढ़नेकी व्यवस्था कभी कामयाब न होगी।

कृषि-उत्पादनकी सफलताकी एक ही चाबी है, जो कठिनाइयोंके पहाड़ोंको हटा सकती है और वह है—भूमिका राष्ट्रीयकरण।

खेती संबंधी कानून

खाद्यान्न और कच्चे मालके उत्पादनमें देशके आत्म-निर्भरता प्राप्त करने और उसकी स्वायत्तता कृषि व्यवस्थाके विकास पर निर्भर है। कृषि सम्पत्तिका समान वितरण होने और आयकी असमानता मिटने पर किसानोंके शोषणका अंत होना बहुत कुछ संभव है। किसान और खेतिहर मजदूर भूमिके मालिक बनें और उनके हितोंकी पूर्ण रक्षा हो, तभी ग्रामीण समाजका आर्थिक-स्तर समानताको प्राप्त हो सकता है।

ब्रिटिश शासन-कालमें बड़े जमींदारोंकी सृष्टि होने पर आम किसानोंके रक्तका जो शोषण हुआ और आर्थिक दृष्टिसे उन्हें जिस प्रकार निरापद रखा गया, उससे भारतीय कृषि उद्योगकी भयानक अवनति हुई। कृषि-क्षेत्रका उस अवस्थासे पुनरुद्धार होना वर्तमान कालकी सबसे बड़ी आवश्यकता है। पर जब तक भूमिका एक समान आधार पर पूर्ण वितरण न हो, तब तक करोड़ों किसानोंकी आर्थिक अवस्थामें उन्नति होना संभव नहीं है।

पर जमींदारी उन्मूलनके पश्चात् भी, जहाँ राज्य और किसानके बीचके लोगोंका वर्ग बड़े जमींदार, ताल्लुकेदार और मालगुजारके रूपमें समाप्त हुआ, वहां अन्य चार वर्ग फिर भी असमान्तर रूपमें बने रहते हैं, और वे हैं, बड़ी भूमिके मालिक, छोटी और बड़ी श्रेणीमें भूमिके मालिक, गैर

मौरूसी खेती करनेवाले किसान, और भूमि-हीन खेतिहर मजदूर। इन सबके पास कितनी भूमि है और भूमिहीन कितने और किस स्थितिमें हैं, इस संबंधके प्रामाणिक अंक उपलब्ध नहीं हैं।

भिन्न-भिन्न प्रदेशोंमें भूमि सम्बन्धी प्रश्नोंके अनुसंधानके लिए अब तक अनेक प्रयत्न किए गए। सन् १६३७ में प्रदेशोंमें राष्ट्रीय सरकारकी स्थापनाके समय किसानोंके जो अंक तैयार किए गए, वे निर्जीव और निष्प्राण साबित हुए। सन् १६४६ में प्रादेशिक सरकारोंने भूमिकी जांचके लिए जो समितियां नियुक्त कीं, उनके परिणामस्वरूप किसानोंकी अवस्थाके सम्बन्धमें अधिक जानकारी प्राप्त हुई। सन् १६४५ में बंगाल अकाल कमीशनकी रिपोर्टमें भारतीय कृषि-पर्यवेक्षण गंभीरतापूर्वक किया गया। सन् १६४६ में कांग्रेस कृषि सुधार कमेटीकी रिपोर्ट ने कृषि संबंधी प्रश्नोंकी गहरी जांच की। यह रिपोर्ट सारे देशकी अवस्था पर महत्वपूर्ण प्रकाश डालती है। इस रिपोर्टने अन्तर्राष्ट्रीय प्रसिद्धि प्राप्त की। अनेक विशेषज्ञोंका मत है कि भारतीय कृषि-प्रश्नोंकी यह सबसे महत्वपूर्ण रिपोर्ट है।

इसके अतिरिक्त समय-समय पर विभिन्न प्रदेशों और रियासतोंमें अन्यान्य कमेटियोंने कृषि सम्बन्धी प्रश्नोंकी जांच पड़ताल की। मद्रास भूमि अधिनियम कमेटी, १६३६, बंगाल मालगुजार कमेटी, १६३६, उत्तरप्रदेश जमींदार उन्मूलन कमेटी, १६४६, उड़ीसा मालगुजारी एवं काश्तकार कमेटी, १६४६, हैदरा-

बाद कृषि सुधार कमेटी, १९४९, राजस्थान—मध्यभारत जागीर जाँच कमेटी, १९४९, कोचीन भूमि प्रश्न कमेटी, १९४९, ट्रावनकोर-कोचीन भूमि-कमेटी, १९५१, सौराष्ट्र कृषि-सुधार कमीशन, १९५१, पटियाला पूर्वी-पंजाब रियासत संघ कृषि सुधार कमेटी, पंजाब भूमि सुधार कमेटी, मैसूर मालगुजार कमेटी और विलासपुर भूमि सुधार कमेटी, १९४९ आदि कमेटियोंने भूमि सम्बन्धी समस्याओंकी जाँच की।

सन् १९४६ से भारतके प्रदेशोंमें राष्ट्रीय सरकारें भूमि-सम्बन्धी अनेक कानूनोंकी रचना करनेमें आगे वढ़ीं। आसाम में सन् १९४८ में भूमि सम्बन्धी अधिकार रक्षक एवं नियंत्रण अधिनियम तथा आसाम राज्य जमींदारी उन्मूलन अधिनियम स्वीकृत हुए। बिहारमें बिहार भूमि सुधार अधिनियम, १९५० और बिहार काश्तकारी संशोधन अधिनियम, १९४६, १९४७, १९४८ और १९४९ स्वीकृत हुए। बम्बई प्रदेशमें बम्बई काश्तकारी एवं कृषि भूमि अधिनियम, १९४८, बम्बई भागदारी एवं नखादारी प्रथा उन्मूलन अधिनियम, १९४७, बम्बई-ताल्लुकेदारी प्रथा उन्मूलन अधिनियम, १९४९, बम्बई मालिकदारी प्रथा उन्मूलन अधिनियम, १९४९, पंच महाल मेहवासी प्रथा उन्मूलन अधिनियम, १९४९, बम्बई भूमि विभाजन प्रतिबंध एवं चकबंदी अधिनियम, १९४७ आदि स्वीकृत हुए।

कृषि रैयत एवं आसामी अधिकार प्राप्त अधिनियम, १९५०, और बरार कृषि कानून संशोधन अधिनियम, १९५० में

स्वीकृत किए गए। मद्रासमें मद्रास इलाका भूमि लगान घटाने का अधिनियम, १९४७, मद्रास इलाका भूमि उन्मूलन एवं रैयतवारीमें परिवर्तन अधिनियम, १९४८ को स्वीकृत किया गया। उड़ीसा प्रदेशमें जमींदारी उन्मूलन विधेयक, १९५० और पंजाबमें कृषक आसामीकी सुरक्षा अधिनियम, १९५०, पूर्वी पंजाब-भूमि-विभाजन प्रतिबंध और चकबंदीका अधिनियम, १९४८, तथा उत्तर प्रदेशमें उत्तर प्रदेश जमींदारी उन्मूलन एवं भूमि सुधार अधिनियम, १९५० तथा अन्य कानूनोंके सिवा उत्तर-प्रदेश कृषक अधिकार प्राप्त अधिनियम, १९४९ और पश्चिम बंगालमें बरगादार अधिनियम, १५९० स्वीकृत किया गया। 'ब' और 'स' राज्योंमें हैदराबाद, पटियाला राज्य संघ मध्यभारत तथा अजमेर आदि हैं। इनमें जागीरदारी तथा जमींदारी उन्मूलन और काश्तकारी तथा चकबंदी एवं माल शासन एवं रैयतवारी आय आदि कानून विभिन्न राज्योंमें १९४९ और १९५१ के मध्यमें स्वीकृत किए गये। इस प्रकार राज्योंकी जुदी-जुदी परिस्थितियोंकी दृष्टिसे भूमिकी समस्या हल करनेके लिए ये कानून स्वीकृत हुए। उन सबका लक्ष्य हुआ कि जमींदारी प्रथाका उन्मूलन हो और किसानोंके हितकी दृष्टिसे अन्य व्यवस्थाएँ जारी की जायँ।

योजना कमीशनने यह माना है कि किसानोंके भू स्वामित्व की उच्चतम सीमा निर्धारित की जाए, खुद काम करनेवालोंको सुविधाएँ दी जाएँ, इसके सिवा दक्षतापूर्वक निश्चित स्तरपर

खेतीका आधार नियत होनेके लिए कानूनसे व्यवस्था की जाए तथा छोटे और मध्यवित्तके किसानोंको सहकारिता प्रथाके आधारपर खेती करनेके लिए तरजीह दी जाए। किसानके भू-स्वामित्व उच्चतम सीमा निर्धारण, मालगुजारीकी रकम, भूमि की कुल उपज अथवा भूमिके पट्टेके मूल्यके आधारपर किया जाए। हर एक राज्यमें परिस्थितियोंके आधारपर इसका स्तर कायम किया जाए।

जमींदारी उन्मूलनके पश्चात् भी जिन लोगोंके पास अधिक भूमि है, उनकी भूमि और मौरूसी किसानों द्वारा जोते जानेपर निर्धारित भूमिसे अधिकका स्वामी किसान माना जाए। अतः जिन लोगोंके अधिकारमें बड़ी जमीनें हैं, उनके अधिकारकी सीमा नियत की जाए। सन् १९५३ में केन्द्रीय सरकारकी व्यवस्थामें समस्त देशके भू-स्वामित्वकी और कृषि सम्बन्धी लक्ष्योंकी गणना द्वारा जो वस्तुस्थिति प्रकट हुई, उससे यह निराकरण हो सकता है कि, प्रत्येक व्यक्तिके पास कितनी अधिक भूमि हो। इसके सिवाय भू-स्वामी द्वारा की जानेवाली खेती और उसकी व्यवस्थाका मान कानून द्वारा निर्धारित क्षमताके मानके अनुरूप हो।

यह भी सुझाव दिया गया कि, जहां एक व्यक्तिके अधिकार में बड़ी भूमि है, उसे दो भागोंमें बांट दिया जाए। एक वह भाग जिसके टुकड़े करनेसे उपजमें कमी हो और दूसरे भागमें न हो। दूसरे भागकी व्यवस्था राज्य अधिकारी तथा सहकारी

प्रथा द्वारा की जाए। छोटे और मध्य-श्रेणीके किसानोंको सहकारिताके आधारपर खेतीके लिए अग्रसर किया जाए। इस दृष्टिसे प्रत्येक राज्यमें छोटे किसानोंके खेतोंकी चकबन्दी की जाए और उनमेंसे हर एककी ऐसी सीमा निर्धारित हो जिसके उपरांत फिर उसके टुकड़े न हो सकें। इसके अतिरिक्त स्वयं खेती करनेके लिए जमीन प्राप्त करनेका अधिकार केवल उन लोगोंको दिया जाए, जो स्वयं या अपने परिवारवालोंके द्वारा खेती करें। पर पांच वर्षके अन्दरमें जमीनका मालिक स्वयं खेतीके लिए भूमि प्राप्त कर सकता है। यदि वह ऐसा न कर सके तो किसान को उस जमीनके खरीदनेका अधिकार मिले।

कृषि-भूमिकी सारी व्यवस्थाएँ सहकारिताके आधार पर करना आवश्यक है। इससे जिन लोगोंके पास खेत न हों, वे भी उनके उत्पादनोंसे पूरा लाभ उठा सकें। इस दिशामें काश्त-कारी कानूनको अमलमें लाया जाए, खेतिहर मजदूरोंके हितोंकी रक्षा की जाए, छोटे किसानोंके लिए जमीनकी न्यूनतम व्यवस्था की जाए, बड़ी जमीनोंका पुनः वितरण करनेके सिवाय परती भूमिको भी खेतीके उपयोगमें लाया जाए।

'भूमि सुधार संगठन' भूमिका मूल्यांकन, भूमि सम्बन्धी समस्याओंकी जांच और सहकारी खेतीके प्रसार आदिके कार्यों को विस्तृत करे। यह संगठन भूमि सम्बन्धी समस्त सुधारोंका नियमित विवरण रखेगा। विभिन्न राज्योंकी प्रगतियों तथा उनके अनुभवों और भावी होनेवाले प्रयोगोंकी समस्त बातोंका

संग्रह करेगा, जिससे कि देश भरके किसान पूरी जानकारी प्राप्त कर सकें और अपनी व्यवस्थामें सुधार करनेका अवसर प्राप्त करें।

देहाती क्षेत्रोंमें लोगों द्वारा खोदे गये तालाव और जलाशय बहुतायतसे मिलते हैं। किसान और पशुपालक नये जलाशय बनाते हैं।

इधर तालाबोंकी संख्यामें वृद्धि हुई है। सामूहिक विकास-योजना क्षेत्रोंमें मछलियाँ पालने और सिंचाई आदिके कामोंके लिए तालाब बनानेको प्रोत्साहित किया जा रहा है, ताकि उनसे लाभ उठाकर मनोरंजन और कृषि-सौन्दर्यमें वृद्धि आदि हो सके।

इस समय सोच-समझकर चुने गए स्थलों पर ढंगसे बनाये गए तालाबोंकी संख्या बढ़ी है। उनसे पिछले वर्षोंमें साग-भाजी के उत्पादनमें तो वृद्धि ही हुई है, साथ ही भूमि और जलके स्रोतोंके संरक्षणमें भी बड़ी मदद मिली है।

बंगाल जैसे प्रदेशमें कृषि-क्षेत्रके तालाबोंमें मछलियाँ पालनेके विषयमें लोग ध्यान देते हैं और सिर्फ इसी प्रयोजनसे हजारों तालाब निर्मित भी किये गए हैं। तथापि, अधिकांश तालाब पशुओं, सिंचाई, आगसे रक्षा और वगीचोंके लिए पानी पहुँचाने या अन्य कार्योंके उपयोगके लिए बनाये गये हैं।

भूमि-क्षरणको रोकने और जल-स्रोतोंका उपयोग लेने आदि के कार्यक्रम शुरू किये गये थे और इन्हींके कारण पिछले वर्षोंमें

तालाब बनानेमें लोगोंने बहुत अधिक दिलचस्पी ली है। बहुत सी जगहों पर तालाब बनानेसे भूमिका कटाव रुक गया और भूमिके उपयोगकी व्यवस्था करनी सम्भव हो गई। उदाहरणार्थ जो खेत मिट्टीके बुरी तरहसे कट-फट जाने या बह जानेसे खेतीके लायक नहीं रह गये थे, उनका सबसे अच्छा उपयोग उनमें घास उगा कर किया जा सकता है। इससे चरागाहका क्षेत्र बढ़ जाता है, क्योंकि बहुतसे स्थलों पर सदा पानी न मिलनेके कारण पशु बहुधा उनका उपयोग नहीं कर पाते हैं।

कृषि-विभागकी दो शाखाएँ कृषकों और पशुपालकोंको तालाब बनानेमें योग दे सकती है। भूमि-संरक्षण शाखा स्थानीय भूमि-संरक्षण केन्द्रोंके सहयोगसे कार्य करते हुए तालाबकी जगह चुनने, उसकी रूप-रेखा तैयार करने तथा उसके निर्माण, प्रयोग और व्यवस्था आदिमें हाथ बँटा सकती है। उत्पादन और विक्रय प्रशासनकी कृषि-संरक्षण-कार्यक्रम-शाखा किसानोंको ऐसे तालाब बनानेमें आर्थिक मदद दे सकती है जिनसे भूमि और जल-स्रोतोंके संरक्षणमें योग मिले।

खेतों और चरागाहोंके इलाकोंमें बनाये गए तालाब जल-चरों, वनचरों और फरवाले जानवरोंके विस्तार आदिकी दृष्टि से भी बड़े उपयोगी हैं। इन तालाबों द्वारा जंगली जानवरोंकी रक्षाके विविध उपयोगोंमेंसे एक काम मछलियाँ पालनेका भी है।

जमींदारी-उन्मूलन

'जमींदारी गाड़ीके पहिएके समान है, अर्थात् केवल निरर्थक ही नहीं बस अड़ंगा लगानेवाली और जमीन पर एक अनावश्यक बोझ है। जमींदारी-उन्मूलन इस सचाईको प्रकट करता है कि जो जमीन जोतता है, वही उसका मालिक है, और जो अनाज पैदा करता है, वही उसका सर्वप्रथम भोक्ता है।

—जवाहरलाल नेहरू

उत्तर-प्रदेशमें १ जुलाई १९५२ का दिन इतिहासमें चिर-स्मरणीय रहेगा। आजके भारतीय संघके इस सबसे बड़े प्रदेशमें यह दिन किसानोंकी मुक्तिका हुआ। वे जमीनके मालिक बने। लाखों किसान, राजा, नवाब, ताल्लुकेदार और जमींदारोंके बन्धनोंसे मुक्त हुए। अब किसान अपने भाग्यका स्वयं निर्माता बना। जमींदारी उन्मूलनसे किसानोंकी दुरावस्थाकी अन्धकारमयी लम्बी रातोंका अन्त हो गया। यह नव-विधान किसान जनताके लिए स्वर्ण-युग लानेका साधन बना। जमींदारीका अन्त जनताके निर्वाचित प्रतिनिधियोंके द्वारा निर्मित विधानसे हुआ और उसकी स्वीकृति इस देशके सर्वोच्च न्यायालयने प्रदान की। अतः उन्मूलन कानून वैधानिक करार दिया गया। इस वैधानिक आयोजन द्वारा जमींदारोंसे जो जमीन हस्तगत की गई, वह इस देशके आर्थिक इतिहासमें रक्तहीन क्रान्ति मानी जाएगी। यह शांतिमय विप्लव जनताकी मनोकांक्षा और दृढ़ संकलपसे सम्भव हुआ।

परिणाम यह हुआ कि समस्त छोटी-बड़ी जमींदारियोंके स्वत्व राज्यके अधिकारमें आए। अब जमीनको जोतनेवाले किसान अपना लगान सीधे सरकारको देंगे। इस कानूनसे किसानोंको विशेष सुविधाएँ प्राप्त हुईं। अपने वार्षिक लगानका दस गुना भाग चुकाकर वे अपनी जमीनके भूमिधर बने। इससे उन्हें लगानमें ५० प्रतिशत कमीकी छूट मिली। उन्हें यह भी अधिकार मिला कि वे अपनी जमीनका हस्तान्तर कर सकें और उसका चाहे जैसा उपयोग करें। अतीत कालमें किसानों को जो अधिकार भूमि-सम्बन्धी प्राप्त थे, वे उन्हें प्राप्त हुए।

इस परिवर्तनसे ग्रामीण समाज अपनी जमीन, अपने ग्राम का लोकतन्त्रके आधार पर व्यवस्था करनेमें समर्थ होगा। आज हरएक किसान इस स्थितिमें है कि वह अपने और अपने देशके हितके लिए राष्ट्रीय सम्पत्तिकी अभिवृद्धि करे। वह अपनी भूमि की पैदावार बढ़ाकर अपनी आर्थिक समृद्धि करनेमें आगे बढ़े।

शताब्दियों तक किसानोंने कष्ट और यातनाएँ झेली हैं। यह कहना न होगा कि उत्तर-प्रदेशके किसानोंपर पिछली शताब्दियोंमें विपत्तियोंके पहाड़ टूट पड़े थे। भेड़-बकरियोंसे भी निम्नतर उनका जीवन था। इस निकृष्ट जीवनमें पड़े हुए साढ़े पांच करोड़ किसानोंको सामाजिक न्याय प्राप्त हुआ। अहिंसात्मक गांधीवादी मार्गसे अद्भुत-कृषि-विप्लव हुआ। मौर्य और गुप्त वंशके विख्यात दिनोंके पश्चात् किसानोंको अपने सम्पूर्ण अधिकार और जिम्मेदारियां प्राप्त हुईं। पंचायत-राज्य

कानूनके जाग्रत कालमें जमींदारी उन्मूलन कानूनने प्राचीन काल के ग्राम-गण-राज्यका पुनर्निर्माण किया।

ग्रामीण-समाज नवीन रूपमें स्वशासनको ग्रहण कर रहा है, जिससे उसके सामाजिक ढाँचेकी पुनर्रचना होगी। वह अपना नव-निर्माण सहकारी प्रणालीको नींव पर करेगा। नए जीवनमें किसान, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय प्राप्त करनेमें समर्थ होगा और राज्यके साधनों तथा श्रोतों पर नियंत्रण करनेमें अग्रसर होगा।

अब ग्रामोंमें कोई वर्ग नहीं होगा। यह ग्रामोंके नेतृत्वको श्रेय है कि उन्होंने भारतमें वर्गहीन समाजकी रचनाका देशमें सूत्रपात किया। सब एक श्रेणीमें परिणत हो गए। कोई बड़ा व छोटा नहीं रहा। सब एक दूसरेके प्रति भाई-भाईकी तरह रह कर लोक-कल्याण-राज्यके ट्रष्टी होंगे।

जमींदारी उन्मूलन द्वारा जमींदारियोंके विनाशसे जनताके ७५ प्रतिशतसे अधिक व्यक्तियोंके हितोंकी रक्षा होती है। ७·२२ करोड़ एकड़ सम्पूर्ण क्षेत्रमेंसे ६·०२ करोड़ एकड़ जमीन पर कानून का असर पड़ता है। जिन जमींदारों पर प्रभाव पड़ता है, उनकी संख्या २०·१७ लाख है।

राष्ट्र-पिता महात्मा गांधीके विचारोंका सन्मान करते हुए और सभी विपरीत मांगों पर कोई ध्यान न देते हुए जमींदारोंको नकद और बांडमें उनकी जमीनका मुआवजा दिया जाएगा। यद्यपि आर्थिक दृष्टिसे मुआवजेका चुकाना देश पर एक बड़ा

भार है, और आजकी भावनाओंमें जनताका बहुवर्ग उसके सर्वथा विपरीत है। अन्य देशोंमें जहां भी आर्थिक परिवर्तन हुए, जमींदारोंको कोई मुआवजा न देकर जमीन जप्त कर ली गईं। चीनने अभी हालमें ही जमींदारी उन्मूलन कर सारी कृषि-भूमि पर राज्यकी सत्ता कायम की। काश्मीरने भी जमींदारी उन्मूलन विना मुआवजेके किया। उसने जमींदारोंको किसी प्रकारकी क्षति-पूर्ति न देनेका निश्चय किया। जो कुछ हो, जमींदारी प्रथा मृत प्रायः हो चुकी थी। शताब्दियोंसे उसने करोड़ों ग्रामीणोंकी गर्दनें दवा रखी थीं। पर लाचार परिस्थितियोंमें साधारण किसान जमींदारी प्रथाके पाटमें पिसकर अन्याय और अत्याचारोंका सामना कर रहा था। कोई उपाय नहीं था कि वह किस प्रकार मुक्त हो।

इस जमींदारी प्रथाने शताब्दियोंसे आर्थिक दुरावस्था, सामाजिक असमानता और निराशापूर्ण जीवनकी भावनाएँ पैदा कर रखी थीं। ग्रामीणोंके लिए आजके आदर्श मृगतृष्णावत थे। ग्रामोंके विनाशसे समाजकी सम्पत्ति अनस्थिर अवस्थामें इधर-उधर बिखरी हुई थी। इससे जन-समाजका आर्थिक और नैतिक दोनों पतन हुआ। सुतरां ग्राम बंदीघर बन गए थे, जहां मनुष्योंकी आत्माएं पशुओंके समान बंद थीं। अतः कोटि-कोटि किसानोंकी दुरावस्थाका एक प्रधान कारण इस आर्थिक परिवर्तनसे दूर हुआ। इस नए अधिकारको प्राप्त कर लाखों और करोड़ों किसानोंका जीवन सुखी बनेगा।

जमींदारी-उन्मूलन कानूनकी रचना बुनियादी सिद्धान्तोंके आधार पर की गई जो मानवके सामाजिक जीवनसे सम्पर्क रखते हैं। यह पृथ्वी प्रकृतिकी सबसे बड़ी देन है। इसीके द्वारा हरएक देशके लोग खाद्य पदार्थ, कच्चा माल और खनिज सम्पति प्राप्त करते हैं। समाजका विकास होने पर जमीन पर व्यक्तिगत अधिकार कायम हुआ क्योंकि संभव नहीं था कि सारा समाज एक साथ उसका उपयोग करता। इस प्रकार जमीनका वितरण अनधिकृत रूपमें हुआ। यह नवीन प्रयत्न इस आदर्श पर है कि सारा समाज समान रूपसे जमीनका उपयोग करनेमें पूर्ण समर्थ हो। समाजका यह कर्तव्य होगा कि अब जमीनका वही वर्ग उपभोग कर सके, जो अपना खून और पसीना उसके लिए बहाए, अपने हाथमें फावड़ा लेकर उसे खोदे। अब तो जमीन उसी मेहनतकश की है, जो उसके लिए जिए और मरे।

इसलिए हमारी सामाजिक व्यवस्थामें जमींदार, और सामंतका कोई स्थान नहीं है। जमींदार, जागीरदार और सामत बीते युगके वर्ग हैं। उत्तर प्रदेशके जमींदारी-उन्मूलन कानूनमें यह व्यवस्था है कि जो व्यक्ति स्वयं खेती नहीं करेगा, वह जमीन का अधिकारी न रह पाएगा। इस प्रकार जमींदार और खेतिहर किसानका बन्धन टूट गया और किसान सीधे राज्यके सम्पर्कमें आ गया। पर यह ध्यान रखा गया कि जमींदार वर्ग फिर अपना सिर न उठाने पाये। यह भय निराकरण नहीं

है। यह प्रश्न तब उठता है, जब जमीन पर सत्ताका अधिकार दो अंगोंमें विभाजित होता है अर्थात् (१) जमीन पर स्वामित्वका अधिकार और (२) खेती करनेका अधिकार। ये अधिकार जब बँट जाते हैं और दो जुदे व्यक्तियोंके हाथमें आते हैं, तब जमींदारी अपना फिर सिर उठाती है। जब कोई किसान जमीन परके अपने स्वामित्वके अधिकारका हस्तांतर करता है या जमीन किराए पर उठाता है या उसे बन्धक रखता है, तब जमींदारीके अधिकार अपना काम करने लगते हैं।

यद्यपि इस प्रकारके स्वामित्व और उपभोगके अधिकारोंके टुकड़े होना सम्भव नहीं है, क्योंकि इस दिशामें कानूनमें कड़ी बंदिशें की गई हैं। जो किसान अपनी जमीन बेचेगा, उसे वह उपभोगके अधिकारके साथ बेचेगा। अधिकारोंका विभाजन हो पाएगा। केवल कुछ लोगोंको छूट दी गई है कि वे जमीन पर अपना अधिकार कायम रखते हुए उसे दूसरोंको खेतीके लिए दे सकेंगे। इस वर्गमें सैनिक हैं, जो लोग जेलोंमें बंद हैं या जो दिमागी और शारीरिक दृष्टिसे परिश्रम करनेमें असमर्थ हैं। पर किसान अलबत्ता स्वतन्त्र रहेगा कि अपनी खेतीमें अपने साथ दूसरोंका सहयोग प्राप्त करे और परिश्रमके बदले उपजमें हिस्सा दे; किन्तु इस अवस्थामें जमीन पर अधिकार दूसरोंका न हो पाएगा। किसान ही मालिक रहेंगे। जमीन बन्धक रूपमें कतई न रक्खी जा सकेगी। न तो कोई किराएमें जमीन दे सकेगा और न बन्धकमें. दोनों अवस्थाओंमें भारी दण्डकी व्यवस्था है।

सरकार चाहती तो विधानमें आमूल परिवर्तन कर बिना मुआवजा दिए जमीन प्राप्त करती, किन्तु उसने ऐसा नहीं किया। उसने किसी वर्गके प्रति कोई अन्याय नहीं होने दिया। यही कारण है कि जमींदारोंको जहाँ उपयुक्त मुआवजा देनेकी व्यवस्था की गई, वहां उनका सीर, खुदकाश्त पर अधिकार रहेगा तथा छोटे जमींदारोंको मुआवजेके अतिरिक्त पुनर्वासके अनुदान प्राप्त होंगे। समाज़में शांति कायम रखनेकी भावनासे ये प्रयत्न किए गए। लोकतन्त्र-शासनमें यही उपयुक्त मार्ग था, जिसे हमारे राष्ट्रने ग्रहण किया। इसके विपरीत मुआवजा न देना हमारे लोकशाही आदर्श तथा विधान दोनोंके विपरीत होता। जमीनकी जप्ती एक घातक सिद्धान्त है, जो समाजमें सद्भावना उत्पन्न नहीं करता। यह अमानुषिक कार्य होता। यह माना कि जमींदार-वर्गने अत्याचार किए, अन्याय और जुल्म ढाए, उनके काले कारनामे बने हुए हैं, किन्तु बावजूद इन सबके हमारा नैतिक कर्तव्य है कि हम अपने दुश्मनके प्रति भी न्याय करें।

हमारे महान नेताने हमें जो सबक सिखाया, उसे हम न भूलें। साम्यवादी देशोंमें भले ही मुआवजा न दिया गया हो; किन्तु लोकतंत्र देशोंमें जमींदारोंसे जमीन लेने पर उन्हें मुआवजा दिया गया। ग्रेटब्रिटेनमें समाजवादी सरकारने उन लोगोंको मुआवजा दिया, जिनकी सम्पतिका उसने राष्ट्रीयकरण किया।

जमींदारोंको अपने वार्षिक लगानका अठगुना मुआवजा

प्राप्त होगा। इसके अतिरिक्त जो जमींदार दस हजार रुपए तक मालगुजारी जमा करते रहे, वे अपने जायदादकी असली कीमत पर एकसे बीस गुना तक पुनर्वासके अनुदान प्राप्त करेंगे। वक्फ, ट्रस्ट और अन्य धर्मादोंको वार्षिक रकम चुकानेकी जिम्मेदारी दी गई है। अतएव उत्तर-प्रदेश राज्यके जमींदारोंको प्रायः १५० करोड़ रुपए मुआवजेमें प्राप्त होंगे। पर यह मुआवजा किसानोंके धनसे चुकाया जाएगा। वे जो लगान जमा करेंगे, उसीसे जमींदारोंकी क्षति पूर्ति होगी।

जो किसान सरकारको जमीनका लगान देंगे, नए कानूनने उनके विस्तृत अधिकार स्वीकृत किए हैं। जो लोग जमीन पर खेती करते हैं, उनका उसपर चाहे स्वामित्व हो या वे काश्तकार हों या सहायक काश्तकार हों या जमीन परसे गुजरनेवाले हों, किन्तु उन सबका १३५६ फसलीके रेवन्यूके कागजातोंमें इन्दराज हो तो उन सबका जमीन पर अधिकार माना जाएगा। उन्हें पूर्ण सुरक्षा प्राप्त होगी और उन्हें अपनी जमीनोंसे कोई वंचित नहीं कर सकेगा। केवल जमीन पर अधिकार रखनेवाले किसान ही नहीं, बल्कि रैयत भी, जिन्हें अपनी कृषि-भूमिके हस्तांतरका अधिकार प्राप्त है, वे भूमिधर (जमीनके मालिक) होंगे। उन्हें मौजूदा सभी अधिकार प्राप्त होंगे। जो लगान देनेवाले किसान किसी भी स्थितिके होंगे और किसी जमींदार की खाली जमीन परसे निकलनेवाले होंगे या जो अपनी जमीनमें खेती करते होंगे और सरकारको २५० रुपयेसे अधिक

मालगुजारी चुकाते होंगे, वे सब सीरदार कहलाएँगे, उन सबके भी मौजूदा अधिकार बरकरार रहेंगे। आगेसे वे जमींदारोंकी अपेक्षा सरकारको लगान देंगे। उप-काश्तकारको अधिवासी कहा जाएगा। अभी तक उनके कोई अधिकार नहीं थे, किन्तु अब उनके पास जो जमीन होगी, उसके सम्बन्धके चाहे जो इकरार हों, वे सब खत्म हो गए और वे भी जमींदार सीरदार और मुख्य काश्तकारकी स्वीकृति द्वारा पाँच वर्षोंके अन्तर्गत भूमिधरके स्वत्व प्राप्त कर सकते हैं। पर इस अवधिके अन्तर्गत उन्हें अपना लगान सीरदारोंको चुकाना पड़ेगा।

सारांश यह कि सभी प्रकारके काश्तकार अर्थात् सीरदार और अधिवासी दसगुना लगान जमा कर भूमिधर हो सकेंगे। उन्हें भी अन्य भूमिधरोंके समान सभी रियायतें प्राप्त होंगी। उनके लगानमें आधी छूट दी जाएगी। वे भी अपनी जमीनका हस्तांतर कर सकेंगे और जिस प्रकार चाहेंगे उस प्रकार उसका उपभोग करेंगे। अधिवासियोंको पन्द्रह गुना लगान चुकाना पड़ेगा।

भूमिधरोंसे सरकारको जो धन प्राप्त होगा, उसका उपयोग वह जमींदारोंको मुआवजा चुकानेमें करेगी। यदि सरकार को सबसे पूरी रकम प्राप्त होगी, तो वह जमींदारोंको बजाय बांडमें पूरी रकम नकद चुकाएगी अन्यथा सरकारको उन्हें बांड देने पड़ेंगे। किसानोंके लगानकी आधी रकम इन बांडोंके चुकानेमें व्यय होगी।

उत्तर-प्रदेशमें तीस प्रतिशत किसान दसगुना लगान जमा कर भूमिधर बन चुके हैं। सब काश्तकारोंके द्वारा दसगुनी रकम जमा करने पर कोई सीरदार तथा अधिवासी न रहेगा। उस समय समस्त काश्तकारोंका एक वर्ग होगा, जो भूमिधर कहलाएगा। बांडोंके सम्बन्धमें जमींदारोंको यह भय है कि चालीस वर्षकी अवधि बहुत बड़ी होती है और कहीं नई सरकार इन बांडोंको रद्द न करने दे। मगर जमींदार-उन्मूलन-कोषकी पूरी रकम वसूल होनेमें जमींदार वर्ग ही बाधक हुआ, जमींदारों का विरोधी आन्दोलन उनके हितोंको नुकसान देनेवाला हुआ। उनका अड़ंगा न होने पर अब तक बहुत थोड़ी रकम बिना वसूल किए हुए रहती। सरकारका लक्ष्य था कि पूरी रकम वसूल हो जाए, जिससे कि जमींदारोंको पूरा मुआवजा नकद मिले। पर लाचार अवस्थामें उसने बांड जारी किये। यह बांड वेध होंगे और अन्य सरकारी ऋणोंके समान ही इनकी स्थिति होगी। कोई भी नया शासन उन्हें सहसा मिटा न सकेगा।

ग्रामके सभी निवासियोंका जमीन और वृक्षों आदि पर अधिकारके अतिरिक्त उनका मकान, निजी कुएँ, वृक्ष और अन्य अतिरिक्त जमीन पर व्यक्तिगत अधिकार कायम रहेगा। इसके अतिरिक्त ग्रामकी अन्य सब जमीन पर ग्राम-समाजका अधिकार रहेगा, जो उनके विकास और उन्नतिके लिए सदा प्रयत्न-शील रहेगा। ग्रामकी परती जमीन, चरागाह, मार्ग, तालाब, मछलियोंके ताल, कब्रिस्तान, श्मशान, गलियाँ, मैदान, सार्वजनिक

कुएँ, नाले, आदि जिनका सब ग्रामवासी उपभोग करते हैं, उन पर सबका अधिकार नियत किया गया है। इन स्थानोंसे जो आय होगी, वह सब ग्राम-समाजमें जमा होगी। इस प्रकार सारे राज्यमें प्रति वर्ष कई लाख रुपएकी आय होगी। इस प्रकार ग्राम-पंचायतके अधिकारमें ग्रामकी सारी व्यवस्था रहेगी। ग्राम-समाज पंचायतोंके द्वारा ग्राम विकासमें पूर्ण योग देगा जिनमें कृषि विकास, सहकारी कृषि, पशु-पालन, मछलीका धंधा, जंगलकी व्यवस्था, यातायात और छोटे उद्योग-धंधोंकी उन्नति करना है।

ग्राम-समाज अपने ग्रामके हितोंकी ओर पूर्ण ध्यान देगा। वह ग्रामका संरक्षक होगा। ग्राम और ग्रामीणोंके हितोंमें उसकी सारी शक्तियाँ लगेंगी। उसका यह लक्ष्य रहेगा कि ग्रामकी जमीन परती न पड़ी रहे, अविकसित न रहे और अधिकसे अधिक जमीन कृषि-उपयोगी बने तथा उसमें अधिकसे अधिक पैदावार हो। इस प्रकार ग्राम-समाजको विस्तृत अधिकार प्रदान किए गए हैं। जिस जमीनका जमींदारने खेतीके लिए उपयोग नहीं किया है, उस पर समाज अपना अधिकार कायम कर सकेगा। आज जिस जमीनमें खेती हो रही है, उसे भविष्य में समाज बर्बाद न होने देगा। जिस जमीनका कोई वारिस न होगा, भूमिधर तथा सीरदारका कोई उत्तराधिकारी न होगा तथा जो जमीन गैरकानूनी रूपमें बंधक रखी जाएगी या बेची जाएगी अथवा हस्तान्तर की जाएगी, उस पर ग्राम-समाजका अधिकार कायम होगा।

खेती सम्बन्धी सुधारों पर विचार
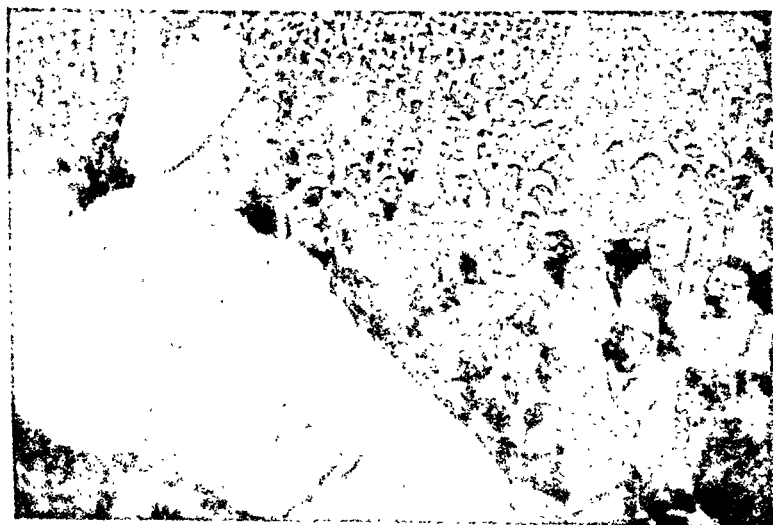
रक्त-हीन कृषि क्रान्ति : जमींदारी-उन्मूलन

अन्नपूर्णा भूमि—
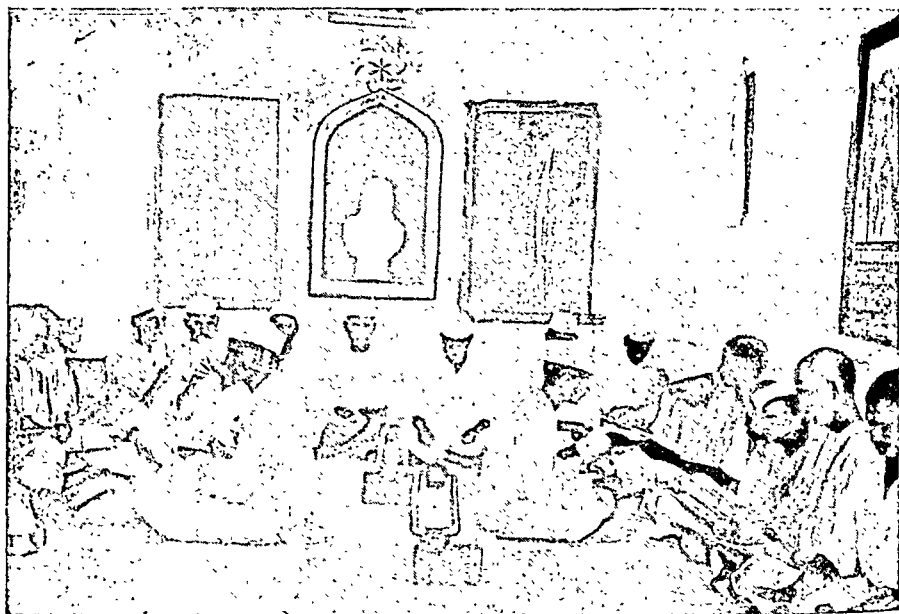
पंचायत की रात्रि-पाठशाला
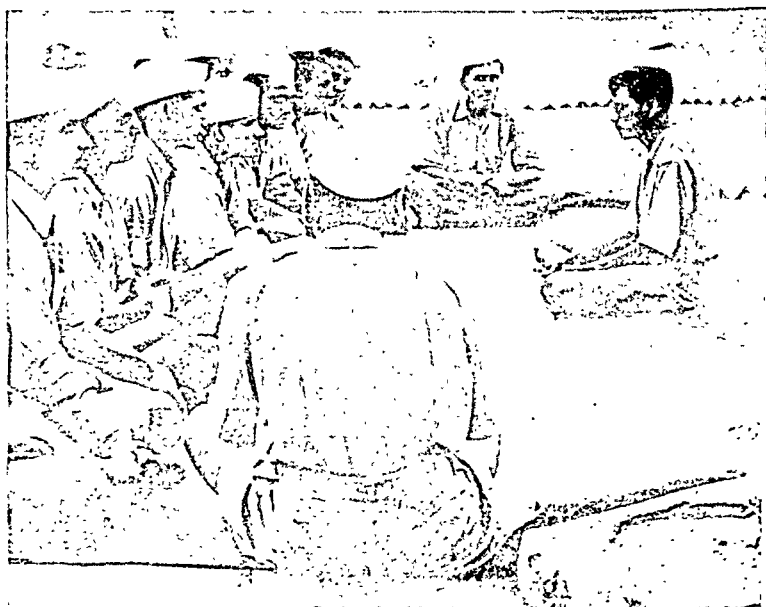
भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ाने का निश्चय

ग्रामीण वर्गको पंचायत राज्य कानूनके अन्तर्गत न्याय और व्यवस्थाके अधिकार प्रदान किए गए हैं, उसे विस्तृत आर्थिक अधिकार भी हैं। पर वह किसानके व्यक्तिगत अधिकारोंके उपभोगमें कोई हस्तक्षेप न करेगा। हरएक किसानकी अपनी जमीन पर पूर्ण सत्ता रहेगी। कानूनने कृषक और ग्राम-समाज दोनोंके अधिकारोंकी विवेचना की है। एक किसानको दूसरे किसान कोई कष्ट न दे सकेंगे और न उसका शोषण कर पाएंगे। कोई किसीके जीवनका घात न कर पाएगा।

किसी किसानके पास न तो अधिक जमीनका होना वांछनीय है और न थोड़ी जमीनका। यह कहीं अधिक उपयुक्त है कि इन दोनों अवस्थाओंको मिटानेके लिए ग्रामोंमें सहकारी प्रणाली पर खेती हो। छोटे-बड़े खेतोंके प्लाट तैयार करनेकी कानूनमें व्यवस्था है। प्लाटोंकी खेती सम्मिलित रूपसे होने पर किसानोंके जमीनके अधिकार पर कोई आंच न आवेगी, उल्टे पैदावारमें अधिक वृद्धि होने पर उनकी आयमें वृद्धि होगी। इसी प्रकार भविष्यमें वर्तमान जमीनके अधिक टुकड़े न हों, इसका सदा ध्यान रहे। कानूनने अदालतोंको अधिकार दिया है कि वे ऐसे विभाजनोंको स्वीकृति न दें।

ग्राम-समाजका यह प्रयत्न होना चाहिए कि वह किसानोंमें सामाजिक एकताके भाव पैदा करे। उसे अपनी सारी शक्ति सहकारी-वृत्तिमें लगानी चाहिए। वही ग्राम उन्नत होगा और ग्राम-समाज अग्रणी माना जाएगा, जिसमें ग्रामीण कृषि और

उद्योग-धंधे सहकारी प्रथाके आधार पर करेंगे। व्यक्तिगत और सामाजिक मतभेद अनेकताके कारण न हों। आर्थिक क्षेत्रमें सभी किसान एक सेनाके अनुशासन माननेवाले सैनिक बनें।

जमींदारी विनाशका ग्रामीण किसानोंपर सर्वाधिक प्रभाव पड़ेगा। उत्पादन सम्बन्धी साधन विकसित होने तथा जमीन पर अधिकार होनेसे वे अधिक पैदावार बढ़ानेमें समर्थ होंगे। इससे उनका आर्थिक स्तर उच्चतर होगा। वे अब अधिक सुरक्षा प्राप्त करेंगे।

विनष्ट हुई अराजकताकी मिट्टीसे ग्रामोंमें नवीन सामाजिक व्यवस्थाका निर्माण होगा, जो लोकतन्त्रका शक्तिशाली अवलम्ब होगा। ग्रामीण जिस नए स्तर पर आज खड़े हैं, इससे वे राष्ट्रको उस लक्ष्य तक पहुँचा सकेंगे, जिसकी राष्ट्र-पिता अपने जीवनमें सदा कल्पना करते रहे।

उत्तर-प्रदेश, बिहार, मध्यभारत और राजस्थान आदि सभी राज्योंमें जमींदारी, मालगुजारी और जागीरदारी प्रथा नष्ट कर किसानोंको जमीनका मालिक बनाया जा रहा है। सभी राज्यों में जमींदारी-उन्मूलन द्वारा कृषक वर्ग शक्तिशाली स्तम्भ होगा। उसके ही कंधों पर राष्ट्रके अभ्युदय और सुरक्षाका भार रहेगा।

भूमि विभाजन का आधार

भारतकी अनेक समस्याओंमें आज जमीनके विभाजन तथा वितरणका प्रश्न सर्वोपरि है। राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक तथा अन्य किसी भी दृष्टिसे यह प्रश्न इतना गंभीर है कि इसके हलमें ही देशकी सुख-शांति निर्भर है। लाखों और करोड़ों व्यक्तियोंका जमीन पर अधिकार कायम हो या वह उन सबकी कृषि आजीविकाका साधन बने। आज ग्रामोंमें करोड़ों खेतिहर मजदूर बिना जमीनके निराश्रित अवस्थामें हैं, किन्तु उनके सिवाय नगरोंके लाखों शिक्षित अशिक्षितोंके लिए भी जमीन चाहिए। नगरोंकी बढ़ती हुई भीषण बेकारीका प्रश्न सरकारके अस्थायी दफ्तरोंसे हल न होगा। सरकार कब तक कितने आदमियोंको नौकरियाँ देगी। सरकारी दफ्तरोंकी अस्थायी नौकरियाँ अस्पतालोंके इलाजके समान हैं। उनसे लोगों की बीमारी नहीं जाती। उन्हें भी ग्रामोंमें बसाना होगा।

पर यह विचारणीय है कि जमीन कितनी है, किस अवस्था में है और उसका विभाजन किस प्रकार है। भारतीय गण-राज्यकी जमीनकी पैमाइशका विवरण इस प्रकार है :—

जमीनकी पैमाइश—१९४७-४८ (हजार एकड़में)

कृषि भूमि—	
सरकारी पैमाइशके अनुसार	८०६८९
ग्राम-पत्रोंके अनुसार	८११२३

जंगलोंके अन्तर्गत जमीन	८६४८८
कृषि अनुपलब्ध जमीन	६५६६२
प्रयोगमें न लाई गई अन्य जमीन	६१६३२
वर्तमान ऊसर-जमीन	६०७१५
कृषि जमीन	२४५२७१
अन्य कृषि योग्य जमीन	१३५०६

भारतके विभिन्न राज्योंमें कितनी जमीन कृषिमें लगी हुई है और कितनी ऊसर तथा बंजर पड़ी हुई है :—

	कृषि-जमीन (हजार एकड़में)	ऊसर जमीन (हजार एकड़में)
आसाम	५२३४	१८८१
बिहार	१७६६१	७०८३
बम्बई	३३८२१	६०७५
मध्यप्रदेश	२८०२५	५३६६
मद्रास	३०४६२	१०२४४
उड़ीसा	६५१७	१२४५
पंजाब	१२०८८	१८१४
उत्तर प्रदेश	३८८८०	२७६७
पश्चिम बंगाल	११७४२	११४२
हैदराबाद	२३८५३	१३३६४
जम्मू-काश्मीर	२२५८	२७५
मध्य भारत	७६९२	१७३८

मैसूर	६४८८	१७०६
पटियाला राज्यसंघ	४३५३	७०१
राजस्थान	८३८५	२८६२
सौराष्ट्र	१०१३	——
त्रावनकोर-कोचीन	२८३८	७२
विन्ध्यप्रदेश	४६०	१६२
अजमेर	४४३	१८१
भूपाल	१५६२	१३०
बिलासपुर	७८	४५
कुर्ग	१६३	४२
दिल्ली	२२५	१५
हिमाचल प्रदेश	६०२	१३४
कच्छ	४६२	१६०८
	२४५,२७१	६०,७१५

इन अंकोंसे विदित होता है कि ५८११२३००० एकड़ जमीन में से १०७१५००० एकड़ जमीन ऊसर तथा बंजर पड़ी हुई है अर्थात् दस एकड़ जमीनमेंसे १ एकड़ जमीन बेकार है। ५८११२३००० एकड़ जमीनमें से केवल २४५२७१००० एकड़ जमीनमें खेती होती है। इस प्रकार प्रति दस एकड़ जमीनमें से प्रायः चार एकड़ जमीनमें हल चलते हैं और अवशेष छः एकड़ जमीन कृषि के लिए निरुपयोगी है।

अतः जमीनसे सम्बन्ध रखनेवाली निम्नलिखित समस्याएँ विचारणीय हैं :—

१—सम्भवतः ६०७ लाख एकड़ जमीन कृषि-योग्य जमीन वंजर पड़ी हुई हैं।

२—प्रायः २५ एकड़ कृषि-अन्तर्गत एकड़ जमीनमेंसे केवल ४ एकड़ जमीनमें सिंचाईकी व्यवस्था है और अवशेष वर्षा पर निर्भर है।

३—पीढ़ियोंसे खेती होती रहनेके कारण कृषि-जमीनकी उत्पादन शक्ति नाइट्रोजन सलफेटकी कमी होनेसे घट गई है। इस-लिए जमीनमें अधिक उत्पादनके लिए नाइट्रोजन सलफेट-युक्त खाद की अत्यधिक आवश्यकता है।

४—कृषि-परिवारोंमें अन्य सम्पत्तिके विभाजनके साथ-साथ भूमि भी छोटे-छोटे टुकड़ोंमें बँट गई। इसका दुखद परि-णाम यह हुआ कि अनेक कृषि परिवार जमीनसे वंचित हो चुके हैं और जिनके पास जमीन है, वह एक या आधे एकड़ से अधिक नहीं है।

५—किसानोंके ऋणके कारण बहुत सी जमीन महाजन तथा अन्य व्यक्तियोंके अधिकारमें चली गई है, जिनका धंधा प्रायः खेतीबारी नहीं है।

६—वर्तमान जमींदारी-उन्मूलनके पश्चात् भी अधिकांश जमीन पर जमींदार, जागीरदार तथा मालगुजारोंका अधिकार स्थित है। इसके सिवा जिन कृषक परिवारोंने मुआवजा

देकर जमीन पर अधिकार प्राप्त किया है, उनमेंसे बहुतोंके पास अधिक जमीन है या उनमेंसे अनेकोंका ध्यान खेती-बारीका नहीं है।

७—जलप्रवाह और अन्य प्राकृतिक कारणोंसे प्रति वर्ष कई लाख एकड़ जमीन कट जाती है। इस क्षतिसे रक्षा पानेके उपाय अभी तक नहीं किए गए।

इन सबमेंसे सबसे मुख्य प्रश्न जमीन पर किसानके व्यक्तिगत अधिकारका है। प्रान्तके एक कृषक परिवारके पास औसतन कितनी जमीन है और कृषक परिवार कितना बड़ा है, इसका निर्णय करना सहज नहीं है। हम किसानोंके निरूपणमें उन लोगोंको शामिल कर लेते हैं, जिनका कृषि सहायक धंधा है। खेतिहर मजदूर और कारीगर आदि जो आय बढ़ानेके लिए खेती बारी करते हैं, जब हम इन लोगोंको भी किसानोंके साथ शामिल करते हैं, तब प्रत्येक किसानके पास औसतन जमीनका अत्यन्त न्यून प्रकट होता है। एक कृषक परिवारके व्यक्तियोंकी संख्या अन्य परिवारोंसे नहीं की जा सकती। कृषक परिवारोंमें सदस्योंकी संख्या कहीं अधिक होती है और हमें इस दृष्टिसे जमीनके आकारका औसत प्राप्त करना चाहिए।

एक ही प्रान्तके भिन्न-भिन्न जिलोंमें जमीनके वितरणका हिसाब भारी असमानता प्रकट करता है। फिर भिन्न भिन्न प्रान्तोंमें भी व्यवस्था भी दूसरी है। ऐसा कहा गया कि कहीं ६ से १० एकड़ रखनेवाले कृषक परिवारका औसत ६·६

प्रतिशत है, वहां १ एकड़से नीचेका औसत २५·६ से ४१·६ या इससे भी अधिक है। पर यदि यह सोचा जाए कि इस औसतमें खेतिहर मजदूर आदि शामिल हैं, तो विशुद्ध कृषि-परिवारकी दृष्टिसे भी औसतन जमीनका प्रतिशत ५ एकड़से अधिक नहीं है। आवश्यकता तो यह है कि सभी राज्य सरकारें कृषि क्षेत्रोंकी जांच करें, जिसमें प्रत्येक विषय पर प्रामाणिक अंक प्राप्त किए जाएँ। कितने मूल कृषक परिवार हैं तथा कितने खेतिहर मजदूर हैं और उन परिवारोंकी औसत संख्या क्या है, तथा उनमेंसे प्रत्येकके पास कितनी जमीन है, तथा जमींदारी उन्मूलनके पश्चात् जमींदारोंके पास कितनी जमीन है, तथा फार्मोंके रूपमें भिन्न भिन्न वर्गोंके पास कितनी जमीन है, जिनका धन्धा एकमात्र कृषि नहीं है अथवा जो छोटे बड़े कारखाने चलानेके लिए फार्ममें कृषि उत्पादन करते हैं, इन सबकी पूरी जांच होना आवश्यक है। इसके उपरांत भूमिका, औसत आकार नियत करें और फिर उसका साहस पूर्वक वितरण करनेकी व्यवस्था करें।

भूमिका पुनर्वितरण देशकी सबसे बड़ी समस्या है। देशके पुनर्निर्माणका प्रश्न है, उसका निराकरण दान-दक्षिणा नहीं है। वह तो आर्थिक प्रश्न है और उसका हल जमींदारी उन्मूलनसे भी भयंकर है। यह बड़ा क्रान्तिकारी कदम है और इसके लिए देशमें उपयुक्त वातावरण उत्पन्न होना चाहिए। यदि यह वितरण शांतिमय वातावरणमें हर एक राज्यमें हुआ, तो राष्ट्रकी एक बड़ी समस्या हल होगी, इस वितरणसे जहां ग्रामीण क्षेत्रोंकी

असमानता दूर होगी, वहाँ आर्थिक साम्यताका अनुकूल वातावरण उत्पन्न होने पर लोगोंमें सहकारिताके भाव उत्पन्न होंगे। यह परिवर्तन होने पर ग्रामोंमें नए समाजकी रचना होगी और एक नए युगकी स्थापना संभव होगी।

भूमिकी इकाईकी मात्रा इतनी हो कि एक जोड़ी बैल जोत सकें और उससे कम से कम इतना अनाज और चारा पैदा किया जा सके कि जो उस जमीन पर लगे हुए परिवार तथा पशुओंके निर्वाहके लिए पर्याप्त हो। यह भी प्रकट है कि देशमें सर्वत्र एक स्तर निर्धारित नहीं किया जा सकता है। हर एक प्रान्त और जिलेकी जमीन, खेतीकी अवस्था और सिंचाई तथा धंधोंकी अवस्थाके अनुसार भूमिकी इकाई निर्धारित की जा सकती है। यह इकाई तथा जोत सामुहिक तथा सहकारिताके आधार पर खेती करने पर बढ़ सकती है।

खेतीके लिए बैल या ट्रैक्टर दो ही साधन हैं। पर ट्रैक्टरोंका उपयोग खेतीमें मनुष्योंको बेकार बनानेवाला साधन है। मानव और मशीनकी तुलनामें मानवका मूल्य अधिक है। ट्रैक्टरोंका उपयोग जमीनको अच्छी बनानेमें उपयोगी है। पर साधारण खेतीके लिए ट्रैक्टरोंका उपयोग हानिकर है। चीन जैसे देशमें, जहाँ अधिक जन संख्या है, ट्रैक्टरोंका सीमित उपयोग किया गया है। इसलिए भारतमें खेतीके लिए एक परिवारके लिए जमीनकी इकाई क्या निश्चित की जाए और वह वर्तमान स्थितिमें किस प्रकार उपयुक्त होगी? सम्पूर्ण भारतमें ३२ करोड़ ३०

लाख एकड़ जमीन जोती जाती है और इस पर २६ करोड़ ६० लाख मन फसल होती है। ४ करोड़ ५० लाख एकड़ जमीन सिंचाई के लिए उपयुक्त है और कुल जुती हुई जमीनके चौथाई भागमें वर्षमें दो फसलें होती हैं। नौ करोड़ एकड़ खेतीके योग्य जमीन बिना जुती पड़ी रहती है और चरागाहका काम देती है। आठसे नौ करोड़ एकड़ जमीन जोतने योग्य नहीं है और इतनी ही जमीन पर वन हैं। इसके सिवा ४ करोड़ ८० लाख एकड़ जुती जमीन उत्पादन शक्तिकी वृद्धिके लक्ष्यसे खाली रखी जाती है। हमारे यहां पशुओंकी संख्या १७ करोड़ ७७ लाख है, जिसमें अनुमानतः ५ करोड़ ६० लाख बैल, ४ करोड़ ३० लाख गायें, ३ करोड़ ८० लाख गायके बच्चे, २ करोड़ भैंस, ६० लाख भैंसे और १ करोड़ ४७ लाख भैंसके बच्चे हैं। पर इन ५ करोड़ ६० लाख बैलोंमें अनेक बैल निकम्मे होते हैं और कुछ यातायात व सवारीके कामके होते हैं। कुछ शहर और कस्बोंमें छोटे-छोटे रुई, तेल तथा अन्य उद्योगोंमें लगे हुए हैं। कुल पांच करोड़के लगभग खेती-बारीके उपयोगमें आ सकते हैं।

देशकी सारी जमीनको तीन भागोंमें विभाजित किया जा सकता है :—

पहला विभाग—जहांकी जमीन सख्त है और जहाँ वर्षमें औसतन साठ इञ्चसे अधिक वर्षा होती है।

दूसरा विभाग—जिसमें भिन्न-भिन्न प्रकारकी विशेषतः दुम्मट मिट्टीकी जमीन है और लगभग आधी जमीनमें सिंचाईके

साधन हैं और जहाँ औसतन एक वर्षमें पच्चीससे साठ इंच तक वर्षा होती है।

तीसरा विभाग—जहाँकी जमीन बुलन्द और अधिक रेतीली है और जहाँ एक वर्षमें औसतन पच्चीस इंचसे कम वर्षा होती है।

पहले विभागमें लगभग पांच करोड़ एकड़ जुती हुई जमीन है, दूसरेमें १२ करोड़ ५० लाख और तीसरेमें ५ करोड़ है।

पहले विभागमें बैल छोटे और कमजोर होते हैं। इस जमीनमें औसतन ६ एकड़में एक जोड़ी बैलसे खेती हो सकती है। दूसरे विभागमें बैल मझले कदके और अधिक मजबूत हैं, उनकी एक जोड़ीसे १० एकड़ भूमिमें खेती हो सकती है। तीसरे विभाग के बैल अधिक बड़े और अधिक मजबूत होते हैं, इसलिए वहाँ एक जोड़ी बैलसे औसतन १६॥ एकड़ भूमिमें खेती हो सकती है। इस प्रकार पहले विभागमें ८० लाख, दूसरे विभागमें १ करोड़ २५ लाख और तीसरेमें ३० लाख जोड़ोंकी आवश्यकता होती है। प्रत्येक विभागमें जितने जोड़ी बैल होंगे, उतने ही खेती करनेवाले परिवार होंगे।

यहाँ पर देखना है कि एक परिवारको कितने अनाज और कपड़ेकी आवश्यकता होती है। प्रायः एक परिवारमें औसतन पाँच व्यक्ति होते हैं, जिनमें एक पुरुष, एक स्त्री, दो बच्चे और एक परिवार पर आश्रित जनक या माता-पितामेंसे कोई होता है। इस तरहसे ४ जोड़ेके बराबर आवश्यकता चाहिए। प्रायः एक

परिवारके पास औसतन एक जोड़ी बैल खेती और यातायातके लिए, एक गाय या भैंस और उसके एक बच्चा होता है। ये सब मिलकर पांच होते हैं, जिन्हें ४ प्रौढ़ पशुओंके समान समझना चाहिए। मनुष्य और पशुओंके लिए अनाज और चारेकी आवश्यकता प्रत्येक विभागमें जुदे-जुदे रूपमें होती है। निम्नलिखित विवरणसे यह प्रकट होगा कि एक परिवारके लिए, जो जमीन निश्चित की गई है, उसका किस प्रकार उपयोग होता है और वह परिवार तथा उसके पशु भारतीय योजनामें कहां तक उपयुक्त बैठते हैं :

वह जमीन जिसमें औसतन ६० इंच से अधिक वर्षा होती है।	वह जमीन जिसमें २५ से ६० इंच वर्षा होती है और आधी भूमिमें सिंचाईके साधन हैं।	वह जमीन जहां औसतन २५ इंच से कम वर्षा होती है।
१ परिवार या इकाईकी जमीनका क्षेत्रफल—		
६·२५ एकड़,	१० एकड़	१६·६६६ एकड़
हर विभागमें जोती हुई जमीन—		
५ करोड़ एकड़	१२॥ करोड़ एकड़	५ करोड़ एकड़
खेतीबारीमें प्रत्यक्ष लगे हुए परिवार—		
८० लाख	१ करोड़ २५ लाख	३० लाख
प्रत्यक्ष रूपमें खेतीमें लगे हुए परिवारों के व्यक्तियोंकी संख्या प्रत्येक परिवार में ५ व्यक्तिके औसतसे—		
४ करोड़	६ करोड़ २५ लाख	१॥ करोड़

घास

एक गाय-बैलके लिए (एक मास चराई का छोड़कर) घास—

४५·३७५ मन	५३·६२५ मन	६६ मन

उपरोक्त चार गाय बैलोंके लिए [(१४)-४]

१८१·५ मन	२१४·५ मन	२६४ मन

प्रत्येक परिवारको अनाजसे प्राप्त होने वाला घास—

४० मन	४५ मन	४८ मन

एक परिवारके पशुओं के लिए सूखे घासकी आवश्यकता—[१५×१६]

१४१·५ मन	१६९·५ मन	२१६ मन

प्रति एकड़ घासकी औसत पैदावार, (सूखे घास में)—

४४ मन	६० मन	३५ मन

एक परिवारके पशुओंके वास्ते घास पैदा करनेके लिए कितने एकड़ घासकी उपज (१७÷१८)—

३·२१६	२·८२५	६·१७१

तीनों विभागोंके गाय-बैलोंके लिए— [१९×३]

२५७२८०००	३८३१८५००	१८५१३०००

तीनों विभागोंका जोड़ ८९५५३५००

इन अंकोंके अनुसार ११ करोड़ ७५ लाख मनुष्य और इतने ही पशुओंके लिए अनाज और घासके लिए उक्त परिमाणमें अनाज और घासकी व्यवस्थाकी पूर्ति है। भारतकी जनसंख्या ३५ करोड़ और ५० लाख और पशु-संख्या १७ करोड़ ७७ लाख मानी जाए तो २३ करोड़ ७५ लाख मनुष्य और ७ करोड़ २० लाख

पशुओंकी व्यवस्था करना अवशेष है। फिर जो फसल बोई जाती हैं, उनमें गन्ना, तमाखू, रुई और तेलहन आदि भी हैं। इसलिए इन परिवारोंके उपयोगसे जो १२३·७४५ एकड़ फसल बचती है, उनसे अवशेष व्यक्तियोंकी आवश्यकताओंकी पूर्ति नहीं हो सकती है। इसलिए जब तक हम खेतीकी प्रति एकड़ उपज न बढ़ाएँ, तब तक हमारे सामने दूसरा उपाय नहीं है। अधिक जमीनमें खेती करनेकी अपेक्षा, वर्तमान जमीनमें ही उपज बढ़ाना भारतीय किसानोंका लक्ष्य होना चाहिए। अलबत्ता जो जमीन गोचर-भूमिसे बचे, उसे तोड़ कर खेतीके उपयुक्त बनाया जा सकता है।

सहकारी खेती

जमींदारी-उन्मूलन ग्रामोंकी व्यवस्थाके लिए कोई नया प्रश्न नहीं है। विगत २५ वर्षोंसे यह आन्दोलन जारी रहा है। अतएव राष्ट्रीय दलके हाथमें देशकी शासन-सत्ता आने पर उसने जहां किसानोंके लिए अनेक सुधार-कानून स्वीकृत किए, वहां जमींदारी-उन्मूलनका भी आरम्भ किया। उत्तर प्रदेश, विहार और मद्राससे जमींदारी-उन्मूलन आरम्भ हुआ। जिन रियासतोंमें जागीरदारी प्रथा थीं, वहां वे भी समाप्त हुईं। इस दिशामें पश्चिम बंगाल सबसे आगे बढ़ा। वहांकी राज्य-सरकारने मुआवजा देकर सारी जमीन राज्यकी कर ली और अब किसान लगान देकर राज्यके जोतदार रहेंगे। जमींदारी-उन्मूलनमें यह कदम बड़े साहसका हुआ। इस अवस्थामें किसानोंको सहकारी आधार पर संयुक्त रूपमें खेती करनेका अधिक प्रोत्साहन मिलेगा। यदि सभी राज्योंमें इस प्रकारकी भूमि-व्यवस्था हो, तो देशकी भूमि-समस्या आसानीसे हल हो सकती है। इस अवस्थामें सभी किसान एक समान आधार पर खेती करेंगे। इस अवस्थामें भूदान आदि आन्दोलनकी भी आवश्यकता नहीं रहती है। राज्यके अधिकारमें खेतीकी जमीन जाने पर भी कुएँ, मकान, पशुगृह आदिके लिए किसानोंके पास जमीन रहती है और जिस पर उनका अधिकार रहता है।

आज देशमें खाद्यान्न-उत्पादन और राजनीति एक मिली-

अन्नपूर्णा भूमि—

आदर्श-ग्राम में मिले-जुले खेत

अन्नपूर्णा भूमि—
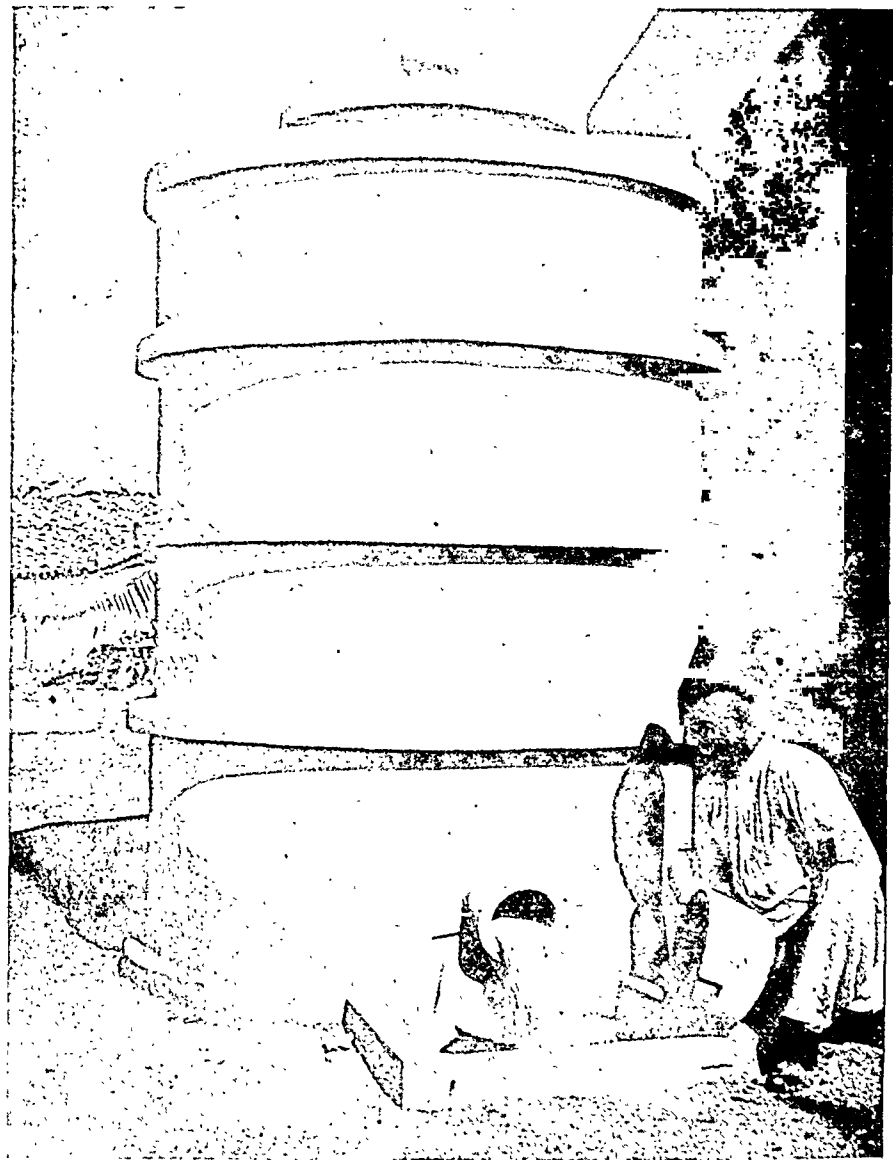
पंचायत का बीजघर

मुख्य समस्या बन गई है। किसानोंकी भूमि-समस्या हल होने पर भी खाद्यान्न उत्पादनमें वृद्धि और भूमिहीन किसानोंको जमीनकी प्राप्ति तथा बेरोजगार कृषक-मजदूरोंको काम मिलना संभव है। खेतिहर-मजदूरोंका भूमि पर अधिकार होने पर खेतीके प्रति उनका दायित्व बढ़ जाता है। इस अवस्थामें उनकी स्थिति मजबूत होती है और औद्योगिक मजदूरोंके समान उनमें साम्यवादका प्रचार संभव नहीं रहता है। भूमि पर किसानोंका अधिकार होनेसे किसान स्वतः साम्यवादके विरोधी बन जाते हैं। सोवियत रूस और चीन जैसे देशोंमें किसानोंमें ही साम्यवादका प्रसार हुआ, यद्यपि वर्ग-संघर्षके प्रणेता कार्ल मार्क्सका कथन था कि साम्यवादका आरम्भ औद्योगिक दृष्टिसे आगे बढ़े हुए देशोंमें होता है। किन्तु रूस और चीन—दोनों ही साम्यवादके सबसे बड़े समर्थक भूमिहीन-खेतिहर-मजदूर हैं, जिन्हें नए शासनने जमीन पर अधिकार प्रदान किए। भारतके भूमिहीन खेतिहर-मजदूरोंको भी साम्यवादकी ओर बढ़नेसे रोका जा सकता है, यदि हम उनके लिए भूमिकी समस्या हल कर सकें।

हमने देखा कि दक्षिणमें हैदराबाद, त्रावनकोर-कोचीन, मणिपुर और त्रिपुराके किसानोंमें साम्यवादका प्रभाव पड़ा। पूर्वी पंजाबमें भी नगरोंकी अपेक्षा ग्रामोंमें साम्यवादका अधिक प्रभाव है। पंजाबके किसान साम्यवादकी ओर बढ़े हैं। इस पर देखते हैं कि कांग्रेसकी विधान सभाएँ तथा केन्द्रीय

संसद्में जो साम्यवादी प्रतिनिधि चुन कर गए हैं, वे औद्योगिक नगरोंसे नहीं, प्रत्युत देहाती क्षेत्रोंसे चुने गए हैं। तेलंगानामें भारतीय साम्यवादियोंने चीनी साम्यवादियोंके दावपेंचों को अपनाया और वैसा ही केन्द्र स्थापित किया, जैसा कि उत्तरी चीनमें माओने स्थापित किया था और जहांसे फिर वे सारे चीनमें छा गए। तेलंगानाकी साम्यवादी शक्तिको निर्जीव करने के उपरांत यह आवश्यक समझा गया कि उन तत्त्वोंको मिटा दिया जाए, जिनसे साम्यवाद फैलता है। भारत चीन नहीं है। दोनों देशोंकी भूमि-प्रणालीमें घोर अन्तर है। भारतमें भूमि-सुधार नीतिका आधार लोकतन्त्र पद्धति पर है, जब कि लाल चीनमें साम्यवादी आधार पर डिक्टेटरशिपके द्वारा भूमिका वितरण किया गया अतः भारत चीन और रूस दोनोंसे भिन्नता रखता है। भारतमें किसानोंकी भूमिका प्रश्न बिना रक्तपात और जोर-जुल्मके हल हुआ है। जमींदारियोंका उन्मूलन मुआवजा देकर किया गया है और जमींदारी-उन्मूलन किसी राजनीतिक दल द्वारा नहीं, बल्कि वयस्क मताधिकार द्वारा निर्वाचित विधान मण्डलोंके लोक-प्रतिनिधियोंके बहुमतसे हुआ है।

जमींदारीका उन्मूलन तो प्रायः पूर्ण हो गया है। इसके उपरांत भूमिके वितरणकी ओर भी राष्ट्रका कदम बढ़ा है। अधिकतम भूमि कितनी किसानोंके पास हो और भूमिहीन किसानोंको जमीन दी जाए, इस ओर देशकी शक्तियां लगी

हुई है। सामाजिक दृष्टिसे सबके साथ उचित न्याय किया जाए, इस दृष्टिसे यह आवश्यक है कि भारतीय किसान नए जीवनमें आएं, और संकुचित मनोवृत्तियोंका परित्याग कर सहकारी ढंग पर ग्रामोंमें खेतीका निर्माण करें। सहकारी खेती से ही ग्रामोंकी बेकारी मिटेगी, उत्पादन बढ़ेगा और ग्रामोंका नव-निर्माण होगा। भविष्यमें जमीनके मालिक वे ही किसान होंगे, जो वस्तुतः अपने हाथसे खेती करेंगे। अन्य शब्दोंमें ऐसा होने पर कोई व्यक्ति जमीनका मालिक न रह सकेगा। इसलिए सब किसानोंको भूमि पर अपना अधिकार रखते हुए भी सम्मिलित संगठनमें खेती करनी चाहिए।

सहकारी कृषि द्वारा छोटे-छोटे किसान बड़े उत्पादकोंका सहजमें मुकाबला कर सकते हैं। सहकारी समितियाँ बनाकर किसान अपने व्ययको कम कर सकते हैं। उन्हें बीज, खाद, मवेशी, औजार और सिंचाईकी अलग-अलग व्यवस्था नहीं करनी पड़ती है। सबको वे सहकारिता द्वारा कृषिकी अच्छी प्रणालियोंको लागू कर सकते हैं। इससे उन्हें अधिक लाभ होता है। उनमें मिलकर काम करनेकी भावना उत्पन्न होती है और सब लाभ उठाते हैं। इस अवस्थामें अपनी पैदावार ऊँचे दामोंमें भी बेचते हैं।

आज भारतीय किसानोंका जीवन भिन्न अवस्थामें बना हुआ है, उनमें कोई विचार नहीं रह गया है, इस अवस्थामें यह विचार-णीय प्रश्न है कि [illegible] किस प्रकार [illegible] उपायोंसे सहकारी खेतीके

लिए आगे बढ़ सकेंगे। आज किसान जमीन पर अधिकार मान कर इस लक्ष्यसे कठोर परिश्रम करता है कि उनकी मेहनतका सारा लाभ उसे ही मिलेगा। किन्तु सहकारी-खेतीमें उसका लाभ केवल उसीके प्रयत्न पर नहीं, वलिक अन्य साथी किसानोंके प्रयत्नों पर भी निर्भर रहेगा। यह विचार आते ही वह कामसे जी चुरानेका प्रयत्न कर सकता है। आजकलके सामाजिक मनोविज्ञानकी वास्तवमें यह एक ऐसी कमी है कि मिल-जुलकर काम करनेवाले व्यक्ति अपने लाभको ही सर्वोपरि रखकर अन्य उद्देश्योंकी ओर ध्यान नहीं देते।

सहकारी खेतीमें किसान अपने परिश्रमसे ही, दूसरोंके परिश्रम और साधनोंसे लाभ उठाते हैं। किसानोंमें इन भावोंको उत्पादन करनेके लिए यह आवश्यक है कि उन्हें उच्च सामाजिक आदर्शोंकी शिक्षा दी जाए। आज भारतीय किसान सबकी जमीनोंको एक साथ मिलाकर खेती करनेकी प्रणालीका अपनी परम्पराओं और भावनाओंके कारण विरोध करता है। साझेके झगड़ोंसे अलग रहने और अपनी जमीनसे प्रेम हो जानेकी भावनाएं भी सहकारी खेतीमें बाधक होती हैं। पर ग्रामोंकी दशासे परिचित सबको ज्ञात है कि, किसानोंमें अलग-अलग खेती करने पर भी उनमें इतने झगड़े और दुश्मनियाँ होती हैं, मारपीट, कत्ल और मुकदमेबाजियां होती हैं, जिनका कोई छोर नहीं। अधिक जीवन, समय, शक्ति और धन इन झगड़ोंमें लगता है और तब भी सुख-शांति नहीं मिलती है। जहाँ

किसानोंमें शिक्षाका साधारण स्तर गिरा रहता है और उनमें झगड़ेकी भावनाएँ किसी कदर बनी रहती हैं वहां सहकारिता को चोट पहुंचती है। इस अवस्थामें सहकारी ढंग पर खेती करनेवाले किसानोंमें सद्भावना और सभ्यताके अभावमें झगड़े खड़े होते हैं। सहकारी व्यवस्थामें कामोंका विभाग न होनेसे और सबके यथोचित काम करने पर काम अवश्य होता है, और सभी लोग कामसे लगते हैं, उनमेंसे किसीकी शक्तिका अपव्यय नहीं होता है।

यह आवश्यक है कि भारतीय किसान सहकारी खेतीकी ओर बढ़ें, इसलिए किसानोंको शिक्षित किया जाए, उनकी कठिनाइयोंको हल किया जाए। आरम्भकी अवस्थाओंमें किसानोंको आवश्यक परामर्श देने और सहकारी कृषि खेतोंकी व्यवस्था और देखरेखके लिए योग्य व्यक्तियोंकी नियुक्तियां ग्रामोंमें की जाएँ। ये व्यक्ति कृषि तथा सहकारी व्यवस्थामें दक्ष हों और ग्रामीण जीवनका अनुभव रखते हों, वे केवल नौकरीकी भावनासे नहीं, समाज-सेवाकी भावनासे ग्रामोंमें कार्य करें। उन्हें यह गौरव हो कि उनके ग्रामके किसान सहकारी व्यवस्थामें उत्तरोतर प्रगति करें और उनमें कोई मतभेद उत्पन्न न हो। लोकतन्त्र भारतमें रूस और चीनके समान सहकारी फार्मोंका निर्माण होना संभव नहीं है। यहां सरकार आतंक और हिंसात्मक उपायोंका अवलम्बन करनेमें समर्थ नहीं है। यहां किसानोंको स्वेच्छापूर्ण प्रयत्नों द्वारा सहकारिताके

क्षेत्र पर लाना पड़ेगा। किसानोंकी भूमि, पशु और पूंजीको—एक करनेके लिए उन्हें बहुत कुछ समझाना-बुझाना पड़ेगा।

देशके प्रत्येक राज्य और जिलों तथा कस्बोंमें सामुदायिक कृषि फार्मोंकी स्थापना होना आवश्यक है। इन फार्मोंकी सफलताकी प्रेरणाएँ ग्रासके किसानोंको इस क्षेत्रमें आगे करनेमें साधक बनेंगी। इस प्रकारके प्रयत्नोंसे ग्रामोंमें सहकारी खेतीका अधिकाधिक विस्तार संभव है। यह होने पर ही भारतीय ग्राम नए सामाजिक और आर्थिक जीवनमें प्रकट होंगे।

भारतका ग्रामीण वातावरण मध्यकालीन वर्गवादका प्रतीक है। भारतके ग्राम भेदभाव और अनेकताके जीवनसे जर्जरित हो चुके हैं। उनमें व्यक्तिगत स्वतन्त्रताका भाव बहुत गहरा है। यह व्यक्तिगत स्वार्थ केवल निजी स्वार्थ साधना है। उनमें सामुहिक रूपसे मिलकर खेती करनेका उन्हें अभी अवसर नहीं मिला है। उनको सामुहिक प्रयत्न करनेकी चेतना अभी प्रसुप्त है। ग्रामीणोंमें वैयक्तिक-स्वतन्त्रताकी भावना नगरवालोंकी अपेक्षा बहुत अधिक है। नगरमें लोग व्यापार और उद्योग धंधोंमें सम्मिलित पूंजी और सम्मिलित परिश्रम करनेमें आगे बढ़ते हैं। इतना ही नहीं, नगरमें काम करनेवाले मजदूरोंमें सम्मिलित स्वार्थ भावना है।

जमींदारी प्रथाके नष्ट हो जाने पर भारतीय किसान जमीन के मालिक बन गए हैं। किसीके पास कम और किसीके पास अधिक अनुपातमें जमीन है। इस प्रकार भारत-भूमि पर भार-

तीय किसानोंकी प्रभुता स्थापित हो गई है। पर किसानोंकी यह प्रभुता कब बलवती हो सकती है, जब कि वे भी ट्रेड-यूनियन मजदूरोंकी तरह सामुहिक खेती करें। मजदूर भी एक दिन लाखों और करोड़ों रुपएकी पूँजीसे चलनेवाले कारखानोंके मालिक होंगे। अतएव सरकार जमीनका समान वितरण करनेमें आगे बढ़े या न बढ़े, प्रत्येक ग्रामके किसान सहकारी तथा संयुक्त प्रथाके किसी भी सिद्धान्त पर खेती कर अपनी और ग्रामकी उन्नति करनेमें अग्रसर हो। किसान सोचें कि, अभी भारतमें लोकतन्त्र राज्य है, उनसे यह आशा की जाती है कि वे अपने और राष्ट्रके हितके लिए संयुक्त कृषि करें। पर यदि आज देशमें साम्यवादी शासन होता और कौन जाने आगे न हो जाए तो उन्हें मजदूर होकर संयुक्त कृषिको अपनाना पड़ता। यदि किसानोंने स्वेच्छापूर्वक कृषिकी पैदावारमें सहकारी तथा संयुक्त प्रथाको स्वेच्छापूर्वक न अपनाया, हरएक ग्राममें सम्मिलित शक्तिका उपयोग न हुआ तो वे साम्यवादको न रोक सकेंगे। किसानोंका कर्तव्य है कि वे ग्रामोंमें शांतिमय क्रान्ति कर संसार के किसानोंको बतला दें कि महात्मा गांधीका देश उनसे पीछे नहीं है। भारतीय किसान देखें कि पेलस्टाइनमें यहूदियोंने क्या चमत्कार कर दिखाया। वे किस मुसीबतमें वहां जाकर बसे थे। एक ओर उन पर तोपें दग रही थीं तो दूसरी ओर वे अपने पैर जमा रहे थे। ट्रैक्टरोंसे यहूदी किसानोंने सारी भूमिको कृषि योग्य बनाया। उन्होंने निजी स्वार्थोंको भुला दिया

और व्यापक स्वार्थकी रक्षाके लिए तन मनसे संयुक्त कृषिको सफल कर दिखाया। उन्होंने दो-एक वर्षमें इतनी अधिक पैदावार की कि वे खाद्यान्नके प्रश्नमें स्वावलम्बी हो गए। चीनके किसानोंने भी अपने सामने एक ही लक्ष्य रखा कि अपने देशको धन धान्यसे परिपूर्ण करना। वहाँ सब किसान एक हो गए। किसी भी प्रकारकी असमानता उनमें नहीं रही। वे निजत्वको भुलाकर सम्मिलित कल्याणके लिए जुट गए। इस सम्मिलित उत्पादनसे चीनके हरएक किसानकी आय अधिक बढ़ी।

सहकारी और संयुक्त कृषिके कई भेद हैं। सहकारी कृषि पद्धतिका दो रूपमें उपयोग होता है। सहकारी कृषिका पहला रूप यह है कि किसान अपनी जमीन पृथक रखते हैं और कृषिसे जो आय होती है, उसे अपनी जमीनके आधार पर लेते हैं। किन्तु उनका संगठन एक होता है और वे सम्मिलित रूपमें खाद्यान्न और कच्चे मालके विक्रय, बीज-क्रय, खादके उपयोग, भारी औजारोंके उपयोग और सिंचाई तथा अन्य आवश्यकताएँ और लेन-देन करते हैं। योरपके सभी देशोंमें सहकारी कृषिकी यह प्रथा प्रचलित है।

सहकारी कृषि प्रथाके दूसरे रूपमें किसी किसानका जमीन पर पृथक अधिकार नहीं रहता है। सब खेतोंकी जुदी जुदी हद मिट जाती हैं और उन सबका बड़ा फार्म बनता है। वे सब सम्मिलित रूपसे खेती करते हैं। कार्य संचालनके लिए वे अपनी एक समिति बनाते हैं और उसके नियत कार्यक्रमके अनु-

सार सारी व्यवस्था होती है। यह एक प्रकारसे संयुक्त-कृपिका रूप है। पेलस्टाइन और भारतमें यह पद्धति परिणत हुई है।

सहकारी कृपि पद्धति स्वेच्छापूर्वक संगठनकी प्रतीक है। यह हरएक किसानकी इच्छा पर निर्भर है कि उसमें सम्मिलित हो या न हो। कृपि-सहकारी-समितिकी इच्छा पर निर्भर है कि किसी किसानको सदस्य न बनाए या किसीके अनुचित व्यवहार पर उसे पृथक कर दे। किसीको सम्मिलित करना या न करना सहकारी समिति पर निर्भर है। किन्तु संयुक्त प्रथामें ग्रामके सभी वयस्क पुरुप और सभीको फार्ममें सम्मिलित होनेका अधिकार होता है और जिस व्यक्तिके पास जमीन है, वह न तो स्वयं सदस्य होनेसे इन्कार कर सकता है और न समिति ही उसे सदस्य बननेसे रोक सकती है।

सहकारी प्रथामें जमीन पर अधिकार किसानका बना रहता है, किन्तु संयुक्त प्रथामें किसानोंकी सहकारी समिति सारे खेत पर अधिकार प्राप्त करती है। यदि कोई किसान सम्मिलित न हो तो उसे जमीनका मुआवजा दे दिया जाता है। सहकारी प्रथामें कोई किसान भविष्यमें सदस्य न रहना चाहे, तो वह अपनी जमीन समितिके अधिकारसे वापस ले सकता है अथवा वह उसका मुआवजा पाता है, किन्तु संयुक्त प्रथामें ये दोनों ही बातें नहीं उठतीं। उसमें न तो जमीन वापस मिलती है और न मुआवजा ही दिया जाता है, क्योंकि आरम्भमें ही जमीनका अधिकार समितिको प्राप्त होता है।

संयुक्त कृषिमें वे ही किसान मजदूरी पाते हैं, जो उसमें सम्मिलित रहते हैं और मेहनत करते हैं, किन्तु सहकारी प्रथामें दोहरी आय होती है। किसानोंको दैनिक कार्यकी मजदूरी चुकाई जाती है और मुनाफेका हिस्सा अलग पाते हैं। यह हिस्सा उनकी जमीनके आधार पर होता है। सब प्रकारके व्यय कम कर तथा कुछ धन रक्षित कोषमें रख कर बाकीकी रकम किसानोंको उनके जमीनके अनुपातसे मिलती है। सहकारी प्रथामें किसानोंका उनकी थोड़ी बहुत जमीन पर अधिकार पूर्ववत् बना रहता है। इसलिए भारतके किसान यदि अपने अधिकार बनाए रखना चाहते हैं तो उन्हें सहकारी प्रथाके संगठनको अपनाना चाहिए। चीन, जापान, बेलजियम, डेन्मार्क और जर्मनी आदि देशोंके किसानोंके पास छोटे-छोटे खेत हैं, किन्तु उन्होंने सहकारी प्रथाके अन्तर्गत एक एकड़ जमीनमें उतना ही उत्पादन किया, जितना अमेरिका और आस्ट्रेलियाके बड़े-बड़े खेतोंमें हुआ। सहकारी प्रथामें कोई किसान बेकार नहीं रहता। पर बड़े खेतोंके लिए यह भय है कि बहुतसे किसान छुट्टी पा जाएँ और उन्हें दूसरा धंधा देखना पड़े।

रूसमें संयुक्त कृषि प्रथा है, किन्तु वहांकी अवस्था भारतसे भिन्न है। रूसमें अधिक जमीन है और मानव शक्ति बहुत कम है, किन्तु भारतमें मानव शक्ति अपरिमित है। इसलिए सभी किसानोंको काम चाहिए। पर यह स्वीकार करना पड़ेगा कि ग्रामोंमें सम्मिलित खेतीका कोई भी रूप हो, किन्तु आजकी

पृथक अवस्था सर्वथा हानिकर है। यह किसानके लिए ही लाभ-दायक नहीं है। एक किसानके पास एक छोटा खेत एक स्थान पर है तो दूसरा खेत उससे बहुत दूर पर है और तीसरा किसी दूसरे ग्राममें है और वह सभी खेतोंमें फसल करनेका प्रयत्न करता है। यदि एक खेतमें फसल खराब गई या वह उसकी अच्छी तरह देखभाल नहीं कर पाया तो वह दूसरे खेतोंकी ओर झुकता है। एक किसान मर गया, और उसके कोई वारिस नहीं है और यदि है तो वह कहीं दूर रहता है। अतएव वह उतनी दूरसे उस जमीनकी अच्छी देखभाल नहीं कर सकता।

बिखरे हुए खेतोंमें पशु और सामानको एक स्थानसे दूसरे स्थान पर ले जाना भारी अपव्यय है। इससे उत्पादन-व्यय बढ़ता है। जहां पृथक खेतोंमें दस प्रतिशत व्यय बढ़ता है, वहां सम्मिलित खेती द्वारा खेतोंकी व्यवस्थामें तथा कृषिमें बिना किसी सुधारके भी २० प्रतिशत आय बढ़ती है। सिंचाईकी समस्या बिखरे हुए खेतोंके लिए अत्यन्त कष्टप्रद है। एक कुएँसे सब खेतोंको पानी नहीं पहुँच सकता। बिखरे हुए खेतोंमें बहुत सी जमीन बागड़ और हद बनानेमें छूट जाती है। जितने अधिक छोटे खेत होंगे, हदबंदीमें उतनी ही अधिक जमीन छूटेगी पर यह सब जमीन एक बड़ा खेत होने पर बच सकती है। या सम्मिलित खेती होने पर साधारण हद रखी जा सकती है। छोटे-छोटे खेत ही किसानोंमें लड़ाई झगड़ेका साधन बनते हैं। हदका झगड़ा आए दिन खड़ा रहता है। पशु बराबर एक

खेतसे दूसरे खेतमें गुजरते हैं और उससे गाली-गलौज और मारपीट होती है और मामला अदालत तक जाता है। समय, शक्ति और धन तीनोंका अपव्यय होता है। किसानोंका बहुत-सा रुपया रेलकी यात्रा और वकील तथा मुहर्रिरोंकी जेबोंमें जाता है।

छोटे-छोटे हिस्सेमें खेतोंके बिखरे रहने पर कृषि-विकास होना कभी संभव नहीं है। एक किसान अपने खेतमें सुधार करता है, किन्तु उसके नजदीकके खेतकी फसलमें कीड़े लगे हैं और पौधे रोगके शिकार हैं तो प्रगतिशील किसानके सारे प्रयत्न व्यर्थ जाते हैं। भूमिको कटतीसे बचाना और वर्षाका जल संचय करना टुकड़े खेतोंके लिए कभी संभव नहीं है। इतना ही नहीं एक साधारण किसान अपने छोटे खेतमें नए प्रयोगोंका उपयोग करनेमें कभी समर्थ नहीं हो सकता है। वह भारी व्यय को बर्दाश्त नहीं कर सकता है। उसकी आशाएँ स्वप्नवत् बनी रहेंगी कि उसकी पैदावार सुधरे। कब उसके खेतमें ट्रैक्टर चल सकता है? छोटे खेत कृषि उद्योगमें अधिक रुपया लगनेमें बाधक बनते हैं। खेत सम्मिलित होने या बड़े फार्ममें परिणत होने पर ही कृषि उत्पादनमें अच्छी पूंजी लगाई जा सकती है। समय बदल गया है और कृषि-उद्योगने राष्ट्रकी आर्थिक व्यवस्था में महत्वपूर्ण स्थान ग्रहण किया है। अतएव खेत बड़े होने पर लाभकी दृष्टिसे पूंजी लग सकती है, क्योंकि उस अवस्थामें नए प्रयोगोंके द्वारा उत्पादन बढ़ने पर अधिकसे अधिक लाभ होता है।

कोई भी योजना तथा कोई भी कृषि विशेषज्ञ तथा खाद, सिंचाई और बीज आदिके अच्छे साधन पैदावार नहीं बढ़ा सकते, जब तक कि टुकड़े-टुकड़े खेत सम्मिलित न हों। यदि हमें यह अभीष्ट हो कि भारत कृषि उत्पादनमें विकास करे तो हमारे सामने सम्मिलित कृषि व्यवस्था हो, कृषिके खेतोंका एकीकरण हो। इस दिशामें देश जब तक आगे नहीं बढ़ेगा, तब तक पैदावारकी समस्या कभी हल न होगी।

भारतके किसानोंको जमीनसे अधिक मोह है, जमीन कैसी भी दुर्दशापूर्ण अवस्थामें रहे, किन्तु वे अपने हितको नई दृष्टिसे नहीं देखेंगे। पर वे यह सोचें कि उनका जमीन पर अधिकार सहकारी प्रथामें भी बना रहता है और इस अधिकारके बने रहते हुए भी उनके खेतकी जमीन सुधरती है, उत्पादन बढ़ता है और उन्हें पहलेसे कई गुना अधिक लाभ होता है।

संयुक्त कृषिकी व्यवस्था जारी होने पर ग्राममें सहयोगका नया वातावरण उत्पन्न होगा। ग्राममें आजसे अधिक आय होने पर विकासके नए कार्यक्रम जारी हो सकेंगे। किसानोंके अस्वास्थ्यप्रद रहन सहनका अन्त हो जाएगा, लोग दूर-दूरके फासले पर रहेंगे, ग्राम रोगोंसे मुक्त होंगे और उनमें नए ढंगका जीवन उत्पन्न होगा। पर यह कब संभव है, जब कि एक किसान दूसरे किसानसे लागडांट किए खड़ा हो, उस अवस्थामें ग्राममें कब पंचायत चल सकती है, कब समाज सुधारकी योजनाएं विकास पा सकती हैं और कब उत्पादन ही बढ़ सकता

है। ग्रामोंकी भावी उन्नति केवल एक बात निर्भर है कि किसानों में सहकारिता-जीवन उत्पन्न हो।

बड़े-बड़े समान आकारके खेतोंके ब्लाक किसानके लिए निश्चय ही लाभदायक हैं। पर यह स्मरण रहे कि कृषिकी जमीन पर उसीका अधिकार जायज है, जो व्यक्ति खेतोंमें काम करे। जो कुछ हो, खेतोंका एकीकरण एक प्रयोग है, जिसके द्वारा जमीन मालिक या उसे जोतनेका अधिकार रखनेवालोंको अपने बिखरे हुए टुकड़ोंको सम्मिलित करनेके लिए बाध्य किया जाता है। उनके खेतोंके टुकड़े यदि कई स्थान पर हैं, तो उतनी जमीन उन्हें एक ही स्थान पर मिलती है। इस प्रकार जमीनका परिवर्तन सभी देशोंमें हुआ है।

भारतीय किसानोंको समयकी ओर देखना चाहिए। वे देखें कि बड़े-बडे नरेशोंको अपनी रियासतें छोड़ देनी पड़ीं। तब किसानकी तो वह अवस्था नहीं है। माना कि वह अपनी जमीनको अपने बाप दादोंकी दी हुई पवित्र धरोहर मानता है और उसमें यह भावना है कि जमीन उसकी है। इस भावनाके कारण वह अपनी जमीनकी व्यवस्थामें कोई परिवर्तन करनेके लिए आगे नहीं बढ़ता। पर इसमें तो उसकी क्षति है। उसे आज नहीं, तो कल सम्मिलित खेतीकी प्रथाको अपनाना पड़ेगा। वह ग्राम भाग्यशाली होगा और उसके निवासी दूरदर्शी माने जाएँगे, जो स्वेच्छापूर्वक सम्मिलित खेतीका आरम्भ करेंगे। ऐसे किसान भावी संकटोंसे मुक्ति पाएँगे। कारण, राष्ट्रका लक्ष्य है उत्पादन बढ़े

और यदि वह इस तरह नहीं बढ़ता है तो शासनका नैतिक कर्तव्य होगा कि जिस प्रकार उसने जमींदारी प्रथाका अन्त किया, उसी प्रकार नए कानून द्वारा सम्मिलित खेतीकी प्रथाको आरम्भ करे।

अनेकों देशोंमें खेतोंका एकीकरण बाध्य रूपमें किया गया। पृथक खेती एक ऐसा दुगण है, जो राष्ट्रके हितके लिए महान घातक है। सरकारका कर्तव्य है कि भविष्यमें खेतोंके विभाजनको मंजूर न करे। सरकार ग्रामोंकी जमीनके सम्बन्धमें दो लक्ष्य रखे : १—जमीनके नए टुकड़े न हों और २—टुकड़ेवाली जमीनोंका एकीकरण हो। हिन्दू और मुसलमानोंमें जो भी प्रथाएँ हों, किन्तु सरकार जमीनके सम्बन्धमें पारिवारिक सदस्योंके पृथक्-पृथक् अधिकार स्वीकार न करे। सरकार इस सम्बन्धकी नीति स्पष्ट घोषित कर दे। उसे नया कानून बनाना चाहिए कि जमीनका विभाजन न हो पाएगा, जिस किसानके पास जहाँ तहाँ बिखरे हुए खेत हैं, उसे परिवर्तन करना होगा अथवा किसी खेतको बेच देना होगा। यह बर्दाश्त न किया जाएगा कि कोई खेत अविकसित अवस्थामें पड़ा रहे। इसके सिवा जिन खेतोंमें किसान नए साधनोंका प्रयोग करनेमें पिछड़ेंगे, उन्हें कानूनसे मजबूर किया जाए कि वे सम्मिलित खेती करें और यदि वे इसके लिए अग्रसर न होंगे तो राज्यका अधिकार होगा कि मुआवजा देकर उस जमीनको हस्तगत कर ले या किसी दूसरे किसानको दिला दे। विरोध तो होगा, पर

यदि स्वेच्छापूर्वक किसान आगे न बढ़ें तो राज्यका कर्तव्य होगा कि वह साहसपूर्वक परिस्थितियोंका सामना कर जमीनका एकीकरण करे।

को-आपरेटिव क्रेडिट सोसाइटियाँ, सहकारी सम्मिलित कृषि समितियाँ तथा अन्य सहकारी समितियोंका जिला तहसील और हलकोंमें संगठन किया जाए। किसानोंको इन संगठनोंका सदस्य बनाया जाए। किसान ही इन समितियोंका संचालन करें। उनमें यह भावना उत्पन्न हो कि वे इन समितियोंके लिए जिएँ और मरें। सम्मिलित खेतीकी सफलताके लिए किसान अपनी जान लड़ा दें। इस प्रकार एक एक जिलेमें जितने अधिक संगठन सफल होंगे, उतनी ही सम्मिलित कृषिका प्रसार बढ़ेगा और इस प्रकार पृथक् कृषिका अन्त हो जाएगा। आवश्यकता यह है कि सच्चे कार्यकर्ता और ग्रामके शिक्षित किसान इस ओर जुट पड़ें। आरम्भमें लोग उपेक्षासे देखेंगे, किन्तु जब सफलता प्राप्त होगी, तब शनैः शनैः सब खिंच आएँगे।

पंजाबमें सन् १९३७ में ८ लाख एकड़ जमीनका एकीकरण हुआ। इस प्रगतिमें उत्तरोत्तर वृद्धि हुई और प्रति वर्ष १ लाख एकड़ जमीन सम्मिलित खेतीके अन्तर्गत आई। किसी जिले और तहसीलमें सम्मिलित कृषि सहकारी समितिकी रजिस्ट्री तब स्वीकृत हुई, जब कि ९० प्रतिशत जमीनके मालिक प्रार्थना पत्र पर हस्ताक्षर किए हों और ग्रामकी ७५ प्रतिशत जमीन एकीकरण के अन्तर्गत आई हो। इन सम्मिलित कृषि सहकारी समितियोंने

अपने सदस्योंको मजबूर किया कि वे उसके नियमोंका पालन करें। उनने जमीनका विभाजन रोका और सम्मिलित कृषिके लिए खेतोंकी पुनर्व्यवस्था की। कृषि सम्बन्धी झगड़े समितिकी पंचायत द्वारा तय किए गए। यह कहना न होगा कि इन समितियोंका कार्य स्वेच्छापूर्वक आगे बढ़ेगा। उन्होंने न तो सरकारसे कोई सहयोग लिया और न उन पर सरकारका कोई दबाव ही पड़ा। इन्हीं प्रयत्नोंका परिणाम हुआ कि सन् १६३७-३८ में १२००० एकड़ जमीनका एकीकरण हुआ। जमीनके २ लाख टुकड़ोंको २६ ४०० प्लाटोंमें परिणत किया।

उत्तर प्रदेशके पश्चिमी जिलोंमें भी सम्मिलित खेती शुरू हुई है। २५००० एकड़ जमीन ४१००० टुकड़ोंमें बँटी थी, उसके ४००० प्लाट बनाए गए। काश्मीरमें ५२००० एकड़ जमीनका एकीकरण हुआ। दक्षिण भारतमें भी सहकारी समितियोंकी प्रगतिने सम्मिलित कृषि-प्रथाको उत्तेजन दिया।

कई स्थानोंमें जमीनके एकीकरणके लिए विशेष कानून स्वीकृत हुए। मध्य प्रदेशके छत्तीसगढ़ डिवीजनमें 'भूमि-एकीकरण कानून (१६२८-६) ने एकीकरण अधिकारीकी नियुक्तिको स्वीकार किया। उसके प्रयत्नसे इलाकेमें जमीनका परिवर्तन और एकीकरण बहुत बड़े परिमाणमें हुआ। जमीनके झगड़ोंके सम्बन्धमें उसके निर्णय अन्तिम थे। अदालतोंका उन पर विचार करनेका कोई अधिकार नहीं रहा। इन सब प्रयत्नोंका परिणाम यह हुआ कि ११ लाख एकड़ जमीनका परिवर्तन हुआ।

दुर्ग और रायपुर जिलेके ११७२ ग्रामोंकी जमीनोंमें नए परिवर्तन हुए। जिस किसानके पास आधा एकड़ जमीन थी, उसके पास ३॥ एकड़ हुई। इस प्रकार जो जमीन २३७०००० टुकड़ोंमें थी, उसके ३५४००० खेत तैयार हुए। अधिकारियोंका प्रयत्न है कि नए खेतोंका भी एकीकरण हो और उनमें सम्मिलित खेती हो।

पंजाबमें भी ऐसा कानून स्वीकृत हुआ था, जिसका प्रयोग गुजरात, रोहतक और सियालकोट जिलेमें हुआ था। इसके अन्तगत कई हजार एकड़ जमीनका एकीकरण हुआ। बड़ौदाके राज्यमें नए कानून हुए, २७००० एकड़ जमीनका एकीकरण हुआ। अतः जमीनके एकीकरणके लिए बंगाल, बिहार, उत्तरप्रदेश, राजस्थान, मध्यभारत, हैदराबाद, मद्रास और मैसोर आदि राज्यों में नए कानूनोंकी आवश्यकता है। जमीनका एकीकरण और सम्मिलित खेतीके लाभोंसे देश अपरिचित नहीं है। यदि ग्रामीण भारतको अपने अभ्युदयके लिए अग्रसर होना है, तो समस्त भारतमें विस्तृत पैमाने पर जमीनके एकीकरण और सम्मिलित कृषि-प्रथा अविलम्ब जारी की जाए। कानूनके द्वारा हो, या स्वेच्छापूर्वक हो, राष्ट्रके कल्याणके लिए जमीनका एकीकरण अनिवार्य होना चाहिए। इससे देशकी अनेक समस्याएँ हल होंगी। किसान अपने निर्माणके स्वयं भाग्य विधाता बनेंगे। इसीसे देशमें राजनीतिक शांति स्थापित होगी। तब संगठित और बलशाली किसान राष्ट्रका नेतृत्व और शासन करनेमें समर्थ होगा।

भूमिकी उर्वरा-शक्ति

कृषि-भूमिकी उर्वरा-शक्ति कायम रखनेके लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि उसकी मिट्टी लगातार बदली जाए। जिन खेतोंमें नियमित रूपसे खेती हो, उनकी मिट्टी यदि न पलटी गई और उसमें नई खाद न डाली गई, तो वह अपना उर्वरापन खो बैठती है। भूमिमें जितनी शक्ति होगी, उतनी ही अधिक उसमें पैदावार होगी। मिट्टीके रासायनिक तत्वोंकी अपेक्षा उसके भौतिक रूपमें उपजाऊपन अधिक है। वस्तुतः दोनों ही एक समान हैं। पर मिट्टीमें जब पोषण-तत्व कम हो जाते हैं, तब स्वभावतः पैदावार कम होती है।

भारतके सभी प्रदेशोंमें जहां-जहां जमीनकी जांच पड़ताल रायल कमीशनने की या स्टुवर्टने की, अथवा अन्य जरियोंसे हुई, उन सबके अन्वेषणसे यह बात स्पष्ट प्रकट हुई, कि इस देशकी जमीनमें सर्वत्र नाइट्रोजनका नितांत अभाव है। किसी भी प्रदेशमें कहींकी जमीन देखी जाए, नाइट्रोजनका पूर्णतः अभाव मिलेगा। इसके अतिरिक्त जमीनमें पौदोंको बढ़ानेवाले अन्य दो तत्व फासफरस और पोटाश भी बहुत कम है। उनका स्थानीय महत्व ही कहा जा सकता है, अर्थात् किसी स्थान पर थोड़ी बहुत अच्छी तादादमें हैं, और कहीं उनका बिलकुल अभाव है।

भारतमें जहां-जहां कृषि अनुसंधान केन्द्र हैं, वहां-वहां मिट्टी

यदि कम्पोस्ट खाद तैयार की जाए और खेतोंकी हरी खादका उपयोग किया जाए, तो यह अभाव दूर हो सकता है। हरी खादमें अधिक पोषण तत्व होते हैं। इस दृष्टिसे हमारी पड़ोसी चीनने खाद समस्याका हल जिस ढंगसे किया है, वह हमारे लिए आदर्श हो सकता है। उसने ग्रामोंमें उपलब्ध सभी संभवनीय साधनोंका खादके रूपमें उपयोग किया। पर इस देशमें हम ग्रामोंमें गोबर आदि पदार्थोंका ईंधनके रूपमें उपयोग करते हैं, इससे खेतोंको खाद नहीं मिल पाती है। प्रकृति जो नाइट्रोजन प्रदान करती है, वही जमीनकी उपज कायम रखता है। पर यह स्थिति चिंतनीय है। ग्रामोंके ऐसे सारे पदार्थोंका उपयोग खादके लिए होना आवश्यक है। ईंधनके लिए गोबरकी अपेक्षा वृक्षोंका उपयोग किया जाए। यह ध्यान रखा जाए कि जो वृक्ष ईंधन आदिके लिए काटे जाएँ, उनका स्थान खाली न रहे। उनके स्थान पर दूसरे वृक्ष लगाने चाहिएँ।

वृक्ष स्वतः ग्रामकी जमीनको उर्वरा रखनेके साधन हैं। उन्हें भी यथा संभव कम नष्ट किया जाए। ईंधन तथा अन्य काम काजके लिए लकड़ीके लिए अलगसे वृक्ष लगाए जाएँ। इसके सिवाय गोबर, हरी खाद और ग्रामके अन्य सब तत्वोंका उपयोग खादके लिए करना चाहिए। हरे वड़े पौदोंमें अधिक नाइट्रोजन होता है, और उनका उपयोग हरी खादके रूपमें किया जा सकता है।

आज संसारके सभी देश अपनी भूमिकी उर्वरा-शक्ति बढ़ाने में लगे हैं। जमीनकी उपज-शक्ति बढ़ने पर ही अधिक पैदावार संभव है। यदि इस देशकी जमीनकी उर्वरा-शक्ति बढ़ जाए तो उसकी पैदावार कई गुना बढ़ सकती है। तब पैदावारके परिमाण और किस्म दोनोंमें ही उन्नति हो सकती है। प्रत्येक ग्राम के किसान अपने अनुभव, साधन और श्रोतोंका भूमिके नव-निर्माणमें उपयोग करें।

अन्नपूर्णा भूमि—
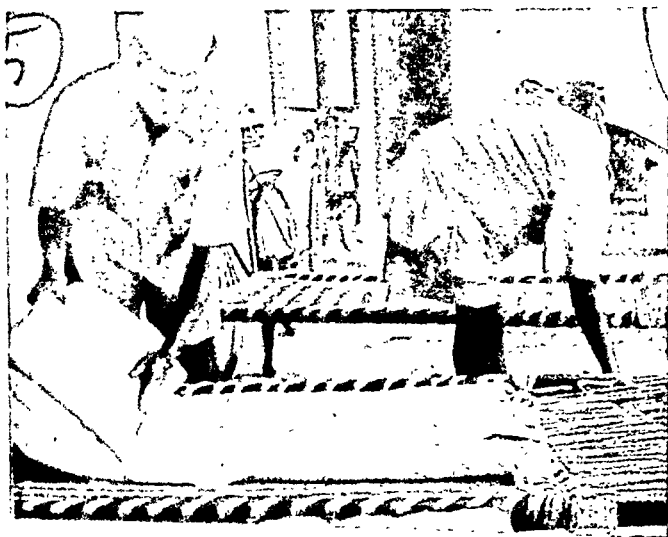
किसान का घर

अन्नपूर्णा भूमि—
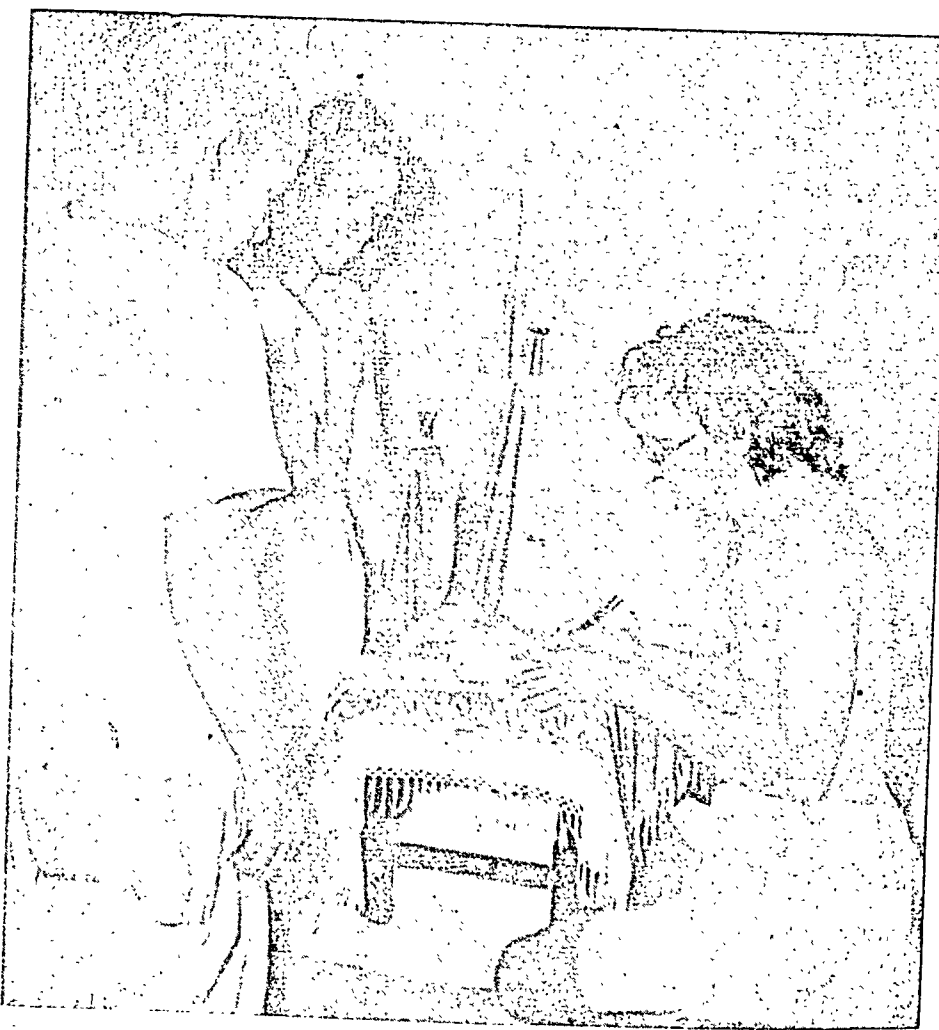
सम्पत्ति के समान वितरण में भू-दान

भूदान-यज्ञ

१८ अप्रिल १९५१ का दिन था, जब द्वितीय महायुद्धके प्रथम सत्याग्रही आचार्य विनोवा भावेने अपने भूदान-यज्ञका आरंभ किया था। इसके उपरांत उन्होंने हैदराबाद राज्य, मध्यप्रदेश, मध्यभारत, विंध्यप्रदेश और उत्तर प्रदेशके ग्रामोंकी यात्रा की। इस भ्रमणमें करोड़ों मूक भारतीयोंकी ओरसे भूमि रहित खेतिहर मजदूर और किसानोंके लिए भूमि प्राप्त की। १८ महीनेके लगातार प्रयाससे उन्होंने अहिंसक उपाय द्वारा भारतकी भूमि-सम्बन्धी आर्थिक समस्याके हल करनेका प्रयत्न किया। आर्थिक क्षेत्रमें उनकी इस नूतन सफलतासे देशके सभी वर्ग आकर्षित हुए। इतना ही नहीं भारतके समुद्रपारके अर्थविदोंने भी आर्थिक समस्याके इस प्रकार हल पर बड़ी गंभीरतापूर्वक अपने अनुकूल विचार प्रकट किए।

यह प्रकट है कि विनोवाने हैदराबाद तेलगू भाषा-भाषी पूर्वी क्षेत्र तेलंगानामें सर्व प्रथम अपना कार्य प्रारंभ किया था। यही स्थान है, जो वर्षोंसे साम्यवादियोंकी हलचलका केन्द्र बना हुआ था और जहांके किसानों पर उनका पूर्ण प्रभाव कायम था। इस कम्युनिष्ट-आतंकित प्रदेशमें विनोबाने साहसपूर्वक किसानोंके मध्यमें कार्य किया। उन्होंने हिंसाके पथसे किसानों को विलग करके उनकी भूमि समस्या हल की। उससे साम्यवादी भी प्रभावित हुए बिना न रहे। विनोबाके अहिंसक

प्रयत्नोंने तेलंगानाके किसानोंकी विचारधाराएँ बदल दीं। इससे साम्यवादियोंको मार्ग छोड़ देना पड़ा। विनोबाने घोषित किया कि तेलंगानाके किसानोंकी समस्या भूमिकी है और इस-लिए यहांके भूमिविहीन किसानोंको भूमि मिलनी चाहिए। उन्होंने इस प्रकारके नेतृत्वसे किसानोंको जीत लिया। भारत सरकार भी चकित हो गई। उसके शस्त्र-बलसे तेलंगानामें जो साम्यवाद नहीं दबाया जा सका, विनोबाने अपनी अहिंसाके द्वारा उसे मिटानेमें विजय प्राप्त की। इस दिशामें विनोबाको इतनी सफलता प्राप्त हुई कि वहां साम्यवाद इतना खत्म हो गया कि भूमि-ग्रस्त साम्यवादियोंने अस्त्र-शस्त्र सहित आत्म-समर्पण कर दिया।

पर यह स्मरण रहे कि विनोबाने अपने इस कार्यक्रममें साम्यवादका कोई विरोध नहीं किया। उन्होंने यह अवश्य कहा कि साम्यवाद और हिंसाको रोकनेके लिए किसानोंकी भूमि सम्बन्धी मांग पूरी होनी चाहिए। अपने इस वक्तव्यसे उन्होंने साम्यवादको कोई विरोध नहीं किया। वे न तो उसके शत्रु हैं और न उन्हें उसका भय रहा है। उन्होंने अपनी एक प्रार्थना के भाषणमें ये उद्गार प्रकट किए थे: —

'मेरा पक्ष तेलगांनासे आरम्भ हुआ, किन्तु वह साम्यवादके प्रतिरोधकी दृष्टिसे नहीं। मैं अपने साम्यवादी मित्रोंको यह यकीन दिलाना चाहता हूं कि उनके प्रति मैं कोई दुर्भाव नहीं रखता हूं। दूसरी ओर मेरी भावनाएँ अच्छी हैं। ईश्वरने एक

गलती की कि उसने छातीमें कोई ऐसी खिड़की नहीं लगाई, जिससे कि किसीके हृदयके अन्तरंगको जाना जाता। यदि मेरी छातीमें एक ऐसी खिड़की होती तो आप यह देखते कि मेरा हृदय साम्यवादियों के प्रति प्रेमसे परिपूर्ण है।'

यही नहीं, अपने एक दूसरे भाषणमें उन्होंने घोषित किया—'बिना पिस्तौलके धनियोंको मिटाया जा सकता है, क्योंकि अब प्रत्येक बालिग व्यक्तिको मत देनेका अधिकार प्राप्त हुआ है। भविष्यमें सरकार प्रत्येक व्यक्तिकी होगी। मैं साम्यवादियोंसे कहूँगा कि वे बाहर निकल आएँ और काम करें। यदि वे बाहर आकर काम कर सकें तो मैं उन्हें अपना पूरा सहयोग दूँगा।'

साम्यवादियोंका कोई मित्र इससे आगे क्या जाएगा। फिर आगे विनोबाके यज्ञके विरुद्ध यह तीव्र आरोप लगाया गया कि उसमें भूमिदान देनेवालोंकी अधिक संख्या मध्यम वर्ग तथा गरीब किसानोंकी है, जो शोषितकी परिधिमें आते हैं और जो स्वयं उत्पादक हैं। उनसे भूमि लेनेपर उनकी अज्ञानतासे लाभ उठाकर उल्टा शोषण किया जाता है। इसके सिवाय जिन बड़े जमींदारोंने जमीन दी है, वह निकम्मी और अनुत्पादक है। यह पीड़ितोंकी सहायता का कोई वास्तविक प्रयत्न नहीं है।'

इन आरोपोंके प्रति यह कहा जा सकता है कि विनोबाने गरीबोंसे भी भेंट स्वीकार की है, क्योंकि उनका कार्य एक यज्ञके

रूपमें है, जिसमें एक गरीब भी अपनी भेंट दे सकता है। यहाँ दान देनेवालेकी 'साम्पत्तिक-निर्धनता'का विचार नहीं है, प्रत्युत उसके हृदयके धनी पन' की। और यह कौन नहीं जानता है कि उन गरीबोंका हृदय कितना धनी है। पर क्या जीससने यह नहीं कहा था—'एक ऊँटके लिए सुईके छेदमें से निकल जाना आसान है, बनिस्वत एक धनीके लिए कि वह ईश्वरके राज्यमें प्रवेश कर सके।' यदि धनीवर्ग आसानीसे अपनी जमीन नहीं देता है तो यह कोई कारण नहीं कि गरीबोंकी श्रद्धापूर्ण भेंटसे भी इन्कार किया जाए। साधारण भूमिवाले गरीब किसानोंने अपनी स्वतः प्रेरणासे अपने भूमिहीन किसानोंके लिए भूमिदान देनेका हाथ बढ़ाया। उनपर न कोई जोर-जुल्म किया गया और न किसी प्रकारका दबाव डाला गया, जिस प्रकार रूस और अन्य सोवियट देशोंमें किया गया। अपितु भारतीय किसानोंने अपने दानसे भारतीय संस्कृति और पर-म्पराका महान निरूपण किया।

यह सही है कि धनी जमीन अक्सर कुछ लाभ पानेकी गर्ज से दान देते हैं, उन्हें राज्यसे उसके बदलेमें कोई लाभ मिले, उनका नाम हो या ऐसी बीसों सुविधाएँ प्राप्त होनेकी बातें हो सकती हैं। कभी-कभी ऐसे लोग विवादग्रस्त जमीनके हिस्सेको इस ख्यालसे दे डालते हैं कि एक पत्थर मारनेसे दो पक्षियोंका सहजमें वध हो। विनोबा इन सबसे गहरे सचेत रहे। इन कामोंको चाहे चालाकी कहा जाय या जाल, पर इन सबसे विचलित न होकर उन्होंने विश्वासपूर्वक यह उत्तर दिया —

'वे उन्हें आज जो कुछ देते हैं, जो कुछ वे दे सकते हैं, कल वे और अधिक देंगे और बाकी उसके उपरांत देंगे, कारण, सब भूमि मेरी है, उनकी नहीं है।'

इस प्रश्नके उत्तरमें कि धनियोंने बहुत थोड़ा दिया, उनका यह विश्वासपूर्वक उत्तर रहा—'मैं एक सागर हूँ, जिसमें सब प्रकारके गन्दे, कठोर, मुलायम और स्वच्छ जलकी नदियां बह कर आती हैं। मैं उन्हें पूर्ण दयासे स्वीकार करता हूँ।'

'धनी वर्ग अपनी सम्पत्तिका ट्रस्टी है और यह उसके हृदय परिवर्तन द्वारा सहजमें प्राप्त की जा सकती है' विनोबाने गांधीजीके इस महान सिद्धान्तका सक्रिय प्रयोग कर दिखाया। यह यश उन्हें ही प्राप्त हुआ और आज जब विश्वमें साम्यवादकी छायातले सरकारी आदेश तथा जोर-जुल्मसे सम्पत्तिकी जप्तीके कार्य हो रहे हैं, विनोबाका मार्ग सम्पत्तिके वितरण और वर्ग-भेद भाव मिटानेका एक महान भारतीय प्रयोग है। विनोबा का क्रमबद्ध हृदय परिवर्तनमें अटल विश्वास है। साम्यवादी इस विश्वासको परिवर्तन द्वारा दूर नहीं कर सकते। वस्तुतः कोई भी व्यक्ति जन्मजात साम्यवादी नहीं होता है। अपने जीवनकी किसी अवस्थामें पहुँचनेपर वह उसमें परिवर्तित होता है। और यह परिवर्तन निःसन्देह अहिंसक रूपमें होता है। यह परिवर्तन सर्वोदय विचारधारासे निकटतम सम्बन्ध रखता है। इसके अन्तर्गत किसी एकका और सबका [illegible]

अधिक हित करना है। सर्वोदयका सिद्धान्त यथावत स्थिति कायम रखनेके पक्षमें नहीं है। इस प्रकार एक अमेरिकनका यह प्रचार भी उसके भाव भंगी विचारोंका द्योतक है कि भारत की सामूहिक योजनाएँ गांधीवादी रचनात्मक कार्यक्रमका अंग हैं। वस्तुतः वे नहीं हैं। गांधीजीके जन्म-दिवस पर उन्हें परिणत करना, मारा बहनके अश्रुपूर्ण शब्दोंमें बापूके हृदयको चीरना है। इसी प्रकार सर्वोदय समाजकी वर्तमान स्थितिको परिवर्तन करना चाहता है। यदि मौजूदा अवस्था कायम रखना अभीष्ट होता तो भारतने न तो गांधीजी जैसे महापुरुषको जन्म दिया होता और न विनोबा जैसे साधु पुरुष समाजकी आर्थिक असमानता दूर करनेके लिए घर-घर भूमि मांगते।

एक आरोप यह भी है कि भूमिदान यज्ञने सामाजिक ढांचेमें एक अंशमात्र भी परिवर्तन नहीं किया है। देशकी आर्थिक अवस्था यथावत बनी हुई है। पर विनोबाने यह कभी नहीं सोचा कि प्रति दिन किसी स्थानपर सोलह मील चलकर वे उसका सामाजिक ढांचा बदल देंगे। किसी भी सुधारक, विचारक तथा नेता या जगतके महापुरुषने ऐसा किया या वह ऐसा कर सका। प्रातःकाल उदय होनेवाला सूर्य, जो उच्च शिखरोंकी वर्फको पिघला सकता है, क्या सबको जाग्रत कर सका? वह केवल उनके जीवनमें परिवर्तन लाता है, जो अपनी शय्या त्यागनेके लिए तत्पर होते हैं। पर जो लोग नहीं उठना चाहते, उनके लिए उसका भी कोई चारा नहीं है। अतः हमें भूमिदान यज्ञको

इस दृष्टिसे देखना चाहिए कि उसने आर्थिक क्षेत्रमें किस ढंगकी क्रान्ति की है, किस अवस्था तक उसने कितने लोगोंका हृदय परिवर्तन किया है। फिर भूमि सुधारके कार्यक्रमसे ही समाजका ढांचा नहीं बदलता है। वह इस परिवर्तनका केवल एक अंग मात्र है। विनोबाने स्वयं प्रकट किया :—

"मैं भूमि सम्बन्धी बड़ी समस्याओंके हल करनेका प्रयत्न नहीं कर रहा हूं। पर निःसन्देह मैं उसे शांतिपूर्वक हल करना चाहता हूं, किन्तु कोई भी संसारकी सभी समस्याओंको हल नहीं कर सकता है। यहां ही राम हुए हैं और यहां ही कृष्ण हुए हैं, संसारके लिए वे जो कुछ कर सकते थे, उसे उन्होंने किया किन्तु समस्याओंका फिर भी कोई अन्त नहीं है। हर एक व्यक्ति केवल अपना काम कर सकता है।'

डाक्टर कुमारप्पाने अक्सर यह प्रकट किया कि 'मैं चीन और रूस गया। किन्तु मैंने भारतके सिवाय कहीं भी साम्य-वाद नहीं पाया।' यह स्थिति जो कुछ हो, विनोबाने अपना कार्यक्रम किसी राजनीतिक दलका प्रतीक नहीं बनाया। पर राजनीतिक दलबन्दियोंकी अपेक्षा सबका एक कतारमें खड़ा होना कहीं अधिक वांछनीय है। नए चीनके निर्माता माओने श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडितसे किन सुन्दर शब्दोंमें राष्ट्र निर्माण के लिए एकताका संबोधन किया—'निर्माणके लिए हम सब एक हैं, शांतिके लिए हम सब एकमें मिलें।' पर यह भारतका दुर्भाग्य है कि भिन्न-भिन्न दल राष्ट्रके उत्थानके लिए संयुक्त नहीं

हो सकते हैं। उन्होंने देशकी हालत उस रोगीके समान बना दी है, कि जिसका जितना इलाज करो, रोग बढ़ता ही जाता है। अतः भूमिदान यज्ञका लक्ष्य समाजको आर्थिक और नैतिक स्वतन्त्रता प्रदान करना है। विनोबा एक क्रान्तिकारी है, जो अपनी गतिविधिसे समाजको बदल देना चाहते हैं। इस दिशामें वे एक सफल सत्याग्रही हैं। इसीसे उन्होंने काशीके सेवापुरी सम्मेलनमें कहा था—

'मुझे सत्याग्रही होनेका गौरव है। मुझे दूसरा और कोई गौरव नहीं है। यह विश्वास रखें कि एक सत्याग्रहीकी दृष्टिसे मैंने कभी कोई ऐसा विचार नहीं किया जिसका फल न हुआ हो।'

विनोबाने आर्थिक क्षेत्रमें एक नई प्रेरणा उत्पन्न की है। इस यज्ञ-योजनाके पूर्ण सक्रिय होने पर भूमिकी समस्या हल हुए बिना न रहेगी। देशकी सारी भूमिका पुनः वितरण होगा और उसके आधार पर ही राज्योंको भूमि कानून बनाने पड़ेंगे। उत्तर प्रदेशमें भूमिदान यज्ञको जितनी भूमि प्राप्त हुई, उससे प्रादेशिक सरकारको तत्सम्बन्धी नया कानून बनाना पड़ा। ५ लाख ग्रामोंमें ५० लाख एकड़ भूमि प्रथम प्रयास में प्राप्त करनेका यह आयोजन है।

ग्रामीकरण

भारतमें भूमिका इस प्रकार वितरण पूर्ण हो जाए और सब किसान और खेतिहर मजदूरोंको थोड़ी-थोड़ी भूमि मिल जाए तो

फिर उसकी व्यवस्था सहजमें सहकारी संगठन द्वारा हो सकती है। इस प्रकार भारत अपनी सांस्कृतिक परम्परा द्वारा रूस और चीनकी अपेक्षा इस समस्याको हल करनेमें सफलीभूत हो सकता है। भारतकी यह क्रान्ति संसारमें नवीनतम होगी। इसमें किसानोंके सहयोगकी आवश्यकता है। एशिया तथा भारतमें भूमिके सम्बन्धमें रूसकी समूहीकरण पद्धतिका अपनाना वांछनीय नहीं है, क्योंकि उससे शासन तंत्र द्वारा काम करनेवालोंका शोषण होता है। भारतीय किसान और खेतिहर मजदूर बनकर काम करनेके लिए तैयार नहीं हैं।

इसकी अपेक्षा भारतीय ग्रामोंमें 'ग्रामीकरण' पद्धति कहीं अधिक वांछनीय है। इसके द्वारा किसानोंके एक नए वर्गका निर्माण होगा। किसान, जो भूमि-पति होंगे, अपनी-अपनी भूमिके योगसे ग्रामीण संगठनका निर्माण करनेमें अग्रसर होंगे और उनकी यह व्यवस्था तथा उनके प्रत्येक कार्य समानता पर आधारित होंगे। इस प्रकार विकेन्द्रीकरण द्वारा राष्ट्रका प्रत्येक दल और संगठन प्रशासनमें भाग ले सकेगा। लोकतन्त्र समाजवादका यही ध्येय है। पर रूसमें जिस प्रकार भूमिके समूहीकरणकी व्यवस्था जारी है, उसमें काम करनेवाले किसानोंको प्रशासनके सम्बन्धमें कोई भी मत देनेका अधिकार नहीं है। इसलिए साम्यवादी रूसका ढांचा इस देशके लिए किसी प्रकार भी अनुकरणीय नहीं है।

भारतीय लोकतन्त्रमें एक दलका शासन और नागरिकों

कभी अपेक्षित नहीं है। रूसकी स्वेच्छाकरणकी नीति भारतीय लोकतन्त्रताके सर्वथा विपरीत है। भारतमें गांधीवाद और लोकतन्त्र-समाजके आदर्शपर समाजका ढांचा निर्माण किया जा सकता है, जिसमें सबको मत देनेका अधिकार प्राप्त हो। सोवियत रूसने जिन मौलिक विचारोंको अपना लक्ष्य बना रखा है, उस पर वह आज कायम नहीं है।

राष्ट्रीयकरण

भारतीय विधानमें निजी सम्पत्ति पर राष्ट्रके अधिकारके सम्बन्धमें मुआवज़े सम्बन्धी जो भी व्यवस्था हो, किन्तु भूमिके वितरणके तरीकेपर शान्तिपूर्ण हल निकल सकता है। भारतमें पूंजीवाद अंकुरित अवस्थामें है। अन्यथा इस देशमें जितना राष्ट्रीयकरणका क्षेत्र विस्तृत है, उतना लोकतन्त्रवादी ग्रेट ब्रिटेन, अमेरिका और योरपके अन्य किसी देशमें भी नहीं है। यहां भूमिका उन्मूलन तथा उसका समान आधारपर वितरण चीनकी अपेक्षा कहीं अधिक व्यापक हुआ है। देशका यह सबसे बड़ा उद्योग है, और राष्ट्रकी आयका सबसे बड़ा श्रोत है। इसके उपरांत रेलवेका उद्योग है, जिस अकेले धंधेमें इतनी पूंजी लगी है, जितनी कि निजी क्षेत्रके समस्त धन्धोंमें लगी है। इस धंधेका भी पूर्णतया राष्ट्रीयकरण हो चुका है। विद्युत, संवहन और उड्डयन आदिका राष्ट्रीयकरण हो चुका है। केवल बैंक, बीमा कंपनियां तथा उपभोक्ता पदार्थोंके धंधे हैं, जो निजी पूंजी के क्षेत्र बने हुए हैं। बुनियादी धंधोंकी स्थापना सरकारी पूंजीसे हुई है।

छोटे खेतोंमें सम्मिलित खेती

भारतवर्षमें पैदावार घटनेके अनेक कारणोंमें एक प्रधान कारण यह भी है कि कृषि-उत्पादन करनेवाले खेतोंका छोटे-छोटे टुकड़ोंमें विभाजन। खेतोंके इस बँटवारेने भले ही पारिवारिक समस्याएँ हल की हों, किन्तु उससे खेतीकी वृद्धि पर तुषारपात-सा पड़ा। पारिवारिक सदस्योंमें जमीन टुकड़े-टुकड़ोंमें बँटती चली गई। परिणाम यह हुआ कि बहुतसे टुकड़े इतने छोटे हो गए कि आज उनका लाभदायक उपयोग ही नहीं हो सकता। माना कि हरएक किसान जमीनका मालिक हो, किन्तु उसका रूप जमीनका छोटे-छोटे टुकड़ोंमें बँटवारा नहीं है। जमीनका इस प्रकारका बँटवारा शायद ही संसारके किसी देशमें हो। इसके सिवा किसी देशके किसानोंमें भारतीय किसानोंके समान यह भावना नहीं है कि वे मिलकर खेती न करें। पर इस नए जीवनमें इस देशका किसान फिर भी अलग रहना चाहता है। यह कैसी दयनीय स्थिति है।

कृषि-उत्पादनकी दृष्टिसे इन छोटे टुकड़ोंका कोई लाभदायक उपयोग नहीं है। ये टुकड़े केवल छोटे-छोटे ही नहीं हैं, बल्कि इतने दूर-दूर बिखरे पड़े होते हैं, जिससे किसानोंको अपने हल-बैल आदि खेतीके साधन—एक जगहसे दूसरी जगह लेकर आने-जानेमें ही बड़े समय और श्रमका अपव्यय करना पड़ता है। खेतोंके टुकड़ोंकी बिखरी स्थितिके कारण किसानके लिए

अपनी फसलोंकी देखभाल भी सुचारु रूपसे संभव नहीं हो पाती। खेतोंकी सीमाओंके लिए पड़ोसियोंसे झगड़े भी इसी कारण होते हैं, जिनके परिणाम दुश्मनी, मारपीट और मुकदमे-बाजीमें प्रकट होते हैं। खेत छोटे होनेके कारण, न तो उनका विकास ही किया जा सकता है और न उनकी भले प्रकार बँधाई ही की जा सकती है। प्रायः खेत छुटाईकी अधिकताके कारण परती छोड़ दिए जाते हैं।

किसानोंकी बढ़ती हुई जन-संख्याके साथ-साथ खेतोंके टुकड़े होते चले गए। यह बुराई धीरे-धीरे बढ़ती गई। परिणाम यह हुआ कि जमीनकी उर्वरा शक्तिका ह्रास हुआ। आर्थिक दृष्टिसे किसानके लिए न तो तब संभव था और न आज संभव है कि वह खेतका विकास करे। उसमें नए साधनोंका उपयोग नहीं हो सकता है। यदि किसी किसानके पास सात आठ छोटे खेत इधर-उधर बिखरे हुए हैं, जो साधारणतः होते ही हैं, तो उन सबकी व्यवस्था भले प्रकार नहीं हो पाती है। अतएव कृषि-विकासके लिए यह आवश्यक है कि, बिखरे खेतोंका संयुक्ती-करण कर बड़े-बड़े खेत बनाए जाएँ।

यह कार्य किसानोंके करनेका है। वे अपने सर्वोपरि हितकी दृष्टिसे एक-दूसरेसे मिलकर बड़े खेत बनाएँ और उन सबकी एक साथ खेती हो। संयुक्त रूपमें बड़े खेतोंपर सबका अधिकार हो। इस स्वामित्वमें जब कभी भले ही परिवर्तन हो,

किन्तु खेतोंका विभाजन कभी न किया जाय। भारतके सभी प्रान्तोंमें खेतोंका यह शोचनीय विभाजन है।

इस दिशामें बम्बई प्रदेशकी सरकारने साहसपूर्ण कदम उठाया और खेतोंकी चकबन्दीके लिए खेतोंके बँटवारेके निषेध का कानून बनाया। इस व्यवस्था द्वारा भविष्यके लिए खेतोंका बँटवारा रोक दिया गया। हर प्रकारकी जमीनके लिए खेतोंकी सीमा—स्थानीय खेतोंकी सीमाके आधारपर नियत की गई। इस सम्बन्धमें खेतकी व्याख्या इस प्रकार की गई—

'ऐसा खेत, जिसका लाभदायक रीतिसे पूर्ण उपयोग किया जा सके, अर्थात् किसान—जो अपने किसी निर्धारित खेतमें जाए, वहां उसे पूरे दिन भरके लिए काम मिले। खेतका क्षेत्रफल इतना छोटा न हो, कि वह दिन भरके थोड़े समयमें ही अपना काम पूरा कर ले और फिर उसे अपने दूसरे खेतमें कामके लिए दौड़-धूप करनेमें श्रम और समय नष्ट न करना पड़े। निर्धारित खेतीकी उपज, पैदावारका व्यय और लगान चुकानेके बाद पर्याप्त लाभ बचे।

सामान्य रूपसे जमीनके रूप इस प्रकार हैं (१) सूखी फसलें, धान और बागवानी की जमीन—जिले जिलोंकी जमीनोंमें आबहवा, मौसम, खेतीकी विधि और अन्य बातोंके विभेदोंके कारण तदनुसार खेतोंके निरधारित क्षेत्रफलोंमें भिन्नताएँ हैं। इस प्रकार प्रत्येक क्षेत्रमें खेतोंका निरधारित क्षेत्रफल निश्चित करनेका सिद्धान्त वहांके खेतोंके छोटे से छोटे निरधारित

खेतकी दृष्टिसे है, जिससे कम निरधारण होनेपर उस भूमिकी खेती लाभदायक नहीं होगी। निरधारित खेतको, जो कि आर्थिक दृष्टिसे लाभकारी खेतसे अलग है, उसके निश्चित करनेकी कार्य-बिधि इस प्रकार है :—

(२) जिराअत जमीन— एकसे चार एकड़, धान खेतीकी जमीन एक गुंठेसे एक एकड़ , बगीचा जमीन—पांच गुँठेसे एक एकड़ ; बरकत जमीन—दो से छः एकड़। इस प्रकार निर्धारित खेत निश्चित करनेके उपरान्त निर्धारित खेतसे कम आकारवाले जो टुकड़े शेष रहते हैं, उन्हें टुकड़े रू'भासे प्रकट किया गया। इन टुकड़ोंके बेचने या पट्टे देनेके सम्बन्धमें कुछ प्रतिबन्ध कायम किए गए हैं, जिससे भविष्यमें उनका हस्तांतरण इस प्रकारसे होगा कि जिससे उनके टुकड़े एकत्रित किये जा सकें। इसलिए वर्तमान टुकड़ोंको अधिकारोंके अभिलेखमें प्रविष्ट किया गया है और उसके सम्बन्धमें टुकड़ेके मालिकोंको सूचित किया जाता है। किसी भी व्यक्तिको अपना टुकड़ा दूसरेके नामपर चढ़ाना या पट्टेपर देना पड़ता है, जिससे कि वह पासवाली सर्वे नम्बर में अथवा सर्वे नम्बरोंके उप-विभागोंमें समाविष्ट हो जाए।

जमीनके विलीनकरणकी व्यवस्थामें कोई भी किसान अपनी जमीनसे वंचित नहीं किया जाता, भले ही उसकी जमीन का कितना ही छोटा टुकड़ा क्यों न हो। टुकड़ेवाली जमीनका मालिक किसान ज़ब तक स्वयं उसपर खेती करता है, वह उसके लिए स्वतन्त्र है। उसके उत्तराधिकारी भी उस टुकड़ेके परम्परा-

गत अधिकारी होते हैं। पर यदि किसान किसी समय उसे बेचना चाहे या उसे पट्टेपर देना चाहे तो उसके लिए कानून द्वारा यह व्यवस्था है कि वह जमीनका टुकड़ा इस प्रकार बेचा या पट्टेपर दिया जाए कि पासमें लगे हुए खेतमें विलीन किया जा सके। यदि पासमें लगे खेतका मालिक ऐसे खेतको न लेना चाहे या जान बूझकर कम कीमत देना चाहे तो उस टुकड़े की जमीनके मालिकको सरकारसे सहायता प्राप्त हो सकती है; जो भूमि-प्राप्ति-एक्वीजिशन-अधिनियम की व्यवस्थाके आधार पर उस टुकड़ेको निर्धारित बिक्री-मूल्यपर खरीद सकती है। इस प्रकार इस टुकड़ेवाली जमीनका मालिक हानिसे बचता है।

अतः किसी किसानसे अनिवार्य रूपसे जमीन ले लेनेका कोई प्रश्न नहीं है। इस व्यवस्थाके अन्तर्गत कानूनका प्रयोग तो तभी होता है, जब कि किसान उसे बेचता है। इस प्रकार जब वह स्वयं ही अपना अधिकार बिक्री द्वारा दूसरेको देने जाता है, तब उसे जमीनसे वंचित करनेका प्रश्न ही नहीं रहता है। इस सम्बन्धमें केवल प्रतिबन्ध भविष्यमें टुकड़े न करनेका है। उसे या तो पड़ोसी किसान खरीदे या उसे फिर सरकार प्राप्त करे, जिससे कि वह आगे चलकर बड़ा खेत बनानेमें समर्थ हो और जब तक सरकारके लिए यह सम्भव न हो, तब तक वह नजदीकके किसानको उस जमीनको पट्टे पर देनेके लिए दे सकती है।

वर्तमान टुकड़ेवाली जमीनोंकी चकबन्दी होनेके उपरान्त

भविष्यमें उनका हस्तांतर या बँटवारा टुकड़ा बनानेके लिए न हो सकेगा। इस प्रकारकी कार्यवाही कानूनके खिलाफ़ होगी और किसान दण्डित होगा।

खेतोंका एकीकरण अर्थात् संघननके प्रयत्न खेतोंको बड़ा बनाने के लिए हैं। इस प्रक्रिया द्वारा खेतोंका नया मूल्य निरधारण होता है और उनका पुनः विभाजन होता है। इस व्यवस्थाका लक्ष्य यह है कि खेतोंके बिखरे हुए टुकड़ोंको एकत्र कर—बड़े खेतोंमें परिणत किया जाए। पैदावारकी दृष्टिसे उपयोगी खेत बनानेके लिए यह योजना है। यह स्मरण रहे कि बुनियादी सिद्धान्त किसीको अपनी जमीनसे वंचित नहीं करनेका है। जहाँ जमीनका विनिमय होता है, वहाँ जमीनके मालिकको उसी कीमत और पैदावारकी जमीन बदले में मिलती है।

आज अनेक किसानोंके पास लाभहीन खेत हैं। पर ऐसे किसानोंको भी जमीनके अधिकारोंसे वंचित नहीं किया जा सकता। इस दिशामें केवल प्रयत्न यह है कि वे जमीनपर अपना अधिकार रखते हुए एक दूसरेसे मिलकर खेती करें। सबसे उपयुक्त उपाय तो सहकारी-प्रणालीके आधारपर स्वेच्छापूर्वक संगठन द्वारा सम्मिलित रूपमें खेती करना है। कानूनकी व्यवस्थाके अन्तर्गत भी खेतोंके मिलाने—संघनन कार्यके लिए उर्वरा शक्ति और उपजके खेत विनिमय किए जाते हैं। इस सम्बन्धमें मुआवजेकी व्यवस्था की गई है कि थोड़े उत्पादनवाले खेतका संबंध अधिक उत्पादनवाले खेतसे किस प्रकार किया जाए। बम्बईके

कानूनमें अधिनियमों द्वारा पूरी व्यवस्था की गई है। खेतोंके एकीकरणसे पहलेके बिखरे खेतोंसे जो आय होती थी, वह प्रत्येक जमीनके मालिकको बादमें भी होती है। किसी भी किसानको कोई क्षति नहीं होती है, बल्कि भविष्यमें सम्मिलित खेतोंमें जो उपज बढ़ती है, उससे उनकी आयमें उत्तरोत्तर वृद्धि होती है।

जमीनका एकीकरण होनेपर पहलेकी काश्तकारियां बदल कर नए संघठित क्षेत्रोंकी होती हैं। इस प्रकार पट्टा, ऋण और दूसरी सम्पत्तिके अधिकार—जो पुराने खेतों पर होते हैं, वे भी बदल कर नए एकीकरणके खेतोंके लिए शुमार किए जाते हैं। जिस किसानके पास ५ एकड़ जमीनके खेत हैं, उसे १० एकड़ मिले, क्योंकि उसे खराब जमीन मिली, किन्तु समष्टि रूपसे उपज समान ही होगी। एकीकरणके बाद यही स्तर रहेगा। इस कार्यमें किसानके हितोंका ध्यान रखा जाता है। किसीकी काश्तकारी रद्द नहीं की जाती है, उसे अधिकारसे हटाया नहीं जाता है और न उसे नुकसान ही पहुँचाया जाता है। सामान्यतः बदलेमें मिलनेवाली जमीनकी किस्म उसीकी ओर आती है। यदि पहलेकी जमीन और नई जमीनके मूल्यमें अन्तर हो तो एकड़में भी इस परिमाणमें परिवर्तन किया जाता है।

संकलन-एकीकरण कार्यके अन्तर्गत ग्रामोंका निर्धारण करता है। इसके बाद संकलन-अधिकारी अधिकारोंका अभिलेख तैयार करता है। ग्राम पंचायतें या ग्राम समितियां सूच

निरधारण और एकीकरणके कार्यमें सहयोग देती हैं। मूल्य निरधारण होनेपर संघनन अधिकारी टुकड़े खेतोंके अस्थायी एकीकरण खेत तैयार करता है, वह इस बातका ध्यान रखता है कि प्रत्येक किसानको समान उपजकी जमीन मिले। ग्रामके पंच और किसान तथा संघनन अधिकारीके परामर्शसे सब निर्णय होते हैं। इसके उपरांत भी जो विरोध होता है, उस पर सरकार विचार करती है। सेटलमेण्ट कमिश्नर योजना को स्थाई रूप देता है। जो किसान नई जमीन मिलने पर मुआवजा देनेमें असमर्थ होता है, उसे सरकार तकावी ऋण देती है। एकत्र खेतोंके एक वार नए खेत बन जानेके बाद, कलक्टरके आदेशके बिना उनके टुकड़े नहीं किए जा सकते, और न उनका हस्तान्तर ही हो सकता है तथा न बँटवारा ही।

छोटी जमीनमें खेतीकी सफल पैदावार

कितनी जमीनमें खेती करनेसे अच्छी पैदावार हो सकती है, यह आजकी गंभीर समस्या है। फिर कितनी एकड़ जमीनमें कितनी लागत लगती है और आय कितनी होती है। यह भी समझना जरूरी है कि यहां सिर्फ २५ एकड़ जमीन में ही लागत और आयका हिसाब लगाया गया है।

कृषिके उद्योगमें आर्थिक सफलता किस प्रकार हो, यह एक बड़ी गहरी समस्या है। अब तक इस देशमें कृषि-उत्पादन अवांछित रूपसे हुआ। पर अब अवस्थाने पलटा खाया और हम यह सोचनेके लिए विवश हुए हैं कि किन उद्योगोंमें किस प्रकार आगे बढ़नेसे सफलता संभव है। इस दृष्टिसे यह प्रकट है कि कृषिमें सफलता प्राप्त करनेके लिए जमीन, मजदूरी और पूंजी आदियोंका ठीक अनुपात होना चाहिए। अन्य धंधोंके समान कृषि उद्योगमें भी जमीन, मौसम, वर्षा और साथ ही किसानकी शिक्षा-दीक्षा तथा कार्य क्षमताके आधार पर भिन्न-भिन्न स्तर पर आय होती है। अतः खेतीकी आय पर इन सब तत्वोंका प्रभाव पड़ता है। एक अनुभवी किसान जमीन और पशुओंको देखकर ही सफलता और असफलताका अनुमान लगा लेता है। वह सोच लेता है कि इस जमीनमें इन बैलोंसे खेती करके उसे कितना लाभ होगा। अच्छी जोती हुई जमीन और बलिष्ठ पशुओंसे उद्योगमें किसान अच्छा उत्पादन बढ़ानेमें समर्थ

(५) सामान— हल जोड़ी—२ (पंजाबकी बनी हुई) १४२ रुपए

मेस्टन हल—३	६० ”
देशी हल—३	३८ ”
कुट्टी काटनेवाली मशीन—१	८० ”
बैलगाड़ी—१	३०० ”
खेतीके अन्य औजार	८० ”
जोड़	७०० रुपए

(६) मकान—पशुओंके लिए सायबान १०
(१०'×५') २॥) की दरसे १२५० रुपए
मजदूरोंके मकान ४
(१२'×१०') २॥) की दरसे १२०० ”
गोदाम २०'×१५'—६) रु० की दरसे १८०० ”
अहाता या तारका घेरा या लकड़ीके
खंभोंका घेरा ५० रु० प्रति एकड़की दरसे २२५० रुपए
किसानका स्थान आदि ३०'×२०'—३ रु० की दरसे १८०० रुपए

कुल आरम्भिक पूंजी का जोड़ ११,२०० रुपए

काम करने की पूंजी

(१) नष्ट होनेवाला सामान—
खुरपी, कुदाली, हंसिया और रेक—क्रमशः १०, फावड़ा ३ (२ हल्का और १ दुहरा) डलियाँ २४, रस्सी १२, बाल्टी (लालटेन ६, छलनी और ढोल ४, बोरे ५० और दूसरी वस्तुएँ
=२५८ रुपए

होता है। खादका उपयोग, अधिक वर्षासे फसलकी रक्षाके लिए खेतोंमें क्यारियोंका नया निर्माण और कीड़ों आदिसे उत्पादन की रक्षाके भी प्रश्न हैं, जिन्हें किसान भूलता नहीं है। पर खेतीके लिए सबसे बड़ी समस्या जमीन और पशुओंकी है। अच्छी खेती करनेके लिए यह आवश्यक है कि हम उन खेतोंको देखें, जहाँ आदर्श-रूपमें खेतीका प्रयोग होता है और उचित साधनों द्वारा खेतीमें सफल परिणाम प्रकट किए जाते हैं। किसानोंको उन खेतोंका व्यावहारिक अनुभव प्राप्त करना चाहिए। यह होने पर ही कृषिकी उपजसे वास्तविक लाभ उठाया जा सकता है।

अतः हमें यह विचार करना है कि, जमीन, मजदूरी पूंजी का किस अनुपातमें समन्वय हो कि, खेती लाभदायक हो। यदि हम २५ एकड़ जमीनके एक ऐसे खेतको लें, जिसे नहरकी सिंचाईकी सुविधा प्राप्त है और पासमें चीनीकी फैक्टरी भी है, तो उस अवस्थामें कितना व्यय पड़ेगा और कितना लाभ होगा :

आरंभिक पूँजी

(१) पशु	(क) बैलोंकी तीन जोड़ी	२४०० रुपए
	(ख) दूध देनेवाले पशु गाय—एक, भैंस—एक	८०० रुपए
		जोड़—३२०० रुपए

बीजमें लागत

फसलकी योजना

एकड़	खरीफ	रबी
१½	छारी जुआर-घास	चना
१½	मक्का घास	—
४	गन्ना	
४	—	गेहूं
२	मूँग	गेहूं
१	मक्का (अनाज)	आलू
२	जुआर "	अरहर
३	धान	मटर
२	मकान और मार्गके अन्तर्गत	
२५ एकड़		८६५ रुपए

(३) खाद—१४० गाड़ी खाद ५ रु० की दरसे और अमोनिया सलफेट १० मन २० रु० प्रति हंडर की दरसे ८४५ रुपए

(४) पशुओंके पालनमें व्यय—

बैलों पर व्यय ७०) मासिक व्यय प्रति बैल जोड़ी पर २५२० रुपए

दूध देनेवाली गाय भैंस ५०) मासिक प्रति पशु पर रुपए

(५) मजदूरों पर व्यय है, जिनकी संख्या ८ है, ४०)
मासिककी दरसे ३८४० रुपए

(६) औजार आदिकी दुरुस्ती आदिमें व्यय ३५ रुपए

(७) मकानोंकी दुरुस्ती आदिमें व्यय १५२ रुपए

(८) सिंचाई-व्यय २२० रुपए

(९) किराया २५० रुपए

खास निर्वाहणके लिए काम करने की कुल पूँजी १०१८७

(१०) घिसाई या कमी

पशुओंमें मौत आदिसे १० प्रतिशतकी दरसे कमी ३२०
सामानमें घिसाई १०% की दरसे ७०
मकानमें घिसाई ४ प्रतिशत की दरसे २४२

६३२ रुपए

(११) ब्याजका शुमार

आर्थिक पूंजी ८ प्रतिशत की दरसे [illegible] रुपए

काम करनेकी पूँजी पर १० प्रतिशतकी दरसे [illegible] रुपए

[illegible] रुपए

कुल काम करनेकी पूँजी [illegible] रुपए

आमद

फसल	पैदावार (मन)	मूल्य (रुपए)
छारी	४५०	३३८
चना	२२५	२६३
और उसका भूसा	२०	२६०
मक्का	३००	३००
बेरसीम	६००	६००
गन्ना	२४००	३१५०
गेहूं और	२००	३२००
भूसा	४००	१६००
मूंग और	१२	२४०
भूसा	१२	३६
मक्का	२०	२००
आलू	१६०	१२८०
जुआर और कड़वी	२०	२००
अरहर और	२०	४००
भूसा	२०	६०
धान—और	७५	७५०
भूसा	२००	१५०
मटर—और	३६	७२०
भूसा	३०	६०
फसलसे आय—		१३८६७ रुपए

में और भी अन्य तरीके हैं, जिनसे काफी बचत की जा सकती है। इसके सिवा जमीनके अधिक उपजाऊ बनाने, एक एकड़में अधिकसे अधिक उत्पादन बढ़ाने और अच्छी सिंचाईकी व्यवस्था करनेसे काफी उत्पादन बढ़ना संभव है और तदनुसार आय भी बढ़ती है। इस योजनामें औजारों आदिकी घिसाई, दुरुस्ती और पशुओंके न रहने या बदलनेके लिए धनकी व्यवस्था रखनेसे किसी वर्षमें भी किसानको अतिरिक्त व्ययकी चिंता नहीं करनी पड़ती है।